डॉ॰ बद्रीप्रसाद पंचोली के नाटकों का आलोचनात्मक अध्ययन

कोटा विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

की पीएच.डी (हिंदी) उपाधि हेतु

प्रस्तुत शोध – प्रबंध

शोध निर्देशिका
डॉ.(श्रीमती) अनीता गुप्ता
प्राध्यापक – हिंदी
सेठ मंगलचंद चौधरी राजकीय महाविद्यालय,
आबूरोड (सिरोही)

शोध छात्र
लालसिंह पुरोहित

हिंदी विभाग
कोटा विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

2015

प्रमाण – पत्र

मैं प्रमाणित करती हूँ कि शोध–छात्र **लालसिंह पुरोहित** ने मेरे निर्देशन में पीएच.डी.(हिंदी) की उपाधि के लिए **'डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली के नाटकों का आलोचनात्मक अध्ययन'** शीर्षक पर शोध कार्य किया है। यह विषय अपने आप में नया और मौलिक है। शोध प्रबंध में उन्होंने कई मौलिक स्थापनाएँ की है और जहाँ आवश्यकता पड़ी है, वहाँ अपने मत की पुष्टि के लिए अन्य सहायक ग्रंथों का उपयोग भी किया है। मेरी जानकारी में प्रस्तुत शोध–प्रबंध का कोई अंश या खंड इससे पूर्व कहीं पर प्रकट नहीं किया गया है।

शोधार्थी लालसिंह पुरोहित ने लगाातार 200 दिन तक मेरे पास रहकर मेरे निर्देशन में शोध कार्य किया है।

शोध निर्देशिका

दिनांक :

डॉ. (श्रीमती) अनीता गुप्ता

अनुक्रमणिका

प्राक्कथन.....पृष्ठ 4 से 7

अध्याय : 1 डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली का व्यक्तित्व एवं कृतित्व .....पृष्ठ 8 से 21

अध्याय : 2 हिंदी नाटक : उद्‌भव और विकास.....पृष्ठ 22 से 46

अध्याय : 3 डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली के नाटक : परिचय.....पृष्ठ 47 से 67

अध्याय : 4 डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली के नाटकों में पात्र योजना एवं संवाद.....पृष्ठ 68 से 123

अध्याय : 5 डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली के नाटकों में रंगमंचीयता.....पृष्ठ 124 से 153

अध्याय : 6 डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली के नाटकों में शिल्प–विधान .....पृष्ठ 154 से 191

अध्याय : 7 उपसंहार.....पृष्ठ 192 से 199

परिशिष्ट :.....पृष्ठ 200 से 220

(क) साक्षात्कार

(ख) प्रतिक्रियाएँ

(ग) छाया चित्र

(घ) आधार ग्रंथ

(ड.) संदर्भ ग्र ंथ सूची

प्राक्कथन

सृष्टि के सभी प्राणियों में मनुष्य परमात्मा का सर्वश्रेष्ठ सृजन है। मानव सभ्यता के विकास में साहित्य का जितना योगदान रहा है, उतना शायद किसी भी तत्त्व का नहीं रहा। हिंदी नाटक साहित्य के क्षेत्र में डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली का महत्त्वपूर्ण स्थान है। स्वातंत्र्योत्तर हिंदी नाटक साहित्य के विशाल पट पर अनेक परिवर्तन और परिवर्धन का दौर चला है। हिंदी नाटकों पर पाश्चात्य शैली के समस्या नाटकों का अंधा प्रभाव परिलक्षित होने लगा। भारतेंदु और प्रसाद की नाट्य शैली को विस्मृत कर नाट्यकर्मी पश्चिमी विचारधारा का अंधानुकरण करने लगे। इस काल के प्रायः सभी नाटककार समस्यामूलक रचनाओं के लेखन में संलग्न थे। रचनाकार भारतीय मर्यादाओं का खुले तौर पर उल्लंघन कर रहे थे। डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली ने आत्मीय संस्कार, मानवीय संयम और लेखकीय सहजता से अपनी रचनाओं को मूर्त रूप दिया।

साहित्य का विषय व्यक्ति एवं समाज है। साहित्यकार समाज के प्रति उत्तरदायी होता है, तो दूसरी और उसकी निजी अनुभूति भी साहित्य में सम्मिलित होती है। साहित्यकार की विचारधारा उसके व्यक्तित्व के अनुरूप होती है। वर्तमान युग में पद्य की तुलना में गद्य की लोकप्रियता ज्यादा है और गद्य में नाटक का स्थान सर्वोपरी रहा है। साहित्यकारों ने समाज में व्याप्त सामाजिक समस्याओं जैसे – टूटते परिवार, व्यक्ति और समाज का दायित्व, राजनीति के बदलते मूल्य, भ्रष्टाचार, शिक्षा में अनैतिकता, दहेज, शोषण आदि विषयों को नाटकों में निरूपित किया और आधुनिक बोध के नये स्तरों और आयामों को समाज के सामने उद्‌घाटित किया।

डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली की नाट्य रचनाएँ अतीत के गौरवशाली संदर्भों को वर्तमान से जोड़कर समाज को नए मानव मूल्यों एवं राष्ट्रीय संवेदनाओं से संपन्न कर रही है। इनका नाट्य साहित्य भारतीय परिप्रेक्ष्य का शुद्ध और सात्विक स्वरूप है। श्री पंचोली के नाटक अपनी सहजता, सरलता और सुबोधता के कारण हिंदी नाट्य जगत में स्थान प्राप्त कर चुके हैं।

हिंदी नाट्य साहित्य में इनका योगदान निर्विवाद का है। डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली के दस पूर्णांक नाटकों पर किए गए प्रस्तुत शोध के अध्ययन और विश्लेषण के दौरान मुझे भी उनके कई योगदानों का प्रत्यक्ष अनुभव हुआ है। हिंदी नाट्य साहित्य में इनका योगदान स्थायी और स्मरणीय रहेगा।

डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली ने साहित्य और रंगमंच दोनों मापदण्डों पर सही उतरने वाले नाटकों का सृजन किया है। डॉ.पंचोली ने नाटकों में भारतीय समाज का अपनी विशेषताओं के साथ निरूपण किया है। उनके नाटकों में रंगमंचीयता का भी चित्रण हुआ है।

प्रस्तुत शोध प्रबंध डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली के नाटकीय योगदानों को विश्लेषित करने की दिशा में एक विनम्र प्रयास मात्र है। इस अध्ययन का विषय है– **'डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली के नाटकों का आलोचनात्मक अध्ययन'**। इस शोध प्रबंध में उपसंहार सहित सात अध्याय हैं।

प्रथम अध्याय ' **डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली का व्यक्तित्व व कृतित्व'**। डॉ. पंचोली के जीवन वृत्त तथा लेखकीय अस्मिता के विकास को समझने में यह अध्याय अवश्य उपयोगी होगा। इसमें नाटककार के जन्म तथा बचपन, माता–पिता, शिक्षा–दीक्षा, नौकरी, विवाह, अभिरुचि, वेशभूषा, विचारधारा आदि के साथ उनके साहित्यकार के विविध रूपों का भी परिचय दिया गया है। इसके अंतर्गत डॉ. पंचोली के नाटककार, कहानीकार, एकांकीकार, जीवनीकार, कवि, निबंधकार और संस्मरण लेखक जैसे व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है। इस अध्याय में यह बात स्पष्ट हो उठी है कि उनका व्यक्तित्व ही अपनी संपूर्ण रचनाओं में अभिव्यक्त हुआ है।

द्वितीय अध्याय **'हिंदी नाटक : उद्‌भव और विकास'।** इस अध्याय के अंतर्गत हिंदी नाटक साहित्य के उद्‌भव और विकास की रूपरेखा प्रस्तुत की गई है। इसमें प्राचीन नाट्य साहित्य के परिचय से लेकर आधुनिक हिंदी नाटक की विकास यात्रा को विस्तृत रूप से प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। आधुनिक काल में भारतेंदु से लेकर डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली के नाटक तक की विकास यात्रा प्रस्तुत की गई है।

तृतीय अध्याय **'डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली के नाटक : परिचय'** है। इस अध्याय में डॉ. पंचोली के नाटकों का कथ्य एवं शिल्प के आधार पर अत्यधिक वैविध्यपूर्ण अध्याय विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। उनके नाटकों में समसामयिकता, ऐतिहासिक, सामाजिकता, धार्मिकता को बड़ी तीव्रता से उभारा गया है। इसका गहन रीति से अध्ययन एवं विश्लेषण इस शोध–प्रबंध में प्रस्तुत किया गया है।

चतुर्थ अध्याय **'डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली के नाटकों में पात्र योजना एवं संवाद'** है। इस अध्याय में पात्र योजना का महत्त्व, नाटकों के प्रमुख पात्रों का चरित्र–चित्रण, नाटकों में गौण पात्रों का निरूपण, कथावस्तु को गतिप्रदान करने वाले संवाद, चरित्र को उद्‌घाटित करने वाले संवाद, उद्‌देश्योन्मुख संवाद आदि विषयों के आधार पर इस अध्याय में नाटकों का विश्लेषण किया गया है।

पंचम अध्याय **'डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली के नाटकों में रंगमंचीयता'** है। इस अध्याय में रंगमंच का अर्थ, पाश्चात्य व भारतीय रंगमंच का परिचय व हिंदी नाटक के रंगमंच को विस्तार से स्पष्ट किया गया है। डॉ. पंचोली के नाटकों में रंगमंचीयता को भी विस्तृत रूप से स्पष्ट किया गया है। मंच सज्जा में भरतमुनि से लेकर डॉ. पंचोली तक के परिवर्तन को वर्णित किया गया है।

षष्ठ अध्याय **'डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली के नाटकों में शिल्प–विधान'** है। इस अध्याय में डॉ. पंचोली के नाटकों के शिल्प–विधान को अनेक बिंदुओं से स्पष्ट किया गया है। नाटकों में मुहावरों का प्रयोग, बोलचाल के शब्दों का प्रयोग, लोकोक्तियों का प्रयोग, रस, व्यंग्यात्मक शैली आदि विषयों के आधार पर प्रत्येक नाटक का शिल्प प्रस्तुत किया गया है।

सप्तम अध्याय **'उपसंहार'** है। उपसंहार में समग्र अध्ययन का निचोड़ एवं मूल्यांकन प्रस्तुत किया गया है।

परिशिष्ठ में साहित्यिक प्रतिक्रियाएँ और श्री पंचोली जी का साक्षात्कार है। परिशिष्ठ में ही आधार ग्रंथों तथा संदर्भ ग्रंथों की सूची वर्णानुक्रम से प्रस्तुत है, साथ ही संदर्भ कोश, पत्रिकाओं को भी वर्णित किया गया है।

अनुसंधान जैसा जटिल और दुरूह कार्य किसी एक व्यक्ति के बूते का नहीं है। यह अनेक व्यक्तियों के सामूहिक परिश्रम तथा प्रयत्नों से ही रूपाकार ग्रहण करता है। मुझे भी अपने इस शोध–कार्य में अनेक विद्वतजनों का सहयोग मिला। इनके सहयोग स्नेह एवं कुशल मार्गदर्शन के बिना शायद यह कार्य इतनी सुगमता से संपन्न नहीं हो पाता।

प्रस्तुत शोध–प्रबंध आदरणीया डॉ. अनीता गुप्ता के कुशल एवं आत्मीय निर्देशन में तैयार किया गया है। उनके स्नेहपूर्ण, सौहार्दपूर्ण व्यवहार के द्वारा ही यह शोध कार्य पूर्ण हो सका है। अति व्यस्त जीवन से भी समय निकालकर उन्होंने विषय चयन से लेकर शोध–प्रबंध की पूर्णता तक जिस सरलता, सहृदयता और आत्मीयता का परिचय दिया है, उसके लिए मैं सदा उनका ऋणी रहूँगा। उन्होने शोध–प्रबंध की एक–एक पंक्ति पढ़कर संशोधन एवं परिमार्जन के निर्देश दिए। मैं अपनी परम श्रद्धेय आचार्या के प्रति आभार प्रकट करता हूँ।

मैं अपने मित्र अशोक कुमार बगावत और अखिलेश कुमार शर्मा का आभारी हूँ, जिन्होने शुरू से अंत तक समय–समय पर मेरी शोध–यात्रा को आगे बढ़ाने में पूर्ण सहयोग दिया।

मेरे शोध कार्य के लिए आवश्यक जानकारी एवं साक्षात्कार देकर श्री बद्रीप्रसाद पंचोली जी ने मुझे कृतार्थ किया। उनके प्रति मैं आभार प्रकट करता हूँ। उनके पारिवारिक सदस्यों के प्रेममय व्यवहार के प्रति भी मैं आभारी हूँ।

इस अवसर पर मैं अपने माता–पिता के चरणों में वंदन करता हूँ। मेरे इस शोध–कार्य में मेरी सहधर्मचारिणी मनू कंवर, पुत्री कनुप्रिया एवं पलक ने सदैव मेरे मनोबल को मजबूत किया और प्रत्येक क्षण मेरा साथ दिया। मैं इनके प्रति भी स्नेह भाव प्रकट करता हूँ।

अंत में मैं उन सभी स्नेहीजनों, सहृदयी, शुभचिंतको और सभी आत्मीय परिवारजनों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ जिन्होने प्रत्यक्ष–परोक्ष रूप से मुझे सहायता प्रदान की है।

लालसिंह पुरोहित

अध्याय – 1

डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

अध्याय – 1 डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

प्रस्तावनाः–

किसी भी साहित्यकार को समग्र रूप से समझने के लिए उसके जीवन और व्यक्तित्व को समझना निश्चय ही सहायक सिद्ध होता है। साहित्यकार का संपूर्ण जीवन उसकी साहित्यिक कृतियों में बिखरा हुआ होता है। किसी भी साहित्यकार पर तत्कालीन परिस्थितियों का प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता। वास्तविकता तो यह है कि कलाकार की कृति में उसका जीवनानुभव ही प्रतिबिम्बित होता है। इसलिए किसी साहित्यकार के साहित्य की पहचान उसके जीवन को समझने से सुलभ हो सकती है। लेखक का व्यक्तित्व उसके साहित्य में झलकता है और व्यक्तित्व का निर्माण उसके पारिवारिक, सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक परिवेश में ही होता है। इसलिए बहुमुखी प्रतिभा के धनी पंचोली जी के साहित्य को समझने के लिए उनके जीवन और व्यक्तित्व को समझना आवश्यक है।

पंचोली जी की रचनाओं में स्वजाति गौरव, आत्म–सम्मान, देश–प्रेम तथा जीवन के शाश्वत मूल्यों को प्रतिष्ठित करने का प्रयास मिलता है। उनका जीवन दर्शन संकुचित नहीं, बहुत विशाल है। उनके जीवन दर्शन में निराशा या भय का कोई स्थान नहीं है। उन्होंने पौराणिक तथा ऐतिहासिक कथा पात्रों की सृष्टि की है। यहाँ उनकी उर्वरक सर्जनात्मक कल्पना साफ–साफ दिखाई पड़ती है। वैष्णव संस्कारों तथा वेद, रामायण, गीता के अमर तत्त्वों का मोह उनके मन में है। प्राचीन ऋषियों की भांति वे अखिल मानव–मात्र के कल्याण की कामना करते रहते हैं।

भारतीय आत्मा का स्वर उनकी कविताओं में मुखरित है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि पंचोली जी ने हिंदी साहित्य की सब विधाओं में रचना कर हिंदी की महान सेवा की है। उनका व्यक्तित्व उज्ज्वल और कृतित्व विशाल है। एक युग सृष्टा और युग दृष्टा कवि और साहित्यकार के रूप में पंचोली जी का अध्ययन हिंदी भाषा और साहित्य की श्री वृद्धि में प्रेरणादायक रहेगा। प्रारंभ में पंचोली जी

ने 'विमल वात्सयायन' के नाम से रचनाएँ लिखी। राजकीय सेवा में आने के बाद अपने वास्तविक नाम से रचनाएँ लिखना शुरू किया।

<u>व्यक्तित्व</u> :–

साहित्यकार के साहित्य का अलोचनात्मक अध्ययन करने के लिए उसके जीवन वृत्त और व्यक्तित्व का अध्ययन परम आवश्यक है। जीवन की समग्रता को झलका देने वाले उस तत्त्व से है, जिसकी परिधि में मनुष्य के संपूर्ण जीवन की संचित निधि निहित है। वास्तव में मनुष्य की सबसे बड़ी पहेली उसका अपना व्यक्तित्व है। किसी मनुष्य का व्यक्तित्व एक अनुपम उलझनमय रचना विधा है जो बड़ी सतर्कता से लक्ष्य मनोभावों के आचार विचारों द्वारा एक ऐसे आदर्श में पिरोया गया है जो अपनी अनिश्चितता अथवा अस्थिरता के बावजूद भी बाह्य जगत् के आकर्षणों और विकर्षणों में संतुलन स्थापित करता है।

गौर वर्ण, उन्नत ललाट, अत्यंत सौम्य आकृति वाले, न चश्में की जरूरत न किसी सहारे की। पंचोली जी के व्यक्तित्व में गांभीर्य के साथ ही शिशुओं जैसी सरलता है, जिसमें छल, कपट, कृत्रिमता, दम्भ का कोई स्थान है ही नहीं। वे एक मानवतावादी, आशावादी और आस्थावान व्यक्ति है। परिश्रमी इतने की प्रतिदिन चार–छह घंटे अध्ययन लेखन करते हैं। मिलनसार इतने की आने वाले व्यक्ति को कभी यह नहीं महसूस होने देते कि उनके पास समय नहीं है। प्रिय मित्रों और शिष्यों से ये कई घंटे तक बातें किया करते हैं। संस्मरण का तो इनके पास खजाना है। पंचोली जी के व्यक्तित्व में हिमालय जैसी उच्चता, सागर जैसी गंभीरता, धरा जैसा धैर्य, जाह्नवी जैसा वेग और सुमन जैसी सुकुमारता है। उनकी वाणी में माधुर्य छलकता है।

अत्यंत गंभीर विचारक, महान रचनाकार, महाविद्यालय के विभागाध्यक्ष और प्रतिष्ठा सम्पन्न होते हुए भी वे एकदम अकृत्रिम और सहज ढंग से जीवन बिताते हैं। उनकी आस्था, परदुःखकातरता, गंभीरता, सरलता उनके व्यक्तित्व को गरिमामय बना देती है।

1.1 जन्म :–

हिन्दी साहित्य को निरन्तर अपनी रचनाओं से समृद्धतर बनाने में प्रयासरत पंचोली जी का शुभ जन्म श्रावण पक्ष की शुक्ल चतुर्थी को संवत् 1992 (13 जुलाई, 1935ई.) को खानपुर, जिला– झालावाड़, राजस्थान में हआ। आपके पिताजी का नाम श्री राधाकृष्ण पंचोली और माताजी का नाम श्रीमती रामनाथी देवी था। आपके पिताजी पुलिस विभाग में काम करते थे। जो आदर्शवादी, कर्तव्यपरायण उच्च चरित्र और उदार विचारों वाले सत्यनिष्ठ एवं गंभीर स्वभाव के व्यक्ति थे। आपकी माता सरल एवं धार्मिक प्रवृति की थी। वात्सल्य और ममता से सिंचित एवं पिता के उदार गुणों से पोषित पंचोली जी के जीवन वल्लरी का रूचिपूर्ण विकास हुआ। आपके परिवार में आदर्शवादी संस्कारों का वातावरण रहा। आपका जीवन आरम्भिक उनमेष, मर्यादित वातावरण से प्रभावित रहा।

1.2 शिक्षा–दीक्षा :–

आपने प्रारम्भिक शिक्षा सुखद माहौल में प्राप्त की। 1954 ई. में आपने बारां के हाई स्कूल से दसवीं कक्षा उत्तीर्ण की। आपने कोटा के राजकीय महाविद्यालय से बेचलर ऑफ आर्टस की उपाधि ली। यहीं से संस्कृत में प्रथम श्रेणी से एम.ए. किया। तत्पश्चात 1960 में आपने हिंदी में प्रथम श्रेणी से एम.ए.किया। आपने कोटा के राजकीय महाविद्यालय में व्याख्याता के रूप में पदभार ग्रहण किया। अपने ज्ञान के विस्तार को आगे बढ़ाने हेतु आपने 'ऋग्वेद में गोतत्त्व' विषय पर 1964 में राजस्थान विश्वविद्यालय जो कि उस समय 'राजपूताना विश्वविद्यालय' के नाम से जाना जाता था, से डॉ. सुधीर कुमार बंसल के निर्देशन में पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की।

1.3 पारिवारिक जीवन :–

पंचोली जी का विवाह अल्पायु में 1952 में जब यह दसवीं कक्षा में पढ़ते थे तभी श्रीमतीकमलादेवी के साथ सम्पन्न हो गया। इनके पांच लड़कियां और एक लड़का है। घर और पढ़ाई का खर्च बढ़ता गया। ऐसी परिस्थितियों में इनकी धर्मपत्नी ने इनका पूरा–पूरा साथ दिया। पंचोली जी ने हर परिस्थिति को देखा

भोगा और अनुभव किया। इनका विश्वास है कि थोड़ा है तो थोड़े में ही जीना है। इनके सभी बच्चे शिक्षित और परिश्रमी है, सभी इनके ही नक्शे कदम पर चलने का प्रयास कर रहे हैं। अपने जीवन के विषय में इनकी अपनी दृष्टि है।

1.4 लेखन की प्रेरणा :–

विद्यालय में छात्र सभा होती थी उसमें अध्यापक सबको बोलने एवं लिखने के लिए प्रेरित करते थे। इससे पहले ये लिखते थे पर बोलते नहीं थे। एम.ए. में आने के बाद इन्होने मंच पर बोलना प्रारम्भ किया। सन् 1953 में इन्होने लिखना प्रारम्भ किया। इन्होने सर्वप्रथम विद्यालय में 'बसंत' नामक कविता लिखी। निरंतर अभ्यास से एक सुनिश्चित दिशा की निर्माण प्रक्रिया आरंभ से ही रूप ग्रहण करने लगी थी। पंचोली जी ने नाटक में दक्षता हासिल की है। इनके नाटकों को बड़े ही रुचिपूर्ण ढंग से खेला जाता है। इनके नाटक 'ध्रुवश्री' को सौ से भी अधिक बार खेला जा चुका है। 'ध्रुवश्री' और 'नींव के स्वर' नाटक माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान के पाठ्यक्रम में भी पढ़ाये गये।

1.5 आशावादी व्यक्तित्व :–

डॉ. पंचोली सर्वदा आशावादी है। विषम–से–विषम परिस्थितियों में निराशा के कुहासे को आशावादी सूर्य की प्रखर किरणों से नष्ट किया है। वे स्वयं तो आशावादी है ही साथ ही अपने मित्रों, शिष्यों और शुभचिंतकों को भी आशावादी बनने की प्रेरणा देते रहते हैं।

1.6 परिश्रमी व्यक्तित्व :–

डॉ. पंचोली को अपने जीवन में, साहित्य–क्षेत्र में जो इतना मान–सम्मान, पुरस्कार, अलंकरण, यश, ख्याति और कीर्ति प्राप्त हुई, उसका कारण है इनका परिश्रमशील व्यक्तित्व। जब ये महाविद्यालय में अध्यापन करवाते थे तब अध्यापन के साथ विभिन्न समितियों के कार्य भी संपादित करते थे। वर्तमान में विभिन्न संस्थाओं से सक्रिय रूप से जुड़े हुए हैं। शोध छात्रों का निर्देशन कर रहे हैं और नव लेखकों–कवियों को प्रोत्साहित कर रहे हैं।

1.7 स्वभाव :–

डॉ. पंचोली गंभीर स्वभाव के अत्यंत मृदुभाषी व्यक्ति हैं। इनके द्वार पर न तो यह लिखा है – मिलने का समय .....बजे से .....बजे तक और न ही इनका कोई स्वजन यह कह कर टालता है कि 'ये अभी सो रहे हैं, विश्राम कर रहे हैं अथवा लेखन कार्य में व्यस्त है।' इनसे जो भी मिलने आता है, उसे वे यथेष्ट समय देते हैं। अपना कार्य बंद कर ये आगंतुक की जिज्ञासा का समाधान करते है। व्यर्थ की गपशप करने का न तो इनका स्वभाव है और न ही ये इसे पसंद ही करते है। साहित्यिक चर्चाएँ तो ये घंटों करते रहते है। ये सर्वदा सहज और सरल रहने में ही सुख का अनुभव करते रहते हैं।

1.8 कुशल वक्ता :–

डॉ. पंचोली एक कुशल वक्ता भी है। भाषण देते समय वे विषय के साथ एक रूप हो जाते है। श्रोता उनके भाषण को एकाग्रचित होकर सुनते है।

1.9 साहित्यिक जीवन :–

साहित्य समाज का दर्पण होता है और जनता की चित्तप्रवृत्तियों का संचित प्रतिबिंब भी। यानि एक सर्जक साहित्यकार अपने जीवन के आसपास जिन स्थितियों परिस्थितियों को देखता–भोगता है, अवलोकन–अनुभव करता है, उन्हें ही अपने साहित्य संसार में चित्रित करता है। डॉ. पंचोली विद्यार्थी जीवन से ही साहित्य की और आकृष्ट हो गये थे। इनकी अत्यधिक संवेदनशीलता इन्हें साहित्यिक सांस्कृतिक कार्यक्रमों – गतिविधियों की और खींचने लगी। इससे इनकी साहित्य के अध्ययन–अध्यापन की रुचि तो विकसित हुई ही, साथ ही साथ इनका सर्जनात्मक लेखन भी पाँव पसारता चला गया। पंचोली जी कहते है कि उनके जीवन के दो संकल्प है, पहला रोज एक पृष्ठ लिखूंगा और दूसरा हमेशा दो नए लोगों से नमस्ते करूँगा। उनके

इन्हीं दो संकल्पों के कारण आज संपूर्ण भारतवर्ष में हर पुस्तकालय में उनकी पुस्तक और हर शहर ही नहीं देहात स्तर तक उनके परिचितों, मित्रों की उपस्थिति नजर आती है।

1.5 पदस्थापन और सम्मान :–

पंचोली जी का आरम्भ से लेकर सेवानिवृत्ति तक का अध्यापन काल देखे तो अब तक इन्होने निम्नलिखित महाविद्यालयों में अध्यापन कार्य किया है।

1. विट्ठलनाथ पाठशाला महाविद्यालय,
2. राजकीय महाविद्यालय श्रीगंगानगर,
3 राजकीय महाविद्यालय किशनगढ़,
4. राजकीय महाविद्यालय अजमेर इसी दौरान कुछ समय के लिए ये
5. ब्यावर भी गये।

–: सम्मान :–

भारतेंदु समिति, कोटा द्वारा सम्मान	–	सार्वजनिक सम्मान
राजस्थान साहित्य अकादमी	–	देवराज उपाध्याय पुरस्कार
हिंदी साहित्य संसद चूरू	–	स्व.मधीबाई चौपड़ा साहित्य सेवा पदक
अखिल भारतीय ज्योतिष सम्मेलन	–	पुष्कर
वेद भाष्यकार सम्मेलन	–	नाथद्वारा
क्षेत्रीय साहित्यकार सम्मेलन	–	झालावाड़
राष्ट्रीय वेद संगोष्ठी	–	नई दिल्ली
राष्ट्रीय संस्कृत संगोष्ठी	–	महापुरा, जयपुर।
राजस्थान सरकार सम्मान	–	संस्कृत सेवा प्रचार हेतु।

राजस्थान साहित्य अकादमी – विशिष्ट साहित्यकार सम्मान।

भारतीय समिति , कोटा – 'साहित्य मनीषी' उपाधि।

भाषा संस्थान, देहरादून – राजभाषा रत्न सम्मान।

राज्य स्तर एवं राष्ट्रीय स्तर पर शताधिक सम्मान।

संस्थागत सम्बन्ध –

शोध एवं शिक्षण कार्य

राजकीय महाविद्यालय, अजमेर, विभागाध्यक्ष 25 वर्ष

राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर – शोध निर्देशक

महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर – शोध निर्देशक

कोटा विश्वविद्यालय, कोटा – शोध निर्देशक

महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय – निर्देशक भारत विद्या अध्ययन संकुल

अटल बिहारी वाजपेयी हिन्दी विश्व विद्यालय – सदस्य, पाठयक्रम समिति

साहित्यिक–सांस्कृतिक

राजस्थान हिन्दी परिषद् (पूर्व मंत्री)

राजस्थान संस्कृत परिषद् (पूर्व मंत्री)

राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर (पूर्व उपाध्यक्ष)

राजस्थानी साहित्य संस्कृति अकादमी, बीकानेर (सदस्य)

अखिल भारतीय साहित्य परिषद, पूर्व अध्यक्ष चित्तौड प्रान्त

अखिल भारतीय साहित्य परिषद, पूर्व राष्ट्रीय उपाध्यक्ष

केन्द्र भारती पत्रिका विवेकानंद केन्द्र – उपसंपादक

वेद संस्थान, नई दिल्ली– संपादक वेद सविताः 20 वर्ष

राजस्थान साहित्य अकादमी, सदस्य सरस्वती सभा

राजस्थान ब्रजभाषा अकादमी, सदस्य कार्यक्रम समिति

राजस्थान संस्कृत अकादमी, जयपुर –पूर्व सदस्य, कार्य समिति

सामाजिक –सांस्कृतिक

विवेकानन्द केन्द्र कन्याकुमारी, संचालक –राजस्थान

राजस्थान प्रौढ शिक्षण समिति, निदेशक–राज्य संदर्भ केन्द्र

अजमेर प्रौढ शिक्षण समिति, पूर्व उपाध्यक्ष

कार्य – अध्यापन –

34 वर्ष राजकीय सेवा कॉलेज शिक्षा में, प्रवक्ता, विभागाध्यक्ष, प्राचार्य

शोध – शोधनिदेशक, शोध परीक्षक, विभिन्न विश्वविद्यालयों में

–: कृतित्व :–

डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली जी का व्यक्तित्व जितना बहुआयामी, सहज, सरल और शांत है, कृतित्व उतना ही व्यापक और विशाल। उनका एक पृष्ठ रोज लिखने का नियम है जो 1953 से आज तक अनवरत रूप से चला आ रहा है। सबसे खास बात उनके लेखन की जो उन्हें एक साहित्यिक पुरुष घोषित करती है, वह है उनका अव्यवसायिक लेखन क्रम। वेद आधारित जीवन दृष्टि को लेकर चलने वाले पंचोली जी हिंदी की गद्य और पद्य दोनों विधाओं में अपनी कलम चलाने के लिए सिद्धहस्त है, परंतु उन्हें ख्याति मिली है अपने सांस्कृतिक चेतना सम्पन्न नाटकों, वेद–लोक चेतना से संपृक्त निबंधों और शब्द चिंतन के मौलिक लेखन से।

डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली के कवि हृदय ने 'चितवन की सीमाएँ', 'नई किरण के गीत', एवं 'धनुर्युग' जैसी उत्कृष्ट रचनाएँ दी है। इनके नाटककार हृदय से 'ध्रुवश्री', 'उत्सर्ग', 'नींव के स्वर', और 'सुनहरे सपनों के अंकुर', जैसे सुंदर मंचोपयुक्त नाटक हिंदी संसार को प्राप्त हुए हैं। इनके एकांकीकार मन ने 'धर्ममाता', धूलिवंदना' तथा 'बंदे एक राम के' जैसे बहुप्रशंसित एकांकी संग्रह रचकर हिंदी एकांकी को गौरवान्वित किया है। इनके नाटकों में शारदीय ज्योत्स्ना की आनंदप्रदायिनी शीतल अमृत वर्षा है।

1.6 नाटककार :–

पंचोली जी ने हिंदी नाटक को एक नई दिशा प्रदान की है। कथानक हो या भाषा शैली, पात्र संयोजन हो या प्रस्तुतीकरण इन्होंने हिंदी नाटकों की विधा से सर्जना के नये आयाम खोजे हैं। इनके नाटक हिंदी नाटय लेखन को एक नई संवेदना एवं नवीन युग बोध से परिचय कराते हैं। इन्होंने अब तक हिंदी साहित्य जगत में बीस से भी अधिक नाटकों की रचना की है। इन नाटकों के द्वारा ही इन्होने नाट्य जगत को नये आयाम प्रदान किये। इनकी विकसित नाटय चेतना और मंच चेतना के समवेत स्वर ने नाट्य बिंब को उभार कर हिंदी नाटक में युगान्तर उपस्थित किया। इनके नाटकों में ऐतिहासिकता के साथ–साथ आधुनिक युग बोध का चित्रांकन भी हुआ है।

इनके प्रमुख नाटक – ध्रुवश्री, नींव के स्वर, सूत्रधार, अमृत धूले हाथ, सुनहरे सपनों के अंकुर, लहर–लहर मधुपर्क, नींव के स्वर, पाणी पैली पाल (राजस्थानी) आदि।

1.7 कहानीकार :–

पंचोली जी के अभी तक दो कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। जिस तरह नाट्य लेखन में इनकी रुचि रही वैसे ही इन्होने कथा साहित्य को महत्त्व दिया है। कहीं पर इन्होंने प्रतीक कथाएँ भी लिखी है। इनका मानना है कि कथा घटना परक है या प्रतीकात्मक वह उद्देश्यपूर्ण होनी चाहिए। स्वयं के शब्दों में ''प्रेमचन्द जी ने कहा है कि घटना कहानी है। ऐसा ही उद्देश्य मैंने कहानियों में रखा

है।'' इनकी कहानियाँ राष्ट्रप्रेम और भारतीय संस्कृति पर आधारित हैं। इनके कहानी संग्रह निम्न हैं–

1– सागर चुप हो गया – 1986

2– मनु का संकल्प – 1986

एक लघुकथा संग्रह प्रकाशनाधीन है।

1.8 एकांकीकार :–

नाटक के क्षेत्र में नयी विचारधारा को प्रस्तुत करने वाले पंचोली जी एकांकियों के क्षेत्र में भी सफल है। इनके एकांकी संग्रह रोज–मर्रा के जीवन से संबंधित है। हमारे आसपास घटित होने वाली छोटी–बड़ी घटनाओं से हैं। इनके अभी तक चार एकांकी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। उनमें एक नया बोध है, एक नई विचारणा है और आधुनिक परिवेश के कतिपय विशेष संदर्भों का खुला वर्णन है। इनके एकांकी संकलन निम्न है–

1– उद्घाटन एक यात्रा का – 1975

2– बंदे एक राम के – 1996

3– धर्ममाता – 2000

4– धूलि वंदना – 2000

विविध पत्रिकाओं में सौ से अधिक एकांकी प्रकाशित।

1.9 जीवनीकार :–

इन्होंने वैज्ञानिक क्षेत्र एवं शैक्षणिक क्षेत्र व साधारण जीवन को लेकर जीवनी साहित्य लिखा है। 'बाल चरित्र कोश' में इन्होंने लता मंगेशकर व चाणक्य आदि पर लिखा है। इनके जीवनी साहित्य निम्न प्रकार है–

1– जीवन ज्योति – 1968

2– बाल चरित्र कोश – 1973

3– भारत के निर्माता – 1975

1.10 <u>कविता संग्रह</u> :–

इनके अभी तक पाँच कविता संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। वे निम्नलिखित है–

1– धनुर्युग – खंड काव्य

2– विधृता – खंड काव्य

3– नई किरण के गीत

4– चितवन की सीमाएँ

5– इतिहास का आत्म निवेदन

1.11 <u>निबंध संग्रह</u> :–

हिंदी साहित्य में पंचोली जी का आगमन एक नया दर्शन लेकर आया है। जितने बड़े नाटककार है, कहानीकार है, एकांकीकार हैं उतने ही बड़े निबंधकार भी है। इन्होंने निबंधों में राष्ट्रभावना, साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं कुछ यात्रा परक निबंध व समीक्षात्मक निबंध भी लिखे हैं। 'उठो जागो' इनका पहला निबंध संग्रह है। इनके निबंध संग्रह निम्न प्रकार है–

1. उठो जागो – 1958

2. ऋग्वेद में गोतत्त्व – 1964

3. महात्मा गांधी दृष्टा ओर दर्शन – 1969

4. अथातो राष्ट्र धर्म जिज्ञासा – 1985

5. अनुचिंतन – 1986

6.	वेदानुचिंतन	–	1986
7.	भारतीय लोक दर्शन	–	1991
8.	जीवन शतपथ	–	1999
9.	आस्था के आयाम	–	2000
10.	जीवन सुरभि	–	2000
11.	वेद जीवन : सृष्टि एवं जीवन दृष्टि	–	2000
12.	वेद ने क्या दिया ?	–	2013

भाषा वैज्ञानिक निबंध

1.	शब्दानुचिंतन	–	1993
2.	शब्दानुशीलन	–	1996
3.	शब्दानुसंधान	–	1997
4.	शब्दार्थसंधान	–	1998

विविध पत्रिकाओं में इनके 600 से अधिक निबंध प्रकाशित।

1.12 संस्मरण :–

इनके द्वारा लिखे गये संस्मरण राजस्थान भाषा अकादमी के संकलन में प्रकाशित हुए है। इनके संस्मरण निम्न है–

1.	यादों के वातायन	–	स्वामी सुरजनदास जी
2.	एक शिव संकल्प	–	डॉ.विश्वनाथ शुक्ल
3.	जीवन साहित्य और विचार	–	महोपाध्याय विनय सागर
4.	अभिनंदन संग्रह	–	डॉ.फतेहसिंह अभिनंदन ग्रंथ

5. शिक्षा के आयाम — लक्ष्मीलाल जोशी अभिनंदन ग्रंथ

6. स्वामी विद्यानंद — विदेह स्मृति ग्रंथ

विविध

1. श्रुति – संदीपनी — वेदमंत्रों का जीवनोपयोगी अर्थ चिंतन – 1999

2. श्रुति–मंगला — वेद आधारित जीवन दृष्टि निबंध संग्रह – 2006

3. शब्द–लोक — शब्दों के मूल अर्थों का विवेचनात्मक अध्ययन–2011

4. भाषा और उसके संस्कारों की समस्या — 2011

1.13 संपादन –

1. स्वदेश (साप्ताहिक) – कोटा ।

2. वेद संविता (1970 से लगभग 20 वर्षो तक) – वेद संस्थान, नई दिल्ली।

3. केंद्र भारती पत्रिका के उपसंपादक।

4. ब्रज विलास

5. शिक्षा के आयाम

6. काव्यार्चन (अजमेर क्षेत्र के 250 से अधिक रचनाकारों का संग्रह)

न्याय, दैनिक भास्कर, गुजरात वैभव (अहमदाबाद), विराट वैभव (दिल्ली)
समाचार पत्रों में संपादकीय कॉलम व कई स्मारिकाओं का संपादन।

कोश संपादन

शैक्षिक शब्दावली का पारिभाषिक कोश।

मानव मूल्यपरक शब्दावली कोश – पांच भाग।

अनेक पत्रिकाओं के विशेषांक अतिथि संपादक।

अध्याय – 2

हिंदी नाटक : उद्‌भव और विकास

अध्याय–2 हिंदी नाटक : उद्‌भव और विकास

2.1 हिंदी में नाटक साहित्य

2.2 पूर्व भारतेन्दु युग

2.3 भारतेन्दु युग

2.4 प्रसाद युग

2.5 प्रसादोत्तर युग

'काव्येषु नाटकं रम्यं' की उक्ति नाटक को संपूर्ण वाङ्‌मय में सर्वश्रेष्ठ प्रमाणित करती है। नाटक, साहित्य की अन्य समस्त विधाओं का पूर्वज रहा है। नाटक अपने उद्‌भव काल से ही मनोरंजन का श्रेष्ठ साधन रहा है। अन्य समस्त विधाओं की तुलना में नाटक की लोकप्रियता सर्वविदित है। इसकी लोकप्रियता का कारण यह है कि यह साहित्य की एक ऐसी विधा है जिसमें अभिनय, नृत्य, संगीत, चित्र, भवन, मूर्ति एवं आभूषण कला, भाषण, संवाद आदि रूप में विविध कलाओं व कौशलों का अद्‌भुत संगम रहता है। नाटक में पात्रों की प्रत्यक्ष एवं सजीव मुद्राएँ, आंगिक चेष्टाएँ, विविध भाव–भंगिमाएँ अत्यंत मनोहारी, आकर्षक एवं इतनी मंत्रमुग्धकारी होती हैं कि दर्शक उसमें तल्लीन हो जाता है।

भरतमुनि के मतानुसार नाटक मानव जीवन की लोकवृत्ति का अनुकरण है। मनुष्य के जीवन की सुखात्मक एवं दुखात्मक और काल्पनिक कथा का कलात्मक अनुकरण नाटक में प्रस्तुत किया जाता है।

नाटक शब्द की व्युत्पत्ति नट् धातु से हुई। जिसका तात्पर्य सात्त्विक भावों का अनुकरण करना है। नाट्य–परम्परा का उद्‌भव वेदों से माना जाता है। भरतमुनि के अनुसार देवताओं की प्रार्थना पर मनोरंजनार्थ ब्रह्मा ने चार वेदों का स्मरण कर उनके सारभाग का समन्वय किया। भरतमुनि के नाट्य–शास्त्र के प्रथम अध्याय में लिखा है–

''सर्वशास्त्रार्थसम्पन्नम् सर्वशिल्पप्रदर्शकम्।
नाट्याख्यं पंचवेदम् सेतिहासं करोम्यहम् ।।5।।
एवं संकल्प्य भगवान् सर्ववेदाननुस्मरन्।
नाट्यवेदम् ततश्चक्रे चतुर्वेदांगसम्भवम् ।।6।।

जग्राह पाठ्यम् ऋग्वेदात्सामभ्यो गीतमेव च।
यजुर्वेदादभिनयान् रसानाथर्वणादपि ।।7।।'' [1]

अर्थात् ऋग्वेद से संवाद, यजुर्वेद से अभिनय,सामवेद से गीत तथा अथर्ववेद से रस ग्रहण करके पंचमवेद नाट्यवेद की रचना की। नाटक के अभिनय के लिए महाशिल्पी विश्वकर्मा ने रंगमंच का निर्माण किया और नटराज भगवान शंकर ने ताण्डव एवं माता पार्वती ने लास्य नृत्य प्रदान कर नाटक को लोकोत्तर मनोहारी बनाया।

भरतमुनि ने नाटक के 10 भेद किये हैः–

1. नाटक 2. प्रकरण 3. भाण 4.प्रहसन 5. डिम
6. व्यायोग 7. समवकार 8. वीथी 9. उपेक 10. ईहामृत

'' पश्चिम के कतिपय भारतीय विद्याविदों ने यह प्रमाणित करने का प्रयत्न किया है कि भारतीय नाटक का उद्भव और विकास यूनानी नाटक से प्रभावित था। यह धारणा निर्मूल है। यूनानी नाटकों के उत्कर्ष और प्रभाव विस्तार का काल ईसा की पहली शताब्दी कहा जाता है। परन्तु संस्कृत नाटक का विविध रूपात्मक उत्कर्ष इसके बहुत पहले सम्पन्न हो चुका था।'' [2]

2.1 हिंदी में नाटक साहित्य

हिंदी नाटक के आरम्भिक स्वरूप पर विचार करने पर इस तथ्य की अवगति होती है कि उसकी पृष्ठभूमि में वहाँ एक ओर प्राचीन भारतीय संस्कृत नाटक की परम्परा विद्यमान थी, वहीं दूसरी ओर पाश्चात्य प्रेरणा और प्रभाव भी क्रियाशील था। इस विषय में डॉ.नगेन्द्र ने लिखा है, ''आज के नाटक को उत्तराधिकार में स्वदेश विदेश दोनों से थोड़ी बहुत सम्पत्ति मिली है। स्थूल रूप से उसका विवेचन हम इस प्रकार कर सकते हैं: –

(1) संस्कृत के अनूदित नाटक,
(2) विदेश का रोमांटिक ड्रामा–विशेषकर शेक्सपियर और मौलियर का साहित्य,
(3) द्विजेन्द्रलाल राय के नाटक,
(4) हिंदी के पारसी रंगमंच वाले सस्ते नाटक,

(5) प्रसाद का नाट्य साहित्य,

(6) पश्चिम के समस्या नाटक।'' [3]

हिंदी नाटकों के उद्‌भव काल को कुछ विद्वानों ने तेरहवीं शती माना है। संवत् 1289 वि. में रचित 'जय सुकुमार रास' को एक विद्वान ने हिंदी का प्रथम नाटक माना है, किंतु अन्य विद्वानों ने इसे मात्र काव्य माना है, क्योंकि इसमें नाटकीय तत्त्वों का सर्वथा अभाव था। मैथिली भाषा में प्राप्त नाटकों को हिंदी के प्राचीनतम नाटकों में गिना जा सकता है। इन नाटकों में आवश्यक नाट्य तत्त्वों का समावेश हो गया था। सत्रहवीं एवं अठारहवीं सदी में महाभारत, रामायण, प्रबोध–चंद्रोदय,चंडी–चरित, शकुंतला नाटक, सभासार नाटक, करुणाभरण आदि पद्य–बद्ध नाटकों का सर्जन हुआ। उन्नीसवीं शताब्दी में इसी नाट्य परम्परा के अन्तर्गत माधव–विनोद, जानकी–रामचरित्र, रामलीला–विहार, तथा आनन्द–रघुनंदन जैसे नाटकों की रचना हुई। ये सभी नाटक विशुद्ध गद्य में रचे गए हैं। नाटकीयता का इनमें सर्वथा अभाव रहा है।

2.2 पूर्व भारतेन्दु युग–

हिंदी में नाटक के पिता भारतेन्दु हरिश्चन्द्र माने जाते हैं किन्तु भारतेन्दु से पहले भी हिंदी में नाटक नाम की रचनायें लिखी गई थी। इन रचनाओं में सबसे पुरानी रचना संस्कृत नाटक हनुमान नाटक का हृदयरामकृत हिंदी अनुवाद है। इसका समय 1623 ई. माना गया है। इसके अलावा प्रबोध चंदोदय के अनेक हिन्दी नाटक हैं। जैन कवि बनारसीदास ने 'मोह विवेक युद्ध' नामक नाटक लिखा था। अट्‌ठारहवीं शताब्दी के नाटकों में नेवाज कवि का 'शकुंतला' नाटक भी प्रसिद्ध है। ज्ञान सूर्योदय नाटक के भी एक से अधिक हिंदी अनुवाद हुए। हिंदी का पहला मौलिक नाटक रींवा नरेश विश्वनाथसिंह द्वारा लिखित 'आनन्द रघुनन्दन' नाटक माना जाता है। इसका समय उन्नीसवीं शताब्दी का आरम्भकाल है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने हिंदी का पहला मौलिक नाटक 'नहुष' (1857) माना है। यह उनके पिता गिरधरदास द्वारा रचित है।

आधुनिक काल में भारतेन्दु जी के पिता गोपालचन्द्र गिरधरदास ने 'नहुष' (1857 ई.), गणेश कवि ने 'प्रद्युम्न विजय' (1863 ई.), तथा शीतलाप्रसाद त्रिपाठी ने 'जानकी मंगल' (1868 ई.) नाटकों की रचना की। इसमें से

अन्तिम रचना ही नाट्यगुणों से सम्पन्न है, किन्तु तब तक भारतेन्दु जी का 'विद्यासुंदर'(1868 ई.) नाटक प्रकाशित हो चुका था, जो संस्कृत के 'पंचाशिका' का हिंदी अनुवाद है।

डॉ.नगेन्द्र नाटक के उद्भव व विकास के बारे में लिखते हैं ''हिन्दी–नाटकों का आरंभ भारतेंदु हरिश्चन्द्र से ही स्वीकार किया जाना चाहिए। इसके पूर्व जिन नाट्य–कृतियों–प्राणचंद चौहान कृत 'रामायण महानाटक' (1610ई.), लछिराम कृत 'करुणाभरण' (1657), नेवाज–कृत 'शकुंतला' (1680), महाराज विश्वनाथसिंह–कृत 'आनंद रघुनंदन' (अनुमानतः 1700ई.), रघुराय नागर–कृत 'सभासार' (1700), उदय–कृत 'रामकरूणाकर' एवं 'हनुमान नाटक' (1840) का उल्लेख मिलता है, वे वस्तुतः नाटक नहीं हैं। ये पद्यात्मक प्रबंध है, जिनमें काव्यगुणों का भी अभाव है। इनमें 'आनंद रघुनंदन' ही ऐसी रचना है, जिसमें शास्त्रीय नियमों के अनुसार नान्दी, विष्कम्भक, भरतवाक्य आदि का प्रयोग किया गया है, और रंग–निर्देश (संस्कृत भाषा में) भी दिये गये हैं।

इसलिए विद्वानों ने इसे हिंदी का प्रथम नाटक माना है, किंतु इसमें नाट्य–दृष्टि से अनेक दोष हैं। उदाहरणार्थ, पात्रों के लोकप्रचलित नामों को बदल कर दुर्बोध बना दिया गया है, काल–दोष का ध्यान न रखकर अंग्रेजी, फारसी, बंगला, मैथिली आदि अनेक भाषाओं का प्रयोग किया गया है और कथानक भी शिथिल है। सब मिलाकर यह न तो सुरुचिपूर्ण है और न ही अभिनेय। अन्य पूर्ववर्ती कृतियों में अमानत कृत 'इंदरसभा' (1853), को भी गीतिनाट्य (ऑपेरा) होने पर भी हिंदी के साहित्यिक नाटकों की परम्परा में नहीं जोड़ा जा सकता। .....भारतेंदु के पिता गोपालचंद्र गिरिधरदास–कृत 'नहुष' (1857) भी विशुद्ध नाटक–रीति से भले लिखा गया हो, पर वह अन्य ब्रजभाषा नाटकों से बहुत भिन्न नहीं है। गणेश कवि का 'प्रद्युम्न–विजय' नाटक (1863) एक तो समग्र रूप में पद्यबद्ध है, और दूसरे, यह किसी संस्कृत–नाटक का अनुवाद प्रतीत होता है। शीतलाप्रसाद त्रिपाठी का 'जानकीमंगल (1868) नाटक अवश्य अभिनेय के लिए रचा गया था। यह नाट्यगुणों से युक्त है और इसकी भाषा परिमार्जित खड़ी बोली है।'' [4]

2.3 भारतेन्दु युग–

साहित्य की विभिन्न विधाओं की दृष्टि से भारतेंदु युग हिंदी का स्मरणीय काल है। हिंदी में नाटक रचना की दृष्टि से इसी युग को वास्तविक अर्थों में प्रारम्भिक काल माना जा सकता है। भारतेन्दु काल राष्ट्रीय जागरण तथा नव सांस्कृतिक चेतना का उन्मेश युग है। इससे जहां एक ओर जन सामान्य में राष्ट्रीय भावना का उदय हुआ वहाँ दूसरी ओर धार्मिक जागरूकता का भी। नव जागृति के संक्रमण काल मे ंजनजीवन में राष्ट्रीयता एवं सांस्कृतिक चेतना के लिए इस युग में नाटकों का माध्यम अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुआ।

भारतेंदु के नाटक में एक ओर तत्कालीन रंगमंचीय आवश्यकताओं की पूर्ति मिलती है तो दूसरी तरफ उनका ध्येय पारसी थियेटरों की दूषित प्रवृत्ति का बहिष्कार करके जन सामान्य की कलात्मक रुचि को परिष्कृत करना भी दिखाई देता है। भारतेंदु के नाटक न सिर्फ राष्ट्रीय समस्याओं से युक्त थे बल्कि पौराणिक व ऐतिहासिक कथानकों वाले प्रभावशाली नाटक भी थे। रंगमंच पर खेलकर दिखाने के योग्य थे, अतः रंगमंच पर इनका मंचन भी किया गया।

भारतेंदु जी ने न केवल हिंदी में मौलिक नाटकों की रचना की अपितु उन्होने दूसरी भाषाओं की श्रेष्ठ नाट्य रचनाओं के अनुवाद भी किए। यही नहीं उन्होने नाट्य शिल्प पर प्रकाश डालने हेतु 'नाटक' नामक आलोचनात्मक रचना में नाट्यकला के तत्त्वों का उल्लेख करते हुए नए नाटककारों को दिशा निर्देश दिया जिससे वे जनरुचि के अनुकूल नाटकों की रचना कर सकें। उन्होने युगीन परिस्थितियों को ध्यान में रखकर ऐसे नाटकों की रचना का मार्ग प्रशस्त किया जो भारतीय एवं पाश्चात्य नाट्यकला का समन्वयात्मक रूप प्रस्तुत करते थे।

भारतेंदु युग में मौलिक और अनूदित दोनों प्रकार के नाटकों की धूम रही। एक ओर तो दूसरी भाषाओं के श्रेष्ठ नाटक हिंदी में अनूदित किए गए दूसरी ओर मौलिक नाटकों की भी रचना की गई। अनूदित नाटक मुख्यतः बंगला, संस्कृत, अंग्रेजी भाषाओं की नाट्य कृतियों पर आधारित है। इन अनूदित नाटकों से हिंदी नाट्य साहित्य को नवीन दृष्टि प्राप्त हुई और हिंदी में नाट्य रचना का सूत्रपात हुआ।

भारतेंदु हरिश्चंद्र को आधुनिक साहित्य का प्रवर्तक या जनक कहा जाता है और यह सही है, क्योंकि भारतेंदु ने आधुनिक काल की अनेक विधाओं का श्री गणेश करने में पूरा–पूरा योगदान दिया। नाटक भारतेंदु की सबसे प्रिय विधा थी, अतः उन्होंने नाटकों की रचना को पर्याप्त महत्त्व दिया और राष्ट्रीय जागरण, सांस्कृतिक–सामाजिक नवोत्थान तथा साहित्यिक चेतना के प्रचार–प्रसार के लिए 'नाटक' को सबसे सशक्त माध्यम के रूप में स्वीकार किया।

भारतेंदु युग के सर्वश्रेष्ठ नाटककार भारतेंदु हरिश्चंद्र है। उन्होंने अनूदित और मौलिक सब मिला कर सत्रह नाटकों की रचना की, जिनकी सूची इस प्रकार है–

अनूदित नाटक

1. विद्यासुंदर	– 1868	–	संस्कृत के 'चौर पंचाशिका'' के बंगला–संस्करण का हिंदी रूपान्तर
2. रत्नावली	– 1868	–	सस्कृत से अनुवाद ।
3. पाखंड विडम्बना	– 1872	–	कृष्ण मिश्र कृत 'प्रबोध चंद्रोदय' के तीसरे अंक का अनुवाद
4. धनंजय विजय	– 1873	–	कांचन कवि–कृत संस्कृत नाटक के तीसरे अंक का अनुवाद।
5. कर्पूरमंजरी	– 1875	–	सट्टक, कांचन कवि कृत संस्कृत नाटक का अनुवाद।
6. मुद्राराक्षस	– 1878	–	संस्कृत नाटककार विशाखदत्त के मुद्राराक्षस नामक नाटक का हिंदी अनुवाद।
7. दुर्लभ बंधु	– 1880	–	शेक्सपियर के 'मरचेंट' ऑफ वेनिस' का अनुवाद।

मौलिक नाट्य कृतियाँ

1. वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति	–	1873 –	प्रहसन
2. सत्य हरिश्चन्द्र	–	1875 –	नाटक

3.

4. प्रेम जोगिनी	–	1875	–	नाटिका
5. श्री चंद्रावली	–	1876	–	नाटिका
6. विषस्य विषमौषधम्	–	1876	–	भाण
7. भारत जननी	–	1877	–	नाट्य गीत
8. भारत दुर्दशा	–	1880	–	नाट्य रासक
9. नील देवी	–	1881	–	गीति रूपक
10. अंधेर नगरी	–	1881	–	प्रहसन
11. सती प्रताप	–	1883	–	गीति रूपक

भारतेंदु जी के नाटकों में सुधारवादी दृष्टिकोण के साथ–साथ राष्ट्रीय चेतना की अभिव्यक्ति हुई है तथा युगीन समस्याओं को जनता तक पहुंचााने की चेष्ठा की गई है। उनके नाटक जनकल्याण की भावना से ओत–प्रोत हैं तथा उनका प्रधान स्वर उपदेशात्मक है। अतीत गौरव एवं ऐतिहासिक श्रेष्ठता का प्रतिपादन करने का बीज भारतेंदु युग में ही पड़ गया था, जिसका विकास प्रसादयुगीन नाटकों में दिखाई देता है।

भारतेंदु जी ने अपने समय में दर्शकों की रुचि को परिष्कृत करने का प्रयास किया और पारसी थियेटर की व्यावसायिक मनोवृत्ति से उत्पन्न हीन रुचियों, दृश्यों एवं गीतों का प्रबल विरोध किया। उन्होंने संस्कृत नाट्यकला के साथ–साथ पाश्चात्य नाट्यकला का समन्वय करके हिंदी नाट्यकाव्य को नवीन दिशा की ओर अग्रसर करने का स्तुत्य प्रयास किया।

भारतेंदुकालीन नाटक का प्रमुख आधार संस्कृत नाटक है। स्वयं भारतेंदु ने भी नाटक के पुराने भेदों को ध्यान में रखते हुए रचना की और नाटक, प्रहसन, भाण, नाटिका, व्यायोग आदि के उदाहरण प्रस्तुत किए। उन्होने नांदी, प्रस्तावना, भरतवाक्य आदि नियमों का भी पालन किया।

भारतेंदु युग के नाटकों को विषय एवं प्रवृत्तिभेद के आधार पर चार वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

1. पौराणिक
2. ऐतिहासिक

3. रोमानीव 4. सामयिक उपदानों के आधार पर रचित प्रहसन और प्रतीकवादी नाटक।

1. पौराणिक नाटक–

विषय भेद से इसके तीन वर्ग किये जा सकते है–

(क) कृष्ण एवं उनके परिवार के व्यक्तियों के चरित्र पर आधृत नाटक।

(ख) राम एवं उनसे संबंधित पात्रों के चरित्र पर आधृत नाटक।

(ग) अन्य पौराणिक आख्यानों पर आधृत नाटक।

''कृष्ण चरित्र संबंधी नाटकों में भारतेंदुकृत 'चंद्रावली' (1876) अंबिकादत्त व्यास कृत 'ललिता' (1884), हरिहरदत्त दूबे कृत 'महारास' (1884), खड्गबहादुर मल्लकृत 'महारास' (1885) और 'कल्पवृक्ष'(1886) तथा सूर्यनारायण सिंह कृत 'श्यामानुराग नाटिका' (1899) उल्लेखनीय है। कृष्ण परिवार के व्यक्तियों के चरित्र से संबंधित नाटकों में चंद्र शर्मा कृत 'उषाहरण' (1887), कार्तिकप्रसाद खत्री कृत 'उषाहरण'(1892), और अयोध्यासिंह उपाध्याय कृत 'प्रद्युम्न विजय'(1893) तथा 'रुक्मिणी–परिणय' (1894) महत्त्वपूर्ण हैं।'' [5]

रामचरित्र संबंधी नाटकों में देवकीनन्दन खत्री कृत 'सीता हरण' (1876) और 'रामलीला' (1879), शीतलाप्रसाद त्रिपाठी कृत 'रामचरितावली'(1887), ज्वालाप्रसाद मिश्र कृत 'सीता–वनवास' (1895) और द्विजदास कृत 'राम चरित्र नाटक' (1891) उल्लेखनीय है।

अन्य पौराणिक आख्यानों पर आधृत नाटकों में भारतेंदु हरिश्चन्द्र कृत 'सत्य हरिश्चन्द्र' और 'सती–प्रताप', गजराज सिंह कृत 'द्रोपदी–हरण' (1885), श्री निवासदास कृत 'प्रहलाद चरित्र' (1888), बालकृष्ण भट्ट कृत 'नल–दमयंती स्वयंवर' (1895) और शालिग्राम लाल कृत ' अभिमन्यु' (1896) उल्लेखनीय है। पौराणिक नाटकों की ही परंपरा में वे नाटक भी रखे जा सकते हैं, जो ऐसे संतो और भक्तों के चरित्रों को आधार बना कर लिखे गये है, जिनकी प्रतिष्ठा लोकमानस में पौराणिक व्यक्तियों जैसी हो गयी है। इस परंपरा में गोपीचन्द, मोरध्वज और भर्तृहरि संबंधी नाटक अधिक लिखे गये हैं।

2. ऐतिहासिक नाटक –

इस युग के ऐतिहासिक नाटकों में भारतेंदु कृत 'नीलदेवी', श्रीनिवासदास कृत 'संयोगिता–स्वयंवर'(1886), राधाचरण गोस्वामी कृत 'अमरसिंह राठौड़' (1895) और राधाकृष्ण कृत 'महाराणा प्रताप' (1898) महत्त्वपूर्ण हैं। इनमें सबसे अधिक लोकप्रियता 'महाराणा प्रताप' को प्राप्त हुई। संभवतः इस युग में रचित यही एक नाटक है, जिसे ऐतिहासिक नाटकों में स्थान दिया जा सकता है।

3. रोमानी नाटक –

प्रेमप्रधान रोमानी नाटकों में श्रीनिवासदास कृत 'रणधीर–प्रेममोहिनी' (1877) और 'तप्ता संवरण' (1883) खड्गबहादुर मल्ल कृत 'रति–कुसुमायुध'(1885), किशोरीलाल गोस्वामी कृत 'प्रणयिनी–परिणय' (1890), और मयंक मंजरी (1891), शालिग्राम शुक्ल कृत 'लावण्यवती सुदर्शन' (1892) तथा गोकुलनाथ शर्मा कृत 'पुष्पवती' (1899) उल्लेखनीय है। इनमें 'रणधीर–प्रेममोहिनी' हिंदी का पहला दुःखांत नाटक है और इसी को विशेष प्रसिद्धि प्राप्त हुई।

4. प्रहसन और प्रतीकवादी नाटक –

सामयिक उपादानों को लेकर लिखे गये नाटकों में भारतेंदु–कृत 'भारत दुर्दशा' , बालकृष्ण भट्ट कृत 'नयी रोशनी का विष' (1884), खड्गबहादुर मल्ल कृत 'भारत आरत' (1885), अंबिकादत्त व्यास कृत 'भारत सौभाग्य' (1887), राधाकृष्ण दास कृत 'दुःखिनी बाला' (1880), गोपालराम गहमरी कृत 'देश–दशा' (1892), काशीनाथ खत्री कृत 'विधवा विवाह' और देवकीनंदन त्रिपाठी कृत 'भारत हरण' (1899) उल्लेखनीय है। इन नाटकों में देश की तत्कालीन दुर्दशा का चित्र खींचा गया है और समाज की समस्याओं को प्रत्यक्ष करके उनके मूल में काम करने वाली बुराईयों को दूर करने की प्रेरणा दी गयी है।

इस युग में अनेक सफल प्रहसनों की भी रचना की गयी। भारतेंदु कृत 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति' और 'अंधेर नगरी', बालकृष्ण भट्ट कृत 'जैसा काम वैसा परिणाम' (1877), और 'आचार विडंबन' (1899), विजयानंद त्रिपाठी कृत 'महा अंधेर नगरी' (1893), प्रतापनाराण मिश्र कृत ' कलिकौतुक रूपक' (1886) और राधाचरण गोस्वामी कृत ' बूढ़े मुंह मुंहासे' (1886) उल्लेखनीय प्रहसन है। इनमें

हास्य–व्यंग्यपूर्ण शैली में धार्मिक पाखंडों का खंडन हुआ है और सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार किये गये हैं।

प्रतीकवादी नाटकों की रचना इस काल में अधिक नहीं हुई है। कमलाचरण मिश्र कृत 'अद्‌भुत नाटक' (1885), रतनचंद्र कृत 'न्याय सभा' (1892) और शंकरानंद कृत 'विज्ञान' (1897) इस दिशा में उल्लेखनीय कृतियां हैं। इन नाटकों में भावों एवं मनोवृत्तियों को ही पात्रों का रूप दिया गया है।

भारतेंदु युग के नाटकों में ऐतिहासिक, पौराणिक, काल्पनिक कथाओं को विषयवस्तु बनाया गया। समाज सुधार, राष्ट्रीय गौरव, अतीत गौरव को नाटकों के माध्यम से दर्शकों तक सम्प्रेषित किया गया। प्रहसनों का मूल उद्‌देश्य व्यंग्य के द्वारा समाज की कुरीतियों का समापन करना था। आदर्श पात्रों की सृष्टि में इन नाटककारों का विश्वास था तथा नाट्‌यकला की दृष्टि से वे हिंदी नाटकों के लिए नवीन मार्ग का अनुसंधान कर रहे थे। भारतेंदु जी नाट्‌यकला में पारंगत थे, क्योंकि उनके नाटक अभिनेय हैं तथा उनमें भारतीय नाट्‌यकला के तत्त्वों के साथ–साथ पाश्चात्य नाट्‌यकला के तत्त्वों यथा–अन्तर्द्वन्द्व चरित्र–चित्रण, कार्य व्यापार, आदि का समावेश पाया जाता है। 'रणधीर प्रेम मोहिनी' जैसे नाटक से लाला श्रीनिवासदास ने दुःखान्त नाटकों की रचना प्रारंभ कर दी थी। भारतेंदु युग हिंदी नाटकों के विकास का प्रथम पड़ाव माना जा सकता है।

भारतेंदु जी की अल्पायु में ही मृत्यु हो जाने से हिंदी नाटक की प्रगति को धक्का सा लगा। जिस श्रम, उत्साह और उमंग से हिंदी में नाटकों का दौर प्रारम्भ हुआ था, वह उनके असमय चले जाने से थमा हुआ सा प्रतीत होने लगा। भारतेंदु जैसे व्यक्तित्व के अभाव में हिंदी के उदीयमान नाटककारों को उचित दिशा–निर्देश न मिल सका, फलतः मौलिक नाटकों के लेखन की गति धीमी पड़ गयी। मौलिकता के अभाव में अंग्रेजी, संस्कृत तथा बंगला से हिंदी में अनूदित नाटक बड़ी संख्या में प्रकाश में आए।

नाटकों में गद्य का महत्त्व स्थापित करने में बंगला लेखक द्विजेन्द्रलाल राय के नाटकों के अनुवादों ने हिंदी नाटकों पर अच्छा प्रभाव

डाला। ये अनुवाद पं. रूपनारायण पाण्डेय ने सफलतापूर्वक किए हैं। प्रारम्भिक नाटक ब्रजभाषा गद्य में लिखे गए थे। उनके पश्चात् खड़ी बोली गद्य का प्राधान्य होता गया।

पण्डित सत्यनारायण कविरत्न ने महाकवि भवभूति कृत 'उत्तररामचरित' और मालती–माधव' के बहुत ही सुंदर और सरल अनुवाद किये हैं। इस युग में बंगला से हिंदी में अनुवाद करने वालों में रामकृष्ण वर्मा का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। अंग्रेजी से सर्वाधिक अनुवाद शेक्सपियर के नाटकों के हुए। शेक्सपियर के कुछ प्रमुख अनूदित नाटक ये हैं–

(i) मरचेन्ट ऑफ वेनिस – वेनिस का व्यापारी – आर्या – 1888

(ii) द कॉमडी ऑफ एरर्स – भ्रमजालक – मुंशी इमदाद अली

भूल भुलैया – लाला सीताराम – 1885

(iii) ऐज यू लाइक इट – मनभावन – पुरोहित गोपीनाथ – 1896

(iv) रोमियो–जूलियट – प्रेमलीला – पुरोहित गोपीनाथ – 1897

(v) मैकबेथ – साहसेंद्र साहस – मथूराप्रसाद उपाध्याय – 1893

वस्तुतः भारतेंदु काल में नाटकों की रचना का मूल उद्देश्य मनोरंजन के साथ ही जनमानस को जाग्रत करना और उसमें आत्मविश्वास उत्पन्न करना था। फलस्वरूप इनमें सत्य, न्याय, त्याग,उदारता आदि मानवीय मूल्यों के प्रति आस्था उत्पन्न करने, प्राचीन संस्कृति के प्रति प्रेम जगाने, अनुकरणीय पौराणिक एवं ऐतिहासिक चरित्रों के प्रति समाज को आकृष्ट करने और नवीनता की आंधी से समाज को सुरक्षित रखते हुए उसका सुधार एवं परिष्कार करने पर अधिक बल दिया गया है।

2.4 प्रसाद युग –

भारतेंदु जी के असमय अवसान से हिंदी में मौलिक नाटकों के लेखन में अवरोध सा आ गया था। हाँ, अनूदित नाटकों में कमी न थी। नाट्य शिल्प और भावबोध में जैसा विकास अपेक्षित था, वह जयशंकर प्रसाद के नाट्य क्षेत्र में अवतीर्ण होने से पूर्व नहीं हो सका था। भारतेंदु युग में हिंदी नाटकों की जो शैशवावस्था थी, उसे यौवन का मार्दव प्रदान करने में प्रसाद जी की प्रतिभा अग्रगण्य रही।

प्रसाद जी इस क्षेत्र में युगान्तकारी प्रतिभा लेकर आये। उन्होने अपनी प्रतिभा के बल से हिंदी नाटकों को नवोत्कर्ष और प्रभविष्णुता प्रदान की।

जयशंकर प्रसाद जैसी प्रतिभा का अवतरण युगों में एकाध बार ही होता है। हिंदी नाटक के क्षेत्र में उनका योगदान अद्वितीय है। उन्होंने हिंदी नाटकों को भारतीय संस्कृति, देश के गौरवशाली इतिहास और मानवीय संवेदनाओं से जिस ढंग से जोड़ा, उससे हिंदी नाटकों को उत्कर्ष मिला।

हिंदी साहित्य को प्रौढ़ रूप देने का श्रेय जयशंकर प्रसाद को है। उनके हाथों हिंदी नाटकों के स्वरूप में एक अदृष्ट एवं अपूर्व परिमार्जन आया। प्रसाद से पूर्व के नाटककारों ने अपने नाटकों के कथानकों का चयन या तो पुराणों से किया था या उनके कथानक एकदम काल्पनिक थे। प्रसाद ने अपने नाटकों के लिए इतिहास की पृष्ठ भूमि को रखा। प्रसाद के पूर्ववर्ती नाटकों में समाज–सुधार का तथा राष्ट्रीय दृष्टिकोण को महत्त्व प्रदान किया। प्रसाद नाटक विधा के सम्राट माने जाते हैं। प्रसाद के नाटक प्रायः न तो दुःखान्त है और न ही सुखान्त। अतः उनके नाटकों के अन्त को 'प्रसादान्त' की संज्ञा दी गई है। प्रसाद के नाटकों में वर्तमान की गतिशीलता एवं भविष्य की आकांक्षामयी प्रेरणा का समावेश होता है। उनकी नाट्यकृतियों में ऐतिहासिकता के साथ–साथ भारतीय संस्कृति का प्रभावपूर्ण चित्रण मिलता है।

भारतेंदु जी ने हिंदी नाट्य साहित्य को जो साहित्यिक भूमिका प्रदान की, उसे कालान्तर में जयशंकर प्रसाद ने पल्लवित किया। हिंदी नाट्य क्षेत्र में प्रसाद जी का आगमन वस्तुतः युगान्तर प्रस्तुत करता है। प्रसाद जी के समय तक हिंदी रंगमंच का पूर्ण विकास नहीं हो सका था, फलतः वे ऐसे नाटकों की रचना में प्रवृत्त हुए जो पाठ्य अधिक है, अभिनेय कम। प्रसाद जी की कठिनाई यह थी कि वे जिस प्रकार के नाटक लिखना चाहते थे, उनके अनुरूप रंगमंच हिंदी में नहीं था। ....हिंदी का शौकिया रंगमंच नितान्त अविकसित था, फलतः प्रसाद ने साहित्यिक रंगमंच की स्वयं कल्पना की और इस मानसिक रंगमंच की पृष्ठभूमि में ही अपने नाटक लिखे।

भारत के अतीत गौरव का चित्रण करने के साथ–साथ उन्होंने राष्ट्रीयता की भावना उत्पन्न करने का प्रयास अपने नाटकों के माध्यम

से किया है। प्रसाद जी ने अपने नाटकों के विषय बौद्धकाल,मौर्यकाल एवं गुप्तकाल से चुने हैं जो भारतीय इतिहास का स्वर्णयुग माना जाता है।

ऐतिहासिक नाटकों के अन्य लेखकों ने जहां हिंदुओं के जातीय अभिमान तथा विदेशी आक्रमणकारियों से उनके लोहा लेने की बात का वर्णन प्रमुखता से किया है, वहां प्रसाद जी ने हिंदुओं की सभ्यता एवं नैतिक श्रेष्ठता के सुंदर चित्र अपने नाटकों में प्रस्तुत किये हैं उन्होंने ऐतिहासिक और पौराणिक घटनाओं को अपने समय के साथ जोड़ते हुए उन्हे प्रासंगिक बनाया है। इसीलिए अपने समय की सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक चेतना का प्रतिबिंब इन रचनाओं में विद्यमान है। उनके नाटकों में प्रसंगवश आये हुए गीत साहित्य की स्थायी निधि हैं।

चरित्र चित्रण में वे विशेष सतर्क रहे हैं। पात्रों के सत्–असत् पक्ष को प्रस्तुत करने में उन्होने मनावैज्ञानिक पद्धतियों को अपनाया है। यही कारण है कि उनके अधिकतर पात्र अन्तर्द्वन्द्व–प्रधान हैं। नारी चरित्र के अंकन में उन्होने अपनी अत्यंत–भावुक ,सहृदय और उदार प्रकृति का परिचय दिया है। प्रसाद के प्रायः सभी नाटकों में किसी न किसी नारी पात्र की अवतारणा हुई है जो धरती के दुःखपूर्ण अंधकार के बीच प्रसन्नता की ज्योति की भांति उद्दीप्त है, जो पाशविकता, दनुजता और क्रूरता के बीच क्षमा, करुणा के दिव्य संदेश की प्रतिष्ठा करती है।

जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित नाटकों का विवरण इस प्रकार है–

1.	विशाख	–	1921 ई.
2.	आजातशत्रु	–	1922 ई.
3.	कामना	–	1924 ई.
4.	जनमेजय का नागयज्ञ	–	1926 ई.
5.	स्कन्दगुप्त	–	1928 ई.
6.	एक घूंट	–	1930 ई.
7.	चंद्रगुप्त	–	1931 ई.
8.	ध्रुवस्वामिनी	–	1933 ई.

अपने नाटकों में प्रसाद जी ने अतीत के पट पर वर्तमान का चित्रण किया है। प्रसाद जी रोमानी प्रकृति के कवि थे, अतः उन्होंने देश के

गौरवमय अतीत को अपने नाटकों का विषय बनाया। उनके नाटकों में पौराणिक युग से लेकर हर्षवर्धन युग तक के भारतीय इतिहास की गौरवमयी झांकी देखने को मिलती है।

शायद ही हिंदी के किसी अन्य लेखक ने भारतीय संस्कृति, समृद्धि, शक्ति और औदात्य का ऐसा भास्वर चित्र प्रस्तुत किया हो। इन नाटकों में जो चरित्र उभरें हैं वे शील, शक्ति और औदात्य के प्राणवंत विग्रह हैं। इतिहास के पात्रों में नया जीवन भर दिया गया है। गौतमबुद्ध, चाणक्य, चंद्रगुप्त, स्कंदगुप्त, राज्यश्री, ध्रुवस्वामिनी आदि ऐतिहासिक पात्र हैं, पर प्रसाद के नाटकों में इनका जो रूप उभरा है, वह इतिहास की उपलब्धि नहीं हो सकता।

कलात्मक उत्कर्ष की दृष्टि से प्रसाद के प्रमुख नाटक तीन है : 'स्कंदगुप्त, 'चंद्रगुप्त' और 'ध्रुवस्वामिनी'। 'स्कंदगुप्त' में समृद्धि और ऐश्वर्य के शिखर पर आसीन गुप्त साम्राज्य की उस स्थिति का चित्रण हुआ है, जहां आंतरिक कलह, पारिवारिक संघर्श और विदेशी आक्रमणों के फलस्वरूप उसके भावी क्षय के लक्ष्ण प्रकट होने लगे थे। विषय और रचनाशिल्प दोनों ही दृष्टियों से यह प्रसाद का सर्वश्रेष्ठ नाटक माना जाता है।

'चंद्रगुप्त' की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें विदेशियों से भारत के संघर्श और उस संघर्श में अंततः भारत की विजय की थीम उठायी गयी है। चाणक्य, चंद्रगुप्त, मालविका, कार्नेलिया आदि के रूप में उन्होने अनेक प्रभावशाली चरित्र हमें दिये हैं।

प्रसाद के नाटकों में 'ध्रुवस्वामिनी' का विशिष्ट स्थान है। यद्यपि यह भी मूलतः ऐतिहसिक नाटक है और इतिहास की एक अत्यंत नाजुक घड़ी का चित्रण इसमें हुआ है, पर इसका विशेष महत्त्व 'समस्यानाटक' के रूप में है। इसमें तलाक और पुनर्विवाह की समस्या को बड़े कौशल से उठाया गया है। 'कामना' और 'एक घूंट' भी उनके उल्लेखनीय नाटक हैं। 'कामना' संस्कृत के 'प्रबोध चंद्रोदय' की शैली का अन्योपदेशिक नाटक है। इसमें विभिन्न मनोविकारों को प्रतीक के रूप मे रंगमंच पर उपस्थित किया गया है और उनके कार्यकलापों द्वारा मानव सभ्यता और संस्कृति के विकास की कथा प्रस्तुत की गई है। नाट्य शिल्प की दृष्टि से प्रसाद जी के नाटक बेजोड़ है। उनमें भारतीय एवं पाश्चात्य नाट्यकला का संतुलित समन्यवय हुआ है।

एक ओर तो उनमें कथावस्तु, गीत योजना, रसयोजना,उदात्त नायक, विदूषक आदि भारतीय नाट्यकला से लिए गए है तो दूसरी ओर कार्य व्यापार, अन्तर्द्वन्द्व, संघर्ष एवं व्यक्ति वैचित्र्य जैसे तत्त्व पाश्चात्य नाट्यकला से लिए गए है।

प्रसाद जी प्रयोगधर्मी नाटककार थे। उन्होंने कभी भी अपने आप को दुहराया नहीं। उनके आरंभिक नाटक, जिनका लेखनकाल 1910 से 1915 ई. है, उनकी प्रयोगधर्मिता के प्रमाण है। उन्होंने अपने परवर्ती नाटकों में विषय और शिल्प दोनों ही दृष्टियों से प्रयोग किए और अन्ततः ध्रुवस्वामिनी के रूप में एक ऐसा सशक्त नाटक लिखा जो पूरी तरह अभिनीत किए जाने योग्य हैं। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि हिंदी की ऐतिहासिक नाट्य परम्परा में प्रसाद जी श्रेष्ठतम नाटककार है।

प्रसाद युग के अन्य उल्लेखनीय नाटककारों में हरिकृष्ण प्रेमी, लक्ष्मीनारायण मिश्र, सेठ गोविन्ददास, गोविन्दबल्लभ पंत, उपेन्द्रनाथ अश्क, वृंदावनलाल वर्मा, किशोरीदास वाजपेयी, वियोगी हरि, चतुरसेन शास्त्री, पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' आदि के नाम लिए जा सकते हैं।

हरिकृष्ण प्रेमी ने मध्यकालीन इतिहास से विषयवस्तु का चयन करते हुए भव्य ऐतिहासिक नाटकों की रचना की। रक्षाबंधन, शिवसाधना, प्रतिशोध, स्वप्नभंग, आहुति, विषपान, उद्धार, शपथ विजयस्तंभ, कीर्तिस्तंभ, संरक्षक, विदा, आन का मान, संवत प्रवर्तन, अमृतपुत्री, छाया बंधन प्रेमीजी के प्रसिद्ध ऐतिहासिक नाटक हैं। प्रेमीजी ने अपने नाटकों से हिंदू–मुस्लिम एकता को स्थापति करने का प्रयास किया। रक्षाबंधन (1934 ई.) में रानी कर्णवती मुगल सम्राट हुमायूं को राखी बांधकर अपना भाई बना लेती है। 'प्रतिशोध' (1937ई.) नाटक में बुंदेलखण्ड के वीर योद्धा चम्पतराय एवं उसके पुत्र छत्रसाल के जीवन चरित्र द्वारा राष्ट्रीयता की भावना मुखरित की गई है। 'स्वप्नभंग' नाटक में शाहजहां के पुत्र द्वारा हिंदू–मुस्लिम एकता के लिए अपना बलिदान कर देने की कथा हैं। 'विषपान' में राजकुमारी कृष्णा देशहित के लिए विषपान कर लेती है। प्रेमीजी के नाटक राष्ट्रीयता एवं देशभक्ति की भावना से ओतप्रोत हैं तथा रंगमंचीयता एवं अभिनेयता की दृष्टि से भी सफल हैं।

प्रसाद युग के एक अन्य प्रमुख नाटककार के रूप में लक्ष्मीनारायण मिश्र का नाम उल्लेखनीय है। उनके प्रसिद्ध नाटकों में अशोक (1927), संन्यासी (1929), मुक्ति का रहस्य (1932), राक्षस का मंदिर (1932), राजयोग (1934), सिंदूर की होली (1934), आधी रात (1934) के लिए जा सकते हैं। मिश्र जी समस्या प्रधान नाटकों की रचना के लिए प्रख्यात रहे हैं। प्रसाद से सर्वथा भिन्न मार्ग पर चल कर उन्होने हिंदी नाटक साहित्य को नया मोड़ दिया। उनका पहला नाट्क 'अशोक' द्विजेन्द्रलाल राय और प्रसाद के नाटकों की परम्परा में लिखा गया था। उनके 'संन्यासी' नाटक के साथ ही हिंदी–नाटक के विषय और शिल्प दोनों में बदलाव आया। 'संन्यासी' में राष्ट्र और अपनी संस्कृति के गौरवबोध की प्रेरणा मुख्य रही है। इसमें विदेशी शासकों की छलकपटपूर्ण नीति, गांधीजी के असहयोग आन्दोलन एवं रौलेट एक्ट को विषयवस्तु के रूप में अपनाया गया है।

मिश्र जी ने अपने नाटकों की विषयवस्तु के लिए इतिहास के पृष्ठों में नहीं, बल्कि समाज के विस्तृत आंगन में झांका और समसामयिक समाज में, विशेष रूप से नारी की स्थिति और उसकी समस्याओं को अपने दृष्टिकोण से चित्रित किया। प्रसाद के नाटकों में जहां स्वच्छंदतावादी प्रवृत्ति का प्राधान्य था, वहां मिश्र जी के नाटकों में बौद्धिकता का समावेश हुआ। सहशिक्षा और आधुनिक शिक्षा का स्थान–स्थान पर विरोध भी मिश्र जी को परंपरावादी सिद्ध करता है।

लक्ष्मीनारायण मिश्र जी ने नाट्यशास्त्र की दिशा में भी अनेक मौलिक एवं क्रांतिकारी प्रयोग किये हैं। उनके सभी नाटक तीन अंकों के हैं और अंको का विभाजन दृश्यों में नहीं किया गया है। वे यह मानते हैं कि उनके नाटकों में विषय प्रतिपादन भारतीय ढंग का है तथापि इन नाटकों का शिल्प पश्चिमी प्रभाव से अलग नहीं है। हिंदी नाटकों के विकास में लक्ष्मीनारायण मिश्र का महत्वपूर्ण योगदान है और वे हिंदी के एक सशक्त नाटककार के रूप में माने जाते हैं।

सेठ गोविंददास ने 'उषा, हर्ष, 'कर्तव्य', 'प्रकाश', 'शशिगुप्त', 'कुलीनता', 'शेरशाह' आदि कई नाटक लिखे। इनका 'शेरशाह' नाटक इस दृष्टि से विशिष्ट है कि उसमें हिंदू–मुस्लिम एकता का प्रभावपूर्ण अंकन है। इसी प्रकार 'कुलीनता' नाटक में कुलगत प्रतिष्ठा की निस्सारता व्यक्त की गयी है। सेठ जी ने

पौराणिक, ऐतिहासिक, धार्मिक सामाजिक, राजनीतिक सभी विषयों पर नाटक लिखे हैं। इनकी रचनाओं में गाँधीवाद तथा मानवतावाद के स्वर सर्वत्र सुनायी देते हैं।

गोविंदवल्लभ पंत ने कला तथा रंगमंच की दृष्टि से सफल नाटकों की रचना की है। इनके 'वरमाला', 'राजमुकुट', 'अधूरी मूर्ति', 'अंगूर की बेटी', 'विषकन्या' और 'सुजाता' आदि प्रसिद्ध नाटक है। इनके नाटकों की कथावस्तु पौराणिक तथा ऐतिहासिक है। इनके नाटकों में सामाजिक जीवन की समस्याओं के प्रति भी सजग दृष्टि मिलती है रंगमंचीयता की दृष्टि से भी इनके नाटक अभिनेय कहे जा सकते हैं। शिल्प की दृष्टि से इनके सभी नाटक प्रशंसनीय हैं।

उदयशंकर भट्ट ने ऐतिहासिक व पौराणिक आधार पर कई नाटक लिखे हैं। भट्ट जी के ऐतिहासिक–पौराणिक नाटकों में 'सगर विजय', 'अम्बा', विक्रमादित्य', दाहर या सिंध विजय', 'मत्स्यगंधा', 'विश्वामित्र', 'शक विजय, प्रमुख है। भट्ट जी का 'कमला' नामक नाटक आधुनिक काल से संबंधित है। इनके 'मत्स्यगंधा' और 'विश्वामित्र' दोनों गीत–नाट्य है।

वृंदावनलाल वर्मा की ख्याति मुख्यतः उनके ऐतिहासिक उपन्यासों के कारण है। लेकिन इनका नाटक विधा में भी महत्त्वपूर्ण योगदान है। इनका 'पूर्व की ओर' नाटक निकोबार (नागद्वीप) और बोर्निया (वरुण द्वीप) की संस्कृति पर आधारित अपने ढंग का विलक्षण नाटक है। कथानक कल्पित हैं, किंतु उसका आधार ऐतिहासिक है। 'हंस–मयूर' में भारतीय संस्कृति की व्याख्या है। वर्मा जी के अन्य नाटकों में 'पीले हाथ', 'झाँसी की रानी', 'राखी की लाज', 'कनेर', बाँस की फाँस' आदि उल्लेखनीय है।

कुल मिलाकर इस काल के नाट्य–साहित्य को अन्य विधाओं की तुलना में बहुत पिछड़ा हुआ नहीं माना जा सकता । जयशंकर प्रसाद और लक्ष्मीनारायण मिश्र की नाट्य–कृतियां निस्संदेह गौरवास्पद है। यदि हिंदी के पास अव्यावसायिक रंगमंच होता तो इस युग का नाट्यसाहित्य और भी अधिक समृद्ध होता, इसमें कोई संदेह नहीं।

2.5 प्रसादोत्तर युग –

प्रसादोत्तर नाटकों का प्रारम्भ हम सन 1950 ई.से मान सकते है। इस काल के उपरान्त रचित नाटक जीवन के यथार्थ से अधिक जुड़े हुऐ हैं तथा उनमें रंगमंचीयता एवं अभिनेयता का विशेष ध्यान रखा गया है।

यद्यपि इस काल में भी नाटकों की विषय–वस्तु का चयन इतिहास–पुराण के साथ–साथ समसामयिक जीवन से किया गया, तथापि अब विषय–वस्तु एवं शिल्प में बदलाव नजर आने लगा। जटिल जीवनानुभूतियों को अब नाटक में प्रस्तुत किया जाने लगा तथा अन्तर्द्वन्द्व चित्रण की प्रमुखता रहने लगी।

देश में स्वतंत्रता के उपरांत एक नई चेतना का विकास हुआ तथा जनमानस ने जो अपेक्षाएँ की थी वे भी पूरी नहीं हो सकीं। सर्वत्र स्वार्थपरता, छलकपट, भ्रष्टाचार, अवसरवादिता का बोलबाला हो गया। युवा पीढ़ी द्विग्भ्रमित हो गई। बढ़ती हुई बेरोजगारी ने तनाव,संघर्ष एवं आपराधिक प्रवृत्तियों को जन्म दिया। मूल्यों में परिवर्तन हुआ और समाज का ढ़ांचा बिखरने लगा । महानगरीय जीवन, यांत्रिकता, औद्योगीकरण के कारण जीवन और जगत में अनेक नई समस्याओं का विकास हुआ । नवीन परिवेश,नवीन भावबोध एवं नवीन मान्यताओं ने नाटकों की विषय वस्तु को भी बदल दिया । नाटक ने पुरानी लीक छोड़कर नवीन मार्ग ग्रहण किया।

प्रसादोत्तर काल में हिंदी नाटक रंगमंच और जीवन के यथार्थ से जुड़कर नयी दिशा की ओर उन्मुख हुआ। यद्यपि भारतेंदु हरिश्चन्द्र ने भी यह प्रयास किया था, पर गद्य के उस प्रारम्भिक विकास काल में उनके नाटकों से बड़ी उपेक्षाएं नहीं की जानी चाहिए । भारतेंदु के बाद प्रसाद को दिशा–प्रवर्तक नाटककार स्वीकार किया जाता है, किंतु उनके नाटकों को मंच नहीं मिला। फिर भी अपनी सांस्कृतिक चेतना, काव्यात्मक परिवेश, नाटकीय संघर्ष की सूझ और चरित्र–सर्जन की अपूर्व क्षमता के कारण उनके नाटक अद्वितीय बन गये हैं।

उपेन्द्रनाथ अश्क पहले ऐसे नाटककार हैं, जिन्होने हिंदी को रोमांस के कठघरे से निकालकर किसी सीमा तक आधुनिक भावबोध के साथ जोड़ा। अश्क जी ने 'स्वर्ग की झलक', 'कैद', 'छटा बेटा' आदि नाटकों के माध्यम से समाज की विभिन्न समस्याओं पर अच्छा प्रकाश डाला है। 'छठा बेटा' नाटक में पिता–पुत्र

के परिवर्तित संबंधों को व्यंग्यात्मक ढंग से चित्रित किया गया है। अवकाश प्राप्त पिता को छह बेटों में से कोई भी अपने पास रखने को तैयार नहीं है। 'कैद' में सामाजिक रूढ़ियों और यंत्रणाओं की कैद में घुटती हुई नारी का चित्र है तो 'उड़ान' में रूढ़ियों से बाहर निकल कर मुक्त हवा में सांस लेती हुई नारी चित्रित है। 'अंजो दीदी' अश्क जी की सर्वाधिक प्रौढ़ नाटकीय कृति है। 'अंधी गली' और 'पैंतरे' अश्क जी के अन्य नाटक हैं।

विष्णु प्रभाकर ने अपने नाटकों में आधुनिक भावबोध से उत्पन्न तनाव एवं जीवन संघर्ष को सफलतापूर्वक प्रस्तुत किया है। इनके लिखे प्रसिद्ध नाटकों में 'डॉक्टर', 'युगे–युगे क्रांति' और 'टूटते परिवेश' के नाम लिए जा सकते हैं। 'युगे–युगे क्रांति में पीढ़ीगत संघर्ष की अभिव्यक्ति है तथा 'टूटते परिवेश' में पारिवारिक विघटन को यथार्थ अभिव्यक्ति मिली है। 'डॉक्टर' एक मनावैज्ञानिक नाटक है जिसमें भावना और कर्तव्य के अन्तर्द्वंद्व को चित्रित किया गया है।

जगदीशचन्द्र माथुर ने हिंदी रंगमंच को नई दिशा देने का प्रयास अपने बहुचर्चित नाटकों के माध्यम से किया। कोणार्क (1951), शारदीया (1950ई.), पहला राजा (1969ई.) तथा दशरथनंदन (1974ई.) उनके प्रसिद्ध नाटक हैं। 'कोणार्क' नाटक की कथा भुवनेश्वर (उड़ीसा) के कोणार्क मंदिर के साथ जुड़ी हुई है। शिल्पी विशु और महामंत्री चालुक्य के संघर्ष की कथा वस्तुतः प्रभुता संपन्न शासक एवं गरीब शिल्पी की संघर्ष गााथा है। 'शारदीया' उनका ऐतिहासिक नाटक है जो मराठों और निजाम के बीच हुए युद्ध की पृष्ठभूमि पर आधृत है। भाषा की सरलता में भी नाटकीय स्थितियों को तीव्रतापूर्वक प्रस्तुत करने की कोशिश इसे विशिष्ट बनाती है। 'पहला राजा' पौराणिक पृष्ठभूमि से युक्त होने पर भी समसामयिक युगीन संदर्भों से जुड़ा हुआ प्रतीकात्मक नाटक हैं। पौराणिक संदर्भ को ले कर लिखित उनकी चौथी रचना है – 'दशरथनंदन'। यह रामकथा पर आधृत नाट्य कृति है।

धर्मवीर भारती कृत 'अंधा युग' (1954ई.) आधुनिक भावबोध को प्रस्तुत करने वाला गीति–नाट्य है। इसमें महाभारत के अठारहवें दिन की संध्या से प्रभासतीर्थ में कृष्ण के देहावसान के क्षणों तक की कथा ली गयी है। 'अंधा युग' एक सशक्त कृति है जिसमें महाभारत के पात्रों के माध्यम से आधुनिक युग के संत्रास, तनाव, कुंठा, अंतर्द्वन्द्व, आवेश एवं अभिशप्त जीवन को अभिव्यक्त किया गया है।

यह तनावों का नाटक है, संघर्ष का नहीं और नाटकीयता तनावों में ही होती है। अश्वत्थामा का अंतःसंघर्ष सहृदय को भी तनावपूर्ण स्थिति में डाल देता है। इस नाटक की भाषा अपनी सरलता, टोन के उतार चढ़ाव, लय, क्रियात्मकता आदि के कारण नाटकीय स्थितियों का जो बिंब प्रस्तुत करती है, उससे यथार्थ का नवीन पक्ष उद्घाटित होता है।

लक्ष्मीनारायण लाल एक बहुचर्चित नाटककार है। अंधाकुआ (1955), मादा कैक्टस (1959), तीन आंखों वाली मछली (1960), सुंदर रस (1959), सूखा सरोवर (1960), रक्तकमल(1962), रातरानी (1962), दर्पण (1963), सूर्यमुख (1968), कलंकी(1969), मिस्टर अभिमन्यु(1971) , करफ्यू (1972) आदि। पूंजीवाद और भ्रष्टाचार ने किस प्रकार से व्यक्ति को 'चक्रव्यूह' में अभिमन्यु की भांति घेर रखा है, इसका चित्रण मिस्टर अभिमन्यु में हुआ है। 'सुंदर रस और 'सूखा सरोवर' प्रतीकात्मक नाटक हैं। 'दर्पण' नाटक में आधुनिक बोध का वर्णन है। सूर्यमुख' महाभारत युद्ध के बाद द्वारिका के वातावरण पर आधारित पौराणिक नाटक है, जो रचनाशिल्प की दृष्टि से धर्मवीर भारती के 'अंधा युग' से सीधे प्रभावित है। डॉ.लाल के नाटकों में भैतिकवादी अंधी दौड़ का चित्रण हुआ है और मानवीय जीवन की विसंगतियों का यथार्थ चित्रण हुआ है।

मोहन राकेश आधुनिक काल के सशक्त नाटककार माने जाते हैं। यद्यपि उन्होंने केवल तीन नाटकों की रचना की तथापि संख्या में कम होने पर भी उनके नाटक हिंदी में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। उनके नाटकों के नाम है –आषाढ़ का एक दिन (1958ई.), लहरों के राजहंस (1963ई.) तथा आधे–अधूरे (1969)। 'आषाढ़ का एक दिन' महाकवि कालिदास के परिवेश, रचना प्रक्रिया, प्रेरणा स्रोत और उनके चुक जाने से संबद्ध है। 'लहरों के राजहंस' में नंद और सुंदरी की कथा महात्मा बुद्ध के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत की गई है। इसमें राग–विराग और श्रेय–प्रेय के द्वंद्व को उभार कर चिरंतन आध्यात्मिक प्रश्न को नये संदर्भ में उठाया गया है। इसका कथानक अश्वघोष के 'सौंदरानंद' पर आधारित है। इस नाटक में चित्रित नंद का व्यक्तित्व आधुनिक भावबोध से युक्त संशयशील मानव का प्रतीक है, जो अनिर्णय की स्थिति में रहने के लिए विवश है। 'आधे–अधूरे' मध्यमवर्गीय जीवन की विडम्बना को प्रस्तुत करने वाला एक सशक्त नाटक है। इसमें इतिहास के आधार को छोड़कर समाज की विसंगतियों से सीधे जुझने का प्रयास है। मोहन राकेश के नाटकों का शिल्प बेजोड़ है। रंगमंच की दृष्टि से ये पूर्ण सफल

नाटक है। संवाद, भाषा, प्रस्तुतीकरण, दृश्य संकेत, रंग निर्देश, छाया प्रकाश आदि सभी दृष्टियों से वे रंगमंच पर सफलतापूर्वक अभिनीत किए जाने योग्य हैं।

इस युग के अन्य नाटकों में सुरेंद्र वर्मा कृत 'सेतुबंध', 'द्रोपदी' और 'आठवां सर्ग'श्शंकर शेष कृत 'बिन बाती के दीप', बंधन अपने–अपने' और 'एक और द्रोणाचार्य', मुद्राराक्षस कृत 'तिलचट्टा', 'तेंदुआ', 'मरजीवा' और 'योर्स फेथफली', सर्वेश्वर दयाल सक्सेना कृत 'बकरी', मन्नू भंडारी कृत 'बिना दीवार का घर', भीष्म साहनी कृत 'कबिरा खड़ा बाजार में' आदि उल्लेखनीय है।

समकालीन नाटक–साहित्य

हिंदी के समकालीन नाटक साहित्य में यथार्थ अन्वेषी सृजनात्मकता के मोडों और प्रवृत्तियों के सार्थक संकेत साफ तौर पर उभर कर सामने आये हैं। मोहन राकेश के बाद का हिंदी–नाटक निराशा और पराजय बोध के संसार से निकल कर संघर्ष में टूटते पर हिम्मत बांधते जीते आदमी की आस्था की ओर कदम उठाता है। मोहन राकेश के बाद ऐसे अनेक नाटककार नाट्यक्षेत्र में आये, जिन्होंने नयी तकनीक, नयी रंगदृष्टि और प्रयोगधर्मी साहसिकता से नाट्यसृजन की प्रासंगिक संभावनाओं को जीवंतता से उजागर किया।

प्रत्येक जीवित जाति का यह स्वभाव रहा है कि वह अपनी सांस्कृतिक अस्मिता को ऐतिहासिक बोध से संपन्न बना कर उसमें ही नये–नये जीवन अर्थ खोजती है। इस काल में ऐतिहासिक व पौराणिक नाटकों की भरमार रही है और मिथकों में दृष्टि की आधुनिकता हीरे की भांति रगड़ खा कर चमक उठी है। इस दौर में इस दृष्टि से शंकर शेष का 'खजुराहों का शिल्पी', दयाप्रकाश सिन्हा का 'इतिहास चक्र', लक्ष्मीनारायण भारद्वाज का 'अश्वत्थामा', जयशंकर त्रिपाठी का 'कुरूक्षेत्र का सवेरा', लक्ष्मीनारायणलाल का 'राम की लड़ाई', 'नरसिंह कथा', 'एक सत्य हरिश्चन्द्र', गिरीराज किशोर का 'प्रजा ही रहने दो', नरेन्द्र कोहली का 'शंबूक की हत्या', मणिमधुरकर का 'इकतारे की आँख', ललित सहगल का 'हत्या एक आकार की', रेवतीशरण शर्मा का 'राजा बलि की नई कथा', सुरेन्द्र वर्मा का 'छोटे सैयद–बड़े सैयद', 'आठवां सर्ग' आदि का नाम स्मरणीय है। व्यवस्था के भ्रष्ट और ढोंगी चरित्र पर इन नाटकों ने टिप्पणियां की है।

अतीत की वर्तमानता को अर्थवत्ता देने वाले ये नाटक नाट्यसृजन को नई धार से पैनापन देते रहे हैं।

हिंदी नाटक का सातवा–आंठवां दशक प्रयोगधर्मी नाट्य परंपरा की दृष्टि से पूरे हिंदी नाटक के विकास में एक नया अध्याय जोड़ता है। आज के नाटककार ऐसे नाटक लिख रहे हैं, जिनमें आज का समग्र जीवन धड़कता हुआ महसूस किया जा सकता है। समकालीन हिंदी नाटक की स्थिति बहुत उत्साहजनक नहीं है। डॉ.गिरीश रस्तोगी के इस निष्कर्ष में यह उत्साहीनता और निराशा स्पष्ट झलक रही हैः ''चारों ओर रंगमंचीय गतिविधियां खास कर शौकिया रंगमंच गतिहीन है। नाट्यलेखन और रंगमंच में जो संवाद टकराहट, उत्साह, प्रतिक्रियाएं अपेक्षित है, वह नितांत प्रसुप्त है।''[6]

इस युग में लक्ष्मीनारायणलाल परिगणनीय हैं। उनका पहला नाटक 'अंधा कुआ' 1956 में प्रकाशित हुआ था। तब से लेकर जीवन के अंतिम दिनों तक वे नाट्य रचना और रंगमंच दोनों में बराबर सक्रिय रहे हैं। उनके 'नया तमाशा' (1982) 'शुरू हो गया नाटक' (1983), 'बलराम की तीर्थ यात्रा' (1983), 'मन्नू' (1984) आदि प्रकाशित हुए हैं।

इसी कालावधि में अमृतलाल नागर का 'चढ़त न दूजो रंग' (1982), के नाम से प्रकाशित हुआ है। उनका यह नाटक सूरदास के जीवन पर आधारित है।

इस काल में खूब सक्रिय रहने वाले का नाटककार सुरेन्द्र वर्मा है। 1972 में 'द्रोपदी' शीर्षक नाटक से नाट्यरचना में रत होने के बाद वे निरतंर नाट्यरचना करते रहे हैं। उनके प्रमुख नाटकों में 'छोटे सैयद–बड़े सैयद'(1982), 'एक दूनी दो'(1987), 'शकुंतला की अंगूठी' (1990), 'कैद ए हयात' (1993) आदि है।

सुरेन्द्र वर्मा के ही समकालीन नाटककार डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली है। इनके प्रमुख नाटकों में 'लहर–लहर मधुपर्क' (1970), 'सूत्रधार' (1970), 'अमृत धूले हाथ'(1983), 'हम नचिकेता' (1983), 'ध्रुवश्री' (1984), 'उत्सर्ग' (1985), 'सुनहरे सपनों के अंकुर' (1985), 'सुखी परिवार' (1986), 'दायरे' (1987), 'नींव के स्वर'

(1991) आदि हैं। इनका 'ध्रुवश्री' नाटक रंगमंच पर सफलतापूर्वक अनेक बार मंचित हुआ है।

बीसवीं शताब्दी के आठवें दशक में ही शंकर शेष एक महत्त्वपूर्ण नाटककार के रूप में उभरकर सामने आये। उन्हें 'एक ओर द्रोणाचार्य' (1977) से विशेष ख्याति मिली। उनके 'रक्तबीज' (1982), 'खजुराहों का शिल्पी'(1982), 'बाढ़ का पानी'(1983), 'आधी रात के बाद' (1983), 'पोस्टर' (1983), चेहरे (1983) आदि नाटक प्रकाशित हुए हैं।

इस कालावधि में एक नाटककार के रूप में महत्त्वपूर्ण स्थान भीष्म साहनी का है। उनके नाटक 'हानूश' (1977), 'कबिरा खड़ा बाजार में' (1981), 'माधवी' (1984), 'मुआवजे' (1993) प्रकाशित हुए।

जैसे साहित्य की अन्य विधाओं में वैसे ही नाटक के क्षेत्र में भी एक विशेष बात सामने आयी है। यह विशेष बात है कि नाट्य लेखन में लेखिकाओं को प्रवृत्त होना।

मन्नू भंडारी कथाकार के रूप में छठे दशक में उभर कर सामने आयी। उनका पहला नाटक 'बिना दीवारें के घर' (1965) में सामने आया। उनका दूसरा नाटक 'महाभोज'(1982) है। इसमें उन्होने समकालीन राजनीति की मूल्यहीनता का नंगा चित्र उपस्थित किया है।

मृदुला गर्ग ने कथा साहित्य के साथ–साथ नाट्यलेखन में भी अपनी विशिष्ठ पहचान बनाई है। उनका पहला नाटक 'एक और अजनबी' 1978 में प्रकाशित हुआ। उसके बाद 'जादू का कालीन' 1993 में और ' तीन कैदें' 1996 में प्रकाशित हुआ। इनके सभी नाटकों में विभिन्न संदर्भों में स्त्री–पुरुष संबंध ही केंद्रीय नाट्यवस्तु के रूप में प्रस्तुत हुए हैं।

इसी कालावधि में नाटककार के रूप में मृणाल पांडे भी उभर कर सामने आयी है। उनके नाटक 'मौजूदा हालात देखते हुए' (1979), 'जो राम रचि राखा' (1981), 'आदमी जो मछुआरा नहीं था' (1985), 'काजर की कोठरी' (1985), 'चोर निकलकर भागा', 'मुक्ति कथा' आदि है।

इस कालावधि के नाटककारों ने अपने नाटक के लिए कथानक का चयन वर्तमान जीवन के साथ–साथ इतिहास, पुराण,स्वदेशी–विदेशी आदि से किया है। सभी नाटककारों ने वर्तमान की समस्याओं को अतीत से जोड़ा है। डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली के सभी नाटक अतीत जीविता के साथ वर्तमान से संबंद्ध है।

संदर्भ ग्रंथ :–

1. भरतमुनि – 'नाटयशास्त्र' १ । ११–२२ ।
2. डॉ.राधेश्याम वाजपेयी – हिंदी नाट्य कला तथा रेडियो नाटक, अटलांटिक पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली,पृष्ठ – 6
3. डॉ.नगेन्द्र – आधुनिक हिंदी नाटक, पृष्ठ – 2
4. डॉ.नगेन्द्र – हिंदी साहित्य का इतिहास,मयूर पेपर बैक्स,ए–95,सेक्टर–5,नौएडा,पृष्ठ – 457
5. वही
6. डॉ. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी – बीसवीं सदी का हिंदी साहित्य,पृष्ठ 160

अध्याय – 3

डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली के नाटक : परिचय

अध्याय–3 डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली के नाटक : परिचय

साहित्य की प्रत्यक्ष और सामाजिक विधा के रूप में नाटक विभिन्न स्तर के व्यक्तियों को समवेत रूप में प्रभावित करने में सक्षम होता है, नाटक रंगमंचीय कला है। श्रव्य की अपेक्षा दृष्यत्व इसकी विशेषता है। पंचोली जी ने हिंदी नाटक को एक नई दिशा प्रदान की है। कथानक हो या भाषा शैली, पात्र संयोजन हो या प्रस्तुतीकरण इन्होने हिंदी नाटकों की विधा से सर्जना के नये आयाम खोजे हैं। इनके नाटक हिंदी नाट्य लेखन को एक नई संवेदना एवं नवीन युग बोध से परिचित कराते हैं। इनके नाटक ऐतिहासिक नाटक हैं किंतु इनके ऐतिहासिक नाटक भी पूर्णतया ऐतिहासिक नहीं वरन् इनमें भी आधुनिक युग बोध का चित्रांकन हुआ है।

पंचोली जी के नाटक अतीत के पट पर वर्तमान का चित्र प्रस्तुत करने वाले ऐसे नाटक हैं जिसमें कथानक भले ही इतिहास से लिया गया हो पर उनमें वर्तमान समस्याओं को ही प्रस्तुत किया गया है। भारतीय संस्कृति से उन्हे प्रेम है तथा देश प्रेम की भावना से ओतप्रोत है। राष्ट्रीयता की भावना, अतीत गौरव की अभिव्यक्ति, आदर्श नारी पात्रों की परिकल्पना, सामाजिक समस्याओं की अभिव्यक्ति, उदात्त मानवीय मूल्यों की स्थापना पंचोली जी के नाटकों की मूल विशेषताएं हैं। पंचोली जी के नाटकों का परिचय अग्रलिखित है–

3.1 लहर–लहर मधुपर्क –

यह ऐतिहासिक नाटक है। यह साहित्यकार का प्रथम नाटक है। इसका प्रकाशन 1970 ई. में हुआ। पौरुष और कल्याणी इस नाटक के मुख्य पात्र है। अलक्ष्यदल (एलेक्जेंडर) पौरुष की शीलता के सामने नतमस्तक हो जाता है। इसी घटना को आधार मानकर पंचोली जी ने यह नाटक लिखा।

लहर–लहर मधुपर्क नाटक की कथा वस्तु पाँच अंकों में विभाजित है। कथा का आरंभ पौरुष की अज्ञात आशंका के साथ होता है। कल्याणी उसकी आशंका का कारण पूछते हुए उसे मन को विचलित न करने के लिए

समझाती है। पौरुष उसको तक्षशिला गुरुकुल में आंभी के मिलने की सूचना देता है। कल्याणी पौरुष को आंभी की बातें बताते हुए कहती है कि उसकी डरावनी मुखाकृति और वह प्रणय निवेदन जिसे मैंने ठुकरा दिया था,यह सब मुझे याद है। पौरुष उसको बताता है कि आंभी उसे अभी तक भूल नहीं पाया है और उसे पाने के लिए कुचक्र तो रच ही रहा है साथ ही उसने पश्चिमी गांधार में लूटमार मचा रखी है। पौरुष मातृभूमि की रक्षा का दायित्व अपने ऊपर ले लेता है।

कल्याणी सभी स्त्रियों को बुलवाती है और अपनी कटारी निकालकर उसकी धार देखती है, किन्तु उसी समय एक आगंतुक उसे आत्महत्या न करने के लिए कहता हैं आगंतुक अलक्ष्यदल की प्रशंसा करते हुए उसे पौरुष से अधिक शक्तिशाली मानता है। वह कल्याणी को अपनी अंकशायिनी बनाना चाहता है। कल्याणी उसको बताती है कि वो आत्महत्या नहीं कर रही थी वो कटारी की धार देख रही थी ताकि उसके जैसे दृष्कृत्य करने वाले को मौत के घाट उतार सकें। कल्याणी कटारी लेकर उसे मारने के लिए आगे बढ़ती है तो वह डर कर भाग जाता है। उसके बाद कल्याणी सभी स्त्रियों को आने वाले संकट के लिए आगाह करते हुए उन्हें शस्त्र प्रयोग करना सिखाती है।

अलक्ष्यदल के सैनिक वितस्ता नदी पार नहीं कर पाते हैं। फुल्लप उनको खबर देता है कि इन सबके पीछे स्त्री सेना का हाथ है, किंतु किसी को उसकी बात पर विश्वास नहीं होता है। अलक्ष्यदल सैनिकों को रात में ही नदी पार करने के लिए कहता है, किंतु दो स्त्रियां उनके लिए बाधा डालने के लिए तैनात रहती है। सैनिक स्त्रियों को देखकर विचलित होने लगते हैं। दोनों स्त्रियां अपनी चतुराई से सैनिकों को मार्ग से गुमराह करते हुए उन्हे उत्तर की ओर भेज देती है। फुल्लप द्वारा एक स्त्री को छेड़ने पर तीरों की बौछार होने लगती है। फुल्लप डरकर अलक्ष्यदल के पास जाकर तीरों की बौछार के बारे में बताता है। दोनों मिलकर सेना को उसी तरफ भेज देते हैं जिस तरफ स्त्रियों ने कहा था। एक स्त्री अलक्ष्यदल को चुनौती देकर चली जाती है। प्रदीक्ष अलक्ष्यदल को भागने के लिए कहता है और यह भी बताता है कि हमारे सैनिक तीरों की बौछार से हताहत हो गये हैं, किन्तु अलक्ष्यदल भागने से मना कर देता है।

अग्रसेन का पुत्र शत्रुंजय सैनिक रूप में पौरुष की सहायता करता है और बताता है कि उसकी सेना की एक टुकड़ी दुश्मन को रोकने के लिए तैनात है। वह पौरुष को बताता है कि आपकी व्यस्तता के कारण महारानी ने वहां का भार संभाल रखा है। उसी समय आचार्य विष्णुगुप्त आते है और पौरुष की अंहवृति पर व्यंग्य करते है, क्योंकि पौरुष ने शत्रुंजय की सहायता लेने से इंकार कर दिया था। पौरुष माफी मांगता है। शत्रुंजय द्वारा यह बताने पर कि नदी किनारे की सुरक्षा का भार स्त्री सेना ने संभाल रखा है तो उसे बहुत आश्चर्य होता है। कल्याणी पौरुष को अलक्ष्यदल से सामना करने के लिए कहती है। कल्याणी दोनों को टीका लगाकर युद्ध के लिए विदा करती है।

अलक्ष्यदल अपनी पराजय और स्वयं द्वारा किये गये अत्याचारों के बारे में सोचता है। आंभी अलक्ष्यदल से मिलने आता है, किंतु अलक्ष्यदल उसे देशद्रोही के नाम से पुकारता है तो आंभी को आश्चर्य होता है। अलक्ष्यदल आचार्य विष्णुगुप्त से क्षमा मांगता है। अलक्ष्यदल को सूचना मिलती है कि आंभी अपनी सेना लेकर अलग से गया है साथ ही उसे यह सूचना भी मिलती है कि आंभी को दो स्त्रियां पकड़कर ले गई है। अलक्ष्यदल फुल्लप को उनके पीछे भेजता है, किंतु फुल्लप को भी स्त्रियां पकड़कर ले जाती है। अलक्ष्यदल चारों तरफ से घिर जाता है। पौरुष अलक्ष्यदल के पास जाता है, तो अलक्ष्यदल आत्महत्या करने का प्रयास करता है। पौरुष उसको बचा लेता है और उसका सम्मान करता है। अलक्ष्यदल उसकी ऐसी नीति के सामने नतमस्तक हो जाता है साथ ही सारा दंभ समाप्त हो जाता है। पौरुष अलक्ष्यदल की जय–जयकार करते हुए उसे विजयी घोषित करता है। अलक्ष्यदल चाणक्य के चरण छूता है, किंतु चाणक्य उसे भारत भूमि के चरण छूने के लिए कहता है। अलक्ष्यदल भारतभूमि की धूल को माथे पर लगाकर उसको प्रणाम करता है।

प्रदीक्ष दांड्यायन को बताता है कि आपके द्वारा दिये गये जल से अलक्ष्यदल का अश्व ठीक हो गया है। शत्रुंजय दांड्यायन को सूचना देता है कि आंभी को घेर लिया गया है और उसे क्या उचित दंड दिया जाय यही पूछने के लिए मुझे आपके पास भेजा गया है। दांड्यायन उसे रानी के पास ले जाने के लिए कहता है। सारी स्त्रियां और रानी कल्याणी दांड्यायन से आशीर्वाद लेकर तीज का त्योहार

मनाने चली जाती है। पौरुष अपनी संपूर्ण शक्ति को राष्ट्र के लिए समर्पित कर देता है। अलक्ष्यदल को आतुरालय (चिकित्सालय) में काम संभालने के लिए कहा जाता है।

इस प्रकार से यह सुखांत नाटक है।

3.2 सूत्रधार –

यह पौराणिक नाटक है। इसका प्रकाशन 1970 ई.में हुआ। इस नाटक में सत्यभामा के पुण्यक व्रत का उल्लेख किया गया है। इस नाटक में महर्षि घोर आंगीरस के महिमा मंडित व्यक्तित्व की झांकी दिखाई गई है। इस नाटक में बूढ़े पारिजात वृक्ष को काटकर पारिजात का नया पौधा लगाना प्रतीक है पुराने युग की समाप्ति व नये युग के श्री गणेश का। इस नाटक में महाभारत युद्ध के सूत्रधार के रूप में श्री कृष्ण को प्रस्तुत किया गया है।

सूत्रधार नाटक की कथावस्तु का विस्तार तीन अंको में हुआ है। नाटक का आरंभ सत्यभामा के संवाद से होता है। सत्यभामा पारिजात वृक्ष को काटने का आदेश देती है। यह वही पारिजात वृक्ष है जो सत्यभामा के आग्रह पर वासुदेव इंद्र के नंदन वन से लाये थे। रानी रुक्मिणी को इस बात का पता चलता है तो वह वृक्ष को काटने से मना कर देती है। सत्यभामा पारिजात का बाल पौधा लगाती है, किंतु वह पीला पड़ जाता है। उधर रुक्मिणी पारिजात वृक्ष के काटे जाने की बात वासुदेव को बताती है तो उनको आश्चर्य होता है। घोर आंगीरस वासुदेव से कहता है कि पारिजात सूख गया और इसे काटना ही उचित है। तब वासुदेव कहते हैं कि यह देव वृक्ष है, यह कैसे सूख गया, तो आंगीरस बताते हैं कि यह सत्यभामा की ईर्ष्या का ही परिणाम है। यह बात सुनकर सत्यभामा की आँखें खुल जाती है। अघोर भैरव सत्यभामा को अपराजित होने की औषधि लाकर देता है, किंतु वह रुक्मिणी को देने को कहती है। रुक्मिणी उसे बाल पारिजात के पौधे में गाड़ देने के लिए कहती है ताकि वह खाद बन जायें।

अर्जुन व दुर्योधन वासुदेव से मिलने आते हैं, किंतु वासुदेव पदचाप की ध्वनि सुनकर लेट जाते हैं। दुर्योधन वासुदेव के सिर के पास और अर्जुन उनके पैरों के पास बैठकर उनके जगने की प्रतीक्षा करते हैं। वासुदेव जागने पर अर्जुन को देखकर उसके आने का प्रयोजन पूछते हैं, किंतु दुर्योधन पहले आने की बात

करता है, तब वासुदेव ने कहा कि उन्होने पहले अर्जुन को दखा है, अतः वह पहले अपनी बात कहेगा। अर्जुन व दुर्योधन दोनों का उद्देश्य एक ही था, वासुदेव को युद्ध के लिए आमंत्रित करना। वासुदेव एक तरफ अपने आपको रखते हैं और दूसरी तरफ अपनी ग्यारह हजार अक्षोहिणी सेना को। अर्जुन वासुदेव को चुनता है और दुर्योधन सेना पाकर अत्यंत खुश होता है।

पारिजात का बाल पौधा अब फलने लगता है और उस पर कली खिल जाती है। सत्यभामा अपने पुण्यक व्रत का उद्यापन करते हुए वासुदेव को आंगीरस को दान कर देती है। वासुदेव युद्ध के लिए प्रस्थान करते हैं। दोनों रानियां वासुदेव के तिलक लगाकर विजय कामना के साथ उनको युद्ध के लिए विदा करती हैं। इसी के साथ कथा समाप्त हो जाती है।

3.3 अमृत धुले हाथ–

ऐतिहासिक संदर्भों को लिए हुए यह काल्पनिक नाटक है। इस नाटक का प्रकाशन 1983 ई. में हुआ। महाभारत युद्ध के बाद ज्ञान–विज्ञान की सभी प्राचीन परम्पराएं नष्ट हो गई। शाकटायन और उसकी पुत्रवधू जया द्वारा इन समस्याओं का समाधान खोजा गया। इस नाटक में 'अर्जन' और 'समर्पण' का स्वर है।

इस नाटक की कथा वस्तु पाँच अंको में विस्तृत हैं। कथा का प्रारम्भ शाकटायन और उसकी पुत्रवधू जया के वार्तालाप से होता है। जया का पुत्र जयंत आठ वर्ष की अवस्था में लापता हो जाता है। शाकटायन जयंत के बारे में सोचता है कि उसका पौत्र अठारह वर्ष का हो गया होगा। श्रीविजय, जया और शाकटायन आचार्य सांदीपनि के बारे में बातें करते हैं। श्रीविजय शाकटायन से उनका उद्देश्य पूछता है तो शाकटायन गंभीर हो जाते हैं। श्रीविजय का प्रश्न शाकटायन को झकझोर देता है, उनकी सांस फूलने लग जाती है। जया वैद्यराज को बुलाने जाती है, किंतु वैद्यराज के आने से पहले ही शाकटायन पहले से अधिक स्वस्थ हो जाते हैं। शाकटायन की आत्म शक्ति देखकर सबको आश्चर्य होता है।

सिद्धनाथ और शुकदेव शिक्षा प्राप्त करने के लिए शाकटायन के आश्रम में आते हैं। कुशलभोज दोनों को लेकर गुणाकर के पास जाता

है और उनका परिचय कराता है। गुणाकर इसकी सूचना शाकटायन को देता है। चारों मिलकर देश के भविष्य के बारे में बातें करते हैं। जया श्रीविजय से प्रश्न करते हुए पूछती है कि वह अध्यापन और प्रशासकीय पद दोनों में से किसे चुनेगा ? श्रीविजय जया को उत्तर देता हुआ अध्यापन को चुनने की बात कहता है। जया उसका उत्तर पाकर प्रसन्न होती है और कुशलभोज, गुणाकर व श्रीविजय को आशीर्वाद देते हुए शक्ति अर्जन और धनार्जन की शिक्षा देती है। जया तीनों को समय का महत्त्व बताते हुए कहती है कि सशक्त नागरिकों से ही सुदृढ़ राष्ट्र का निर्माण होता है।

पारसीक सम्राट धैर्यबाहु ने अवंती की राज्य परिषद के पास एक पहेली भेजी है। धैर्यबाहु की पहेली का उत्तर न मिल पाने से उज्जयिनी नागरिकों में हलचल मची हुई है। राजनीति के संबंद्ध में दो नागरिक वार्तालाप करते हुए कहते हैं कि ऐसे कुलवृद्धों को निकाल बाहर करना चाहिए, जिन्हे देश की चिंता नहीं है। दोनों नागरिक इस बात की शिकायत कुशलभोज से करते है। आचार्य शाकटायन नवनिर्माण की खोज में लगे हैं। शाकटायन पहेली का उत्तर देते हुए जोर से बोलते रहते हैं। सभी नागरिक पहेली का उत्तर पाकर प्रसन्न होते हैं।

वसुमित्र द्वारिकापुरी के समुद्र में विलीन होने और वासुदेव के न रहने की सूचना शाकटायान के आश्रम में देता है। वसुमित्र का यह समाचार सुनकर गुणाकर, कुशलभोज और शाकटायन क्षुब्ध हो जाते हैं। तीनों देश के भाग्य को लेकर चिंतित हो जाते हैं। जया सबका होंसला बुलंद करते हुए शाकटायन से कहती है कि बिना राजा के प्रजा नष्ट हो जायेगी। गुणाकर और वसुमित्र अर्जन और समर्पण की तैयारी करते हैं।

कुशलभोज एक युवक को पकड़कर शाकटयान के पास ले आते हैं जो कि बहुत दुखी रहता है। वह युवक यदुकुल की स्त्रियों पर बुरी नजर डालने वालों को तलवार से नष्ट कर देता है। जया और शाकटायन युवक को पहचानने की कोशिश करते हैं। शाकटायन युवक को पहचान जाते हैं, वह उनका पौत्र जयंत होता है। सब उससे मिलकर प्रसन्न होते हैं, किंतु जयंत अपने आपको अपराधी मानता है। शाकटयान उसको समझाते हुए कहते हैं कि बुराई की जड़ को खत्म करने वाले के हाथ अमृत से धुले होते हैं। शाकटायन जयंत को राष्ट्र को समर्पित कर देते हैं।

गुणाकर और शाकटायन मातृभूमि की धूल उसके माथे पर लगाकर उसको राष्ट्र सेवा का दायित्व सौंपते हैं।

3.4 हम नचिकेता –

यह एक आधुनिक नाटक है। इसका प्रकाशन सन् 1983 ई. में हुआ। औद्योगिक और यांत्रिक क्रांति के बाद पश्चिम में मानवीय संबंधों में जो असामयिक अभूतपूर्व रागहीनता दिखाई दे रही है, उससे पीड़ित, कुंठित नवयुवकों के लिए तो भारत का अध्यात्मनिष्ठ दृष्टिकोण जीवन के सारे मानसिक तनाव जनित रोगों की संजीवनी प्रमाणित हो रहा है। इसीलिए शांति और संतोष की खोज में कितने ही नवयुवक और नवयुवतियां भारत में आ रहे हैं। कुछ उन्हे विदेशी जासूस कह कर तिरस्कृत करते हैं, तो कुछ उन्हे योग–साधना के नाम पर मर्यादाहीन भ्रष्ट–आचरण का पाठ पढ़ाते हैं। इस नाटक में क्रिस्टोफर(गोपाल), क्रिस्टीना(मीरां), नंदू और जसोदा के द्वारा इस विषय को स्पष्ट किया गया है।

भारतीय जीवन दर्शन की सहजता का आधार उसकी संवेदनशीलता है, हार्दिकता है। श्रद्धा, प्रेम, स्नेह, वात्सल्य, आदि इसी संवेदनशीलता के नाम है। इसे अनुकरणीय माना जा सकता है। जब तक ऐसी संवेदनशीलता जीवन में नहीं जागेगी तब तक मनुष्य की प्रतिष्ठा मनुष्य की तरह नहीं होगी। समसामयिक जीवन की एक समस्या को लेकर इसी प्रकार का समाधान इस नाटक में प्रस्तुत किया गया है।

'हम नचिकेता' नाटक का विस्तार तीन अंकों और नौ दृश्यों में हुआ है। क्रिस्टीना फ्रांस की घुटन भरी जिंदगी से तंग आकर भारत में आती है और यहां एक भवन में ठहरती है। क्रिस्टीना इसी भवन में अमेरिका से आये हुए क्रिस्टोफर, जो भारत में आकर अपना नाम गोपाल रख लेता है, से मिलती है। दोनों का एक दूसरे से परिचय होता है। गोपाल क्रिस्टीना के चाहने पर उसका भारतीय नाम मीरां रख देता है। दोनों अपने–अपने देश की घुटन भरी जिंदगी से तंग आकर भारत में रहना पसंद करते हैं। गोपाल हिंदी में बात करने का आग्रह करता है। वह मीरां को भारत में प्रचलित नचिकेता की कहानी सुनाता हुआ कहता है कि हम नचिकेता हैं। मीरां कहानी सुनकर गोपाल को बताती है कि जन्म–मरण के शुन्य को जानने की प्यास ही हमें भारत ले आई है।

गोपाल 'हरे राम हरे कृष्ण' बोलता है तो मीरां दोनों के बारे में पूछती है। गोपाल मीरां को बताता है कि सृष्टि का रमणीय तत्त्व राम है और आकर्षक तत्त्व कृष्ण है। दोनों इस देश के महान सांस्कृतिक पुरुष है। मीरां को भारतीय प्रतिष्ठा पर आश्चर्य होता है। मीरां और गोपाल दोनों एक दूसरे को भारतीय ठहराते हैं। गोपाल मीरां को अपने यहाँ रहने के लिए कहता है।

प्रमोद और उर्मिला गोपाल और मीरां से मिलने आते हैं साथ ही अपने देश भारत की बुराई करते हैं। गोपाल उनको भारत की उपयोगिता के बारे में बताता है, किंतु प्रमोद और उर्मिला के दिमाग पर पाश्चात्य संस्कृति का ही भूत सवार रहता है। वे दोनों भारत में विदेशी संस्कृति का वातावरण बनाना चाहते हैं। एक्साइज इंसपेक्टर गोपाल के घर की तलाशी लेने आता है किंतु उसे वहां भगवान राम और भगवान कृष्ण की तस्वीरों के अलावा अलमारी से कुछ नहीं मिलता है। वह माफी मांग कर चला जाता है।

मीरां शिवानंद के आश्रम में सिद्धि प्राप्त करने जाती है, किंतु उसका शिष्य उसके साथ बदतमीजी करता है। मीरां उसकी शिकायत शिवानंद से करती है। शिवानंद उसे दो विजया की गोलियां देता है और जबरदस्ती चिलम भी पिलाता है, ताकि वह उसे बेईज्जत कर सकें, किंतु गोपाल सही समय पर आकर उस आश्रम और उसके ढोंगी होने की पोल खोल देता है। वह वहाँ से मीरां को बचा लेता है।

प्रमोद मीरां से फ्रांसीसी संस्कृति के बारे में जानने के लिए आता है, किंतु मीरां उसे फटकारती है। प्रमोद मीरां को फ्रांस ले जाना चाहता है, किंतु मीरां की इच्छा भारत को छोड़ने की नहीं है इसलिए प्रमोद उसे भारत की बहू बनने के लिए कहता है और उसके नजदीक जाता है किंतु मीरां उसका मंतव्य समझते हुए उसे वहां से जाने के लिए कहती है। गोपाल उर्मिला के साथ शहर से बाहर घूमने जाता है और एक वृद्ध से उसके परिवार के बारे में पूछता है। गोपाल वृद्ध से परिवार और गृहस्थी का मतलब समझता है। उर्मिला उनकी बातों से बोर हो जाती है और गोपाल पर व्यंग्य कसती है। गोपाल उसे समझाता है परंतु उर्मिला को तो अमेरिकी संस्कृति से लगाव रहता है।

कुछ गुंडे गोपाल को मारते है, किंतु जसोदा नाम की महिला उसे बचा लेती है। वह गोपाल को अपने घर ले आती है। जसोदा गोपाल की सेवा करती है। गोपाल को तीन दिन बाद होश आता है तो वह उसकी निःस्वार्थ भावना को देखकर आश्चर्यचकित हो जाता है। वह जसोदा को माँ कहकर पुकारता है। गोपाल उससे मीरां के बारे में पूछता है तो वह बताती है कि मीरां रोज तुम्हे देखने आती है। वह सूरदास के पास सुरक्षित है। जसोदा का पति नंदू गोपाल से मीरां और उसके संबंध के बारे में पूछता है तो वह उत्तर देता है कि मीरां उसकी मंगेतर नहीं है, वह तो ऐसे ही उसके साथ रहती है। तब जसोदा और नंदू दोनों उसकी शादी मीरां के साथ करवाना चाहते हैं। जसोदा सूरदास से मीरां के बारे में पूछती है तो सूरदास बताता है कि वह गुणी और सुशील है बिल्कुल भारत की मीरां की तरह।

जसोदा सूरदास को मीरां का कन्यादान करने के लिए कहती है। वह इसके लिए तैयार हो जाता है। गोपाल व मीरां से शादी के बारे में पूछा जाता है तो दोनों एक–दूसरे को पसंद करते हैं इसलिए सहर्ष तैयार हो जाते हैं। सूरदास मीरां का कन्यादान कर देते हैं। दोनों शादी के बाद बातें करते हैं कि शायद यही वह सूख है जिसके खातिर हमने देश छोड़ा था। यहाँ अपनों से भी ज्यादा स्नेह मिल रहा है।

सूरदास अपनी बेटी मीरां से मिलने आता है। मीरां उसे खाने पीने के लिए पूछती है, किंतु धर्म के अनुसार वह बेटी के घर का पानी तक नहीं पीता है। मीरां सूरदास से कहती है कि वह यहाँ बहुत खुश है।

सूरदास जसोदा को सोने की नसैनी चढ़ने के लिए कहता है। जसोदा मीरां को यह बात ध्यान में रखने के लिए कहती है, तो गोपाल उससे इस बारे में पूछता है। मीरां उसे संकोच पूर्वक बताती है कि वे सब नाती का मुँह देखकर सोने की सीढ़ी से स्वर्ग जाना चाहतें हैं। गोपाल उसे तैयारी के लिए कहता है तो वह शरमा जाती है।

जसोदा गोपाल से कहती है कि उसके पिता (नंदू), और ससूर(सूरदास) कुंभ स्नान के लिए जाना चाहते हैं। गोपाल अपनी मां(जसोदा) को भी जाने को कहता है, किंतु वह कहती कि गृहस्थी कौन संभालेगा? गोपाल सारी

जिम्मेदारी अपने उपर लेता है। जसोदा बहू(मीरां) को अवाज लगाकर कहती है कि वे कुंभ स्नान के लिए जायेंगे, मीरां खांसकर उसकी बात का जवाब देती है।

3.5 ध्रुवश्री –

'ध्रुवश्री' प्रेरणास्पद ऐतिहासिक नाटक है। इसका प्रकाशन सन् 1984 ई. में हुआ। इस नाटक में राष्ट्रीय भावना से युक्त ध्रुवश्री को एक कर्मठ देशप्रेमी एवं वीरांगना के रूप में चित्रित किया गया है। नारी सम्मान एवं मर्यादा से युक्त ध्रुवश्री का चरित्र अद्‌भुत साहस का चरित्र है। वह पुरुष वेश में रहती है। जिन गुणों के कारण एक पुरुष राष्ट्र पुरुष बन सकता है, उन्ही गुणों को धारण करने पर एक नारी भी राष्ट्रीय नारी का स्थान प्राप्त कर सकती है। इस नाटक में कलिंग नरेश खारवेल ध्रुवश्री की राष्ट्रभक्ति और उसकी बहादुरी का कायल हो जाता है। ध्रुवश्री ने विघटनकारी तत्त्वों को समाप्त करते हुए राष्ट्र एकता को बनाये रखा है। राष्ट्र की भावात्मक एकता का एक सांस्कृतिक आधार नाटक में निहित है।

ध्रुवश्री नाटक की कथावस्तु स्त्री अस्मिता की कहानी है। नाटक का विस्तार तीन अंकों और सोलह दृश्यों में है। नाटक का प्रारंभ बृहद्रथ और सुदत्त के वार्तालाप से होता है। सुदत्त राज्य की सुरक्षा के लिए खारवेल को आमंत्रित करता है। खारवेल दूत के वेश में आता है, परंतु बृहद्रथ और सुदत्त उसे नहीं पहचान पाते है। ध्रुवश्री भी पुरुष वेश में आती है और कलिंग नरेश खारवेल को राष्ट्रीयता का पाठ पढ़ा देती है। बृहद्रथ की हत्या हो जाती है। सारी प्रशासनिक शक्तियां सेनापति पुष्यमित्र अपने हाथ में ले लेता है। ध्रुवश्री नगर के मध्य बात कर रहे नागरिकों को बताती है कि दैमैत्रेय ने दस हजार मगध सुंदरियों और सुदत्त की पुत्री मणिप्रभा की मांग की है। वह यह भी बताती है कि थोड़ी देर बाद इसी वीथी से मणिप्रभा की पालकी जायेगी यदि प्रतिष्ठा बचाना चाहते हो तो बचा लो। नागरिक प्राण–प्रण से बचाने की बात कहते हैं।

ध्रुवश्री रात्रि को पुष्यमित्र के पास आती है और कहती है कि उसकी धर्म बहिन धारिणी पर संकट है, इसे आप अपने पास धरोहर के रूप में रखें। वह चली जाती है। सुदत्त पुष्यमित्र के पास आता है और अपनी पुत्री मणिप्रभा को कोई शिविका से उठाकर ले गया है यह बताता है।

पुष्यमित्र दैमैत्रेय व खारवेल के आक्रमणों का सामना करने के लिए अर्थात राष्ट्र रक्षा के लिए अश्वमेध यज्ञ की घोषणा करता है। राजपुरोहित द्वारा यज्ञ की सुचारू व्यवस्था की जाती है। अग्निमित्र को अश्वमेध यज्ञ के घोड़े की सुरक्षा का दायित्व सौंपा जाता है।

खारवेल ध्रुवश्री के कथनों से प्रभावित होकर पाटलिपुत्र पर आक्रमण करने का विचार त्याग देता है। अब वह पाटलिपुत्र को दैमैत्रेय के आक्रमण से बचाने के लिए गंगा के तट पर पड़ाव डाल देता है। दैमैत्रेय मित्रता की बात कहकर खारवेल को अपने पड़ाव में आमंत्रित करता है। किंतु ध्रुवश्री खारवेल को दैमैत्रेय की चाल बता देती है। युद्ध होता है, ध्रवुश्री खारवेल को बचाते हुए घायल हो जाती है। उसके पुरुष वेश में नारी होने का राज खुल जाता है। धारिणी उसकी सेवा व उपचार करती है। अग्निमित्र को खारवेल का उसके पक्ष में युद्ध करना आश्चर्यजनक लगता है और वह सोचता है कि इस बदलाव के पीछे जरूर कोई प्रेरणा शक्ति रही होगी।

खारवेल दैमैत्रेय को भारतभूमि से भगाने में सफल हो जाता है। षड़यंत्रकारी सुदत्त पकड़ा जाता है। ध्रुवश्री अपनी मुंहबोली बहिन धारिणी और अग्निमित्र के परिणय बंधन की बात करती है। पुष्यमित्र सहर्ष इसे स्वीकार कर लेता है। ध्रुवश्री पुष्यमित्र को बताती है कि धारिणी ही सुदत्त की पुत्री मणिप्रभा है। युद्ध पूरी तरह समाप्त हो जाता है। खारवेल पुष्यमित्र से ध्रुवश्री का हाथ माँगता है। अब वह पाटलिपुत्र का शत्रु नहीं अपितु मित्र बन जाता है। पुष्यमित्र अपनी उदार प्रवृत्ति के कारण सभी षड़यंत्रकारियों को क्षमा कर देता है।

3.6 उत्सर्ग –

यह एक ऐतिहासिक नाटक है। इस नाटक का प्रकाशन सन् 1985 ई. में हुआ। स्वातंत्र्योत्तर हिंदी नाटकों की शृंखला में एक महत्तवपूर्ण कड़ी के रूप में यह नाटक है। वर्तमान में राष्ट्र में विघटनकारी शक्तियां बढ़ती जा रही है। राष्ट्रीय व्यक्तित्व के विकास के लिए जीवन के एक उदात्त दृष्टिकोण को लोक जीवन में प्रतिष्ठापित करने की आवश्यकता बनी हुई है। इतिहास के संदर्भ में ऐसे जीवन–दर्शन की व्याख्या प्रस्तुत करना ही इस नाटक का उद्देश्य है। इस नाटक में भीमदेव और इच्छिनी को राष्ट्र के प्रति त्याग का प्रतीक बताया गया है।

नाटक का विस्तार तीन अंको और पन्द्रह दृश्यों में हुआ है। कथावस्तु का आरंभ भीमदेव के परमार पुत्री इच्छिनी पर आसक्त होने से होता है। इच्छिनी को पाने हेतु भीमदेव अपने मित्र अमरसिंह को जैतसिंह परमार पर चढ़ाई करने के लिए कहता है। किंतु अमरसिंह उसे धैर्य बंधाते हुए स्वयं राजा परमार से बात करने की कहता है। वह जैतसिंह परमार के पास जाकर भीमदेव का प्रणय निवेदन बताता है, किंतु परमार नरेश अपनी पुत्री इच्छिनी का वाग्दान पृथ्वीराज चौहान के साथ कर देने के कारण मना कर देता है। अमरसिंह राजा परमार को उसकी पुत्री के हरण की चुनौती दे देता है। इस बात की सूचना इच्छिनी को मिलती है तो वह अत्यंत दुःखी हो जाती है। वह भीमदेव से प्रेम करती है, परंतु पिताजी की इच्छा का मान भी रखना चाहती है। अंततः वह पिता के प्रति अपने कर्तव्य का पालन करती है।

भीमदेव आक्रमण की तैयारी शुरू कर देता है। राजा परमार भी पृथ्वीराज को सेना सहित बुलवा लेता है। आचार्य देवबोधाचार्य भीमदेव को आने वाली राष्ट्रीय विपत्ति के बारे में बताते हुए उसे आक्रमण नहीं करने का सुझाव देते है। भीमदेव इच्छिनी के मन की बात जानने के लिए ब्राह्मण का वेश बनाकर परमार के महल में प्रवेश कर लेता है। राजकुमारी इच्छिनी ब्राह्मणों को भोजन करने का आग्रह करती है। वह भीमदेव को पहचान जाती है, उन्हें अंदर भोजन कराने के लिए ले जाती है। वह कुछ समय बाद मंदिर में मिलने की बात कहती है। भीमदेव निश्चित समय पर मंदिर पहुंच जाताहै। वह इच्छिनी को अपने साथ चलने के लिए कहता है। किंतु इच्छिनी पिता के प्रति अपने कर्तव्य को याद करते हुए भीमदेव को मना कर देती है। भीमदेव पुनः आने की कहकर चला जाता है।

राजकुमारी इच्छिनी के भाई सलख को भीमदेव के आने की खबर मिलती है। वह उसे ढूंढने का प्रयास करता है। वह पृथ्वीराज चौहान को सारी बात बताता है। पृथ्वीराज भीमदेव के बुद्धिकौशल व वीरता की प्रशंसा करता है। परमार नरेश इच्छिनी के विवाह और युद्ध दोनों की तैयारी कर लेता है। राजकुमारी की सखियां इच्छिनी को तैयार करती है, किंतु भीमदेव से प्रेम करने के कारण राजकुमारी को विवाह हेतु तैयार होना अच्छा नहीं लगता है। श्रृंगेरी पीठ के पीठाधीश देवबोधाचार्य दिल्लीपति और गुर्जरेश्वर को भारत की दो महान शक्तियाँ मानते हैं। इन दोनों शक्तियों

को एक करने का वो प्रयत्न करते हैं। यह बात राजकुमार सलख पृथ्वीराज चौहान को बताता है।

पृथ्वीराज और राजकुमारी इच्छिनी का विवाह होने लगता है, किंतु गुर्जरेश्वर भीमदेव वहां पहुंचकर विवाह रोक देता है और इच्छिनी का हाथ पकड़कर ले जाने लगता है। तभी देवबोधाचार्य वहां आते हैं और भीमदेव को रोक देते हैं। वह कहते हैं कि यह विवाह मेरे द्वारा दिए गए निर्देश पर ही हो रहा है। राष्ट्रीय एकता के लिए यह परमावश्यक है। वे कहते हैं हमारे राष्ट्र, घर, मन, सब बंटे हुए हैं इसका फायदा उठाकर कभी–भी कोई भी हमारे राष्ट्र का अहित कर सकता है। भीमदेव इच्छिनी से उसकी इच्छा पूछता है परंतु इच्छिनी चुपचाप रहती है। राष्ट्रीय एकता के लिए राजकुमारी इच्छिनी और भीमदेव अपने–अपने प्रेम का उत्सर्ग कर देते हैं। स्वयं भीमदेव इच्छिनी का हाथ पृथ्वीराज चौहान के हाथों में दे देता है।

3.7 सुनहरे सपनों के अंकुर–

यह एक ऐतिहासिक नाटक है। इस नाटक का प्रकाशन वर्ष 1985 ई. में हुआ है। संस्कृत का 'मृच्छकटिक' नाटक सामाजिक यथार्थ पर आधृत एक उच्च कोटि की कृति है। 'मृच्छकटिक' जहां समाप्त होता है, वहीं से प्रस्तुत नाटक का आरंभ होता है। जिनकी दिशाएं खो गई हैं, जो पीड़ित रह चुकें हैं, जो दमित और दलित जीवन बिता रहे हैं–ऐसे लोग परस्पर एक दूसरे की सहायता करते हुए आगे बढ़े तो वे समाज में ही नहीं, राजनीति में भी नवीन व्यवस्था को जन्म देते हैं और नवीन मापदंडों की स्थापना करते हैं। ऐसा ही सुंदर दृश्य इस नाटक में प्रस्तुत हुआ है। इस नाटक में उज्जयिनी राज्य का शासन भार अन्यायी एवं अदूरदर्शी राजा पालक के हाथों में था, किंतु समाज के साधारण लोगों न इस अन्यायी शासन के विरूद्ध आवाज उठाई और क्रांति कर दी। आर्यक को राजा बनाया गया। नाटक का वातावरण एक सफल राज्य क्रांति का है।

इस नाटक की कथावस्तु का विस्तार तीन अंकों में हुआ है। इस नाटक के अंतर्गत 'मृच्छकटिक' के पात्रों और उसके वातावरण का यथोचित उपयोग किया गया है। कथा का आरंभ हथकड़ियों और बेड़ियों से बंधे चारुदत्त से होता है। वह उज्जयिनी की नगरश्री वसंत सेना से प्रेम करता है। उसके प्रलाप को

संवाहक पहचान जाता है। संवाहक जब उसे बताता है कि वसंत सेना जीवित है तो वह खुशी से फूला नहीं समाता। रात्रि के अंधकार में चारुदत्त राजा आर्यक से मिलता है, किंतु दोनों एक–दूसरे को पहचान नहीं पाते हैं। मैत्रेय चारुदत्त से मिलता है और उसकी बेड़ियां काटने की बात करता है, किंतु आर्यक चारुदत्त को बंधन मुक्त कर देता है। चारुदत्त की पत्नी धूता व उसकी सेविका रदनिका दोनों चारुदत्त से मिलने के लिए वन में आती है। परंतु पालक का साला संस्थान रदनिका का अपहरण कर लेता है। आर्यक अपने पराक्रम से रदनिका को छुड़ा कर लाता है। चारुदत्त आर्यक की भी हथकड़ियां काट देता है। आर्यक अपना परिचय दिए बिना वहाँ से चला जाता है।

राज्य का सिंहासन खाली होने के कारण चारुदत्त सेनापति को आर्यक की खोज में भेजता है। चारुदत्त को सूचना मिलती है कि पालक शमशान की तरफ गया है और आर्यक को भी उधर जाते देखा गया है। चारुदत्त सेना की एक महत्त्वपूर्ण टुकड़ी को उधर आर्यक की सहायत के लिए भेजता है।

गुप्तचर आकर बताता है कि पालक को राजा बनाने में विदेशी व्यापारियों को हाथ है। उसी समय कुछ उपद्रवी चारुदत्त के घर की ओर जातें हैं और वसंत सेना को पकड़ना चाहते हैं। चारुदत्त की पत्नी धूता अपने बुद्धिकौशल से उपद्रवियों को शांत करती है। सभी उपद्रवी चारुदत्त से क्षमा मांगते हैं और अपना कर्तव्य पूछते हैं। चारुदत्त उन्हे राज्य की समृद्धि के लिए अपने कर्म करने का कर्तव्य बताते हैं।

वसंत सेना धूता को अपनी बड़ी बहन मानती है। वह धूता और चारुदत्त के पुत्र की स्वयं के पुत्र के समान देखभाल करती है। धूता वसंतसेना को अपनी सौत के रूप में स्वीकार कर लेती है। उसी समय आर्यक वहाँ आता है। दोनों उससे परिचय पूछती है तब पता चलता है कि यह राजा आर्यक है तो दोनों क्षमा याचना करती है। धूता रदनिका को बुलाती है और आर्यक का परिचय देती है। रदनिका उसके व्यक्तित्व से प्रभावित होती है। आर्यक बताता है कि अन्यायी पालक को मैंने मार दिया है। यह सुनकर सभी प्रसन्न होते हैं। अवंती का सेनापति शर्विलक आर्यक को पटरानी ढूंढने की बात कहता है तब आर्यक कहता है कि मैंने पत्नी के रूप में रदनिका का चयन किया है। यह सुनकर सभी प्रसन्न होते हैं। आर्यक चारुदत्त से रदनिका का हाथ

मांगता है। चारुदत्त सहर्ष इसे स्वीकार करता है और गले लगा लेता है। उसी समय वसंतसेना के गले का आभूषण टूट जाता है और उसमें से एक पत्र निकलता है जिस पर 'आर्यक' नाम लिखा होता है। तब पता चलता है कि वसंतसेना राजा आर्यक की बहिन है। सभी इस मिलन पर बधाई देते हैं।

3.8 सुखी परिवार –

यह एक प्रेरक प्रौढ़ोपयोगी नाटक है। इस नाटक में परिवार के महत्त्व को स्पष्ट किया गया है। इस नाटक में धन्य और गोपा मुख्य पात्र है, दोनों ही परिवार को विशेष महत्त्व देते हैं। सारा विश्व एक परिवार की तरह से जिए तो यह आदमी के लिए चरम सुख की स्थिति होगी। भगवान बुद्ध के माध्यम से इसी उद्‌देश्य को लेकर नाटक की रचना की गई है। इस नाटक का प्रकाशन सन् 1986 ई. में हुआ।

इस नाटक की कथावस्तु चार दृश्यों में विस्तृत हैं। नाटक का आरंभ धन्य के गाय दुहने के साथ होता है। धन्य का पड़ौसी श्रीकर, गोपा और धन्य को सूचना देता है कि भगवान बुद्ध उनके गाँव पधारें हैं। वह धन्य को दर्शन करके आने की बात कहता है। परंतु धन्य पहले गाय दुहने की बात कहता है। धन्य और श्रीकर भगवान के परिवार के बारे में बाते करते हैं। धन्य कहता है परिवार हमारे विकास की आधारभूत इकाई है। भगवान बुद्ध ने बड़े परिवार की कामना की है। भूतल के सारे सदस्य उनका परिवार है। भगवान बुद्ध कहते हैं बड़े परिवार के लिए छोटे सुख का त्याग करो। धन्य भगवान बुद्ध को भगोड़ा कहता है। वह कहता है अपने परिवार को बनाना भी बड़ा सुख है।

श्रीकर कहता है कि हमारे कृषि–प्रधान देश में गाय ही धन है। वह परिवार का ठोस आर्थिक आधार है। गो के साथ हमारा भावात्मक संबंध है। धन्य कहता है कि दुनिया को सुधारना हो तो परिवार को सुधार लो। परिवार में पत्नी ही घर को बांध के रखती है। ऐसा अच्छा घर हो तो महात्मा और भगवान दोनों आते हैं।

धन्य की पत्नी गोपा व पड़ौसिन कमला दोनों घर परिवार के सुख दुख की बातें करती है। गोपा परिवार के लिए किए गए परिश्रम को

ही सुख मानती है। कमला इसका समर्थन करती है और कहती है कि संसार में जितनी विपदाएँ आती है वे परायेपन के कारण आती है। गोपा कहती है कि कि व्यक्ति बिना परिश्रम के ही कुछ चाहता है और वह नहीं मिलता है तो वह दुखी हो जाता है।

गोपा कहती है स्वच्छ घर में ईश्वर का निवास रहता है। अतिथि और देवता का स्वागत सजे धजे घर में ही होना चाहिए। समाज के सहयोग से हम अपना जीवन अच्छा चला पाते हैं। समाज बंधुओं के साथ काम करते रहने से मन की गांठ भी खुल जाती है।

सुधा और सोम दोनों भाई बहिन खेल–खेल में आपस में झगड़तें हैं। परंतु थोड़ी देर बाद दोनों फिर साथ खेलनें लगते हैं। तभी उन्हे 'धम्मं शरणं गच्छामि, संघम् शरणं गच्छामि, बुद्धं शरणं गच्छामि' का स्वर सुनाई देता है। तब सुधा कहती है हमारे यहां भगवान बुद्ध आए हैं और उनके शिष्य भीख के लिए गली गली घूम रहे हैं। वह कहती है भिक्षा उनकी बेबसी नहीं है। साधु–महात्माओं को समाज के हित चिंतन में लगे हुए होने के कारण समय नहीं मिल पाता है। सोम कहता है हम देवों के बीच रहतें हैं। सभी सच्चे मनुष्य बन जाएं तो संसार ही देव घर बन जायेगा। दोनों भगवान बुद्ध का स्वागत अपने घर पर करना चाहते हैं। अतः उसकी तैयारी आरंभ कर देतें हैं।

भगवान् बुद्ध धन्य और गोपा के घर आते हैं। दोनों उनका यथोचित स्वागत करते हैं। धन्य कहता है कि वह काम को ही पूजा मानता है। कठोर परिश्रम की कमाई खाता है। समाज में सबसे मित्रता है। वह अपने परिवार के सदस्यों का परिचय भगवान् बुद्ध से करवाता है। वह कहते हैं धन्य तुम्हारी गृहस्थी आदर्श है। मैं भी खेती करता हूं। वह खेती सुविचारों की खेती है। गोपा भगवान् बुद्ध से कहती है कि आपने तो परिवार सुख छोड़ दिया है। तब भगवान बुद्ध कहते हैं– परिवार तो अब बना रहा हूं। तुम सब मेरे परिवार के सदस्य हो। सारा भूतल मेरा परिवार है। सभी घर के भीतर प्रवेश करते हैं।

3.9 दायरे –

यह एक समसामयिक बोधपरक नाटक है। इस नाटक का प्रकाशन 1987 ई. में हुआ। इस नाटक में निम्न मध्यवर्गीय परिवार की कहानी

है। पंचोली जी का यह नाटक यथार्थवादी नाटक है। इस नाटक में वर्तमान में व्याप्त भ्रष्टाचार, मक्कारी और्र बेईमानी का चित्र प्रस्तुत किया गया है। वर्तमान समय में सीधे–साधे व्यक्ति को और उसकी सच्चाई को कोई भी खरीद सकता है। आज की ज्वलंत समस्या बेराजगारी को भी नाटक में उजागर किया गया है।

नाटक का विस्तार तीन अंको में किया गया है। कथा का आरंभ रवि के कविता सुनाने से होता है। रवि अपनी भाभी सरोज से कविता सुनने के लिए कहता है, किंतु वहाँ पर रवि की बुआ वासंती और शशि भी आ जाती है। रवि उनकी व्यंग्य बातें सुनकर कविता सुनाये बिना ही चला जाता है। शशि रवि की डायरी में से सरोज और वासंती को कविता सुनाती है।

रवि का बड़ा भाई राजेश राशन लेने के लिए घर आता है, किंतु राशन लाने के लिए उसके पास पैसे नहीं है। राजेश की आर्थिक स्थिति कमजोर है। सरोज पढ़ी–लिखी है और नौकरी करना चाहती है। परंतु राजेश उसे मना कर देता है। सरोज परिवार की आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए नौकरी कर दो पैसा कमाना चाहती है। परंतु राजेश और बुआ दोनों उसका विरोध करते हैं। राजेश राशन लेने के लिए घर से निकल जाता है। सरोज को याद आता है राजेश रुपये लेकर नहीं गया है तो शशि के साथ अपनी बचत में से बीस रुपये भेजती है।

रवि का दोस्त रमण और सरोज समाज में व्याप्त बेईमानी, मक्कारी और जाति–पांति की बातें करते हैं। वासंती बुआ बीमार हो जाती है। सरोज उसे दवाई पिलाती है। बुआ अपशब्द बोलकर सरोज को मानसिक प्रताड़ना देती है।

रवि की नौकरी चली जाती है, वह परेशान रहता है। दूसरी नौकरी के लिए सिफारिश कहां से लावें यही सोचता रहता है। मंगताराम और सेठ फकीरचंद रवि को एक साजिश रचकर फँसा देते हैं। पुलिस इंस्पेक्टर के साथ फकीरचन्द रवि के घर जाता है। फकीरचन्द रवि की जमानत कराता है ताकि उसे अपने स्वार्थ के लिए इस्तेमाल कर सके। रमण फकीर चन्द की चाल समझ जाता है और सभी घर वालों को सचेत रहने के लिए कहता है।

रमण रवि से मिलने राहत कैम्प में जाता है और रवि को बताता है कि शशि तुमसे मिलने राहत कैम्प में आती है। राहत कैम्प का इंचार्ज शशि के साथ गलत हरकत करने का प्रयत्न करता है, परन्तु ठीक उसी समय लक्की आकर शशि को बचा लेता है। रमण कहता है कि शशि तुम्हें चाहती है, तुम शशि को अपने व्यक्तित्व का अंग बना लो।

रवि राहत कैम्प में नौकरी करता है। वह अपना कार्य ईमानदारी से करता है, इस कारण से सेठ फकीरचन्द उससे नारेाज हो जाता है। वह कैम्प के अन्य सदस्यों के साथ मिलकर रवि पर गबन का आरोप लगवा देता है। रमण इसकी सूचना रवि के परिवार वालों को देता है किंतु किसी को भी इस बात पर विश्वास नहीं होता है कि रवि सामान गायब कर सकता है। रमण अपनी समिति 'पोल–खोल समिति' द्वारा सच्चाई का पता लगवाता है। सच्चाई सामने आ जाती है।

शशि वासंती और सरोज को रवि के बेकसूर होने की सूचना देती है। सेठ फकीरचन्द और मंगताराम को पुलिस पकड़कर ले जाती है। सभी घरवाले प्रसन्न होते हैं। और रवि के घर आने का इंतजार करतें हैं।

3.10 नींव के स्वर –

यह एक ऐतिहासिक नाटक है। इसका प्रकाशन 1991 ई. में हुआ। इस नाटक में हल्दी घाटी के युद्ध के दौरान हुई विनाशकारी स्थिति का चित्रण किया गया है। नाटक में यह स्पष्ट किया गया है कि स्वाधीनता प्राप्ति के उपरांत हमारी वे शक्तियां कमजोर हुई है, जिसके कारण देश में अलगाव और बिखराव की प्रवृत्ति बढ़ी है। इस नाटक में राष्ट्र की एकीभूत चेतना को उजागर किया गया है। विघटनकारी शक्तियों पर लगाम लगाने का प्रयत्न इस नाटक में है।

'नींव के स्वर' नाटक की कथावस्तु ऐतिहासिक है। नाटक की कथा का विस्तार तीन अंकों और पन्द्रह दृश्यों में विभाजित है। कथा का आरंभ महाराणा प्रताप द्वारा सूर्य देव को प्रणाम करने के साथ हेाता है। यथा प्रताप की आवाज सुनकर उनसे परिचय पूछती है। परिचय के साथ हुए वार्तालाप से यशा पहचान जाती है कि ये तो अन्नदाता महाराणा प्रताप है। वह प्रणाम करती है। यथा बताती है कि

उसके पिता को मुगल पकड़ कर ले गये हैं, वह अब अकेली है। तब प्रताप कहतें हैं कि वह अकेली नहीं है, पूरा मेवाड़ उसके साथ है।

प्रताप मेवाड़ को मुगलों के अत्याचारों से मुक्त कराने की कठोर प्रतिज्ञा करता है। यशा प्रताप व उनकी तलवार को राखी बांधती है। महारानी प्रताप के लिए व्याकुल रहती है। चंपा महारानी को युद्ध की कथा सुनाती है और चेतक के वीरगति प्राप्त होने की खबर भी देती है।

उधर अमरसिंह भी प्रताप की तलाश में है, परंतु प्रताप की कोई खबर नहीं मिलती है। वह चेतक की स्मृति में चबूतरा बनवाता है। सोमा, अल्लाबख्श और खेमा को महाराणा प्रताप के सच्चाई व वीरता के किस्से सुनाती है। दोनों सच्चाई की राह पर चलने का संकल्प लेते हैं। जैसा और एक ग्रामीण युवक युद्ध में हुए विनाश की बातें करते हैं। वे शांति की वीणा बजाने का संकल्प लेते हैं।

महाराणा प्रताप जिस गुप्त स्थान पर ठहरे हुए हैं, उससे कुछ ही दूरी पर मुगल सैनिक अपनी चौकी स्थापित कर लेते हैं। मंगलू, यशा और महाराणा उस समस्या से पार पाने की योजना बनाते हैं।

महारानी गाँव–गाँव जाकर वहाँ की दशा देखती है, किंतु एक गाँव ऐसा आता है जो बिलकुल सुनसान है और कोई व्यक्ति नजर नहीं आता है। एक स्त्री जो बहुत ही रुग्ण अवस्था में है उसे लेकर सैनिक आते हैं। इस स्त्री का नाम चम्पा दे है। महारानी उनकी सेवा करती है।

गाँव–गाँव में लोग एकजुट हो रहे हैं। युद्ध की परिस्थिति के बारे में विचार कर रहे हैं। एक स्थान पर मुगल सैनिकों के आने का संकेत मिलता है। अमरसिंह अपने साथियों के साथ उस टुकड़ी पर हमला करने की योजना बनाता है। तभी नूरी आती है और कहती है कि मैंने उस टुकड़ी के सभी मुगल सैनिकों को मार दिया है। अमरसिंह को बहुत आश्चर्य होता है।

महाराणा के भाई शक्तिसिंह की पुत्री पृथ्वीराज राठौड़ का संदेश लेकर आती है। महाराणा प्रताप यशा से उसे संदेश का जवाब देने के लिए कहता है। यशा पत्र की शैली में ही जवाब तैयार कर देती है। महाराणा भगवान एकलिंग के दर्शन करने जाते हैं और वहां उनकी भेंट महारानी से होती है। दोनों लम्बे

समय बाद मिलते हैं। वे बहुत प्रसन्न होते हैं। संता अपने दुःखों का रोना रोता है तो जैसा उसे समझाने का प्रयास करता है। नूरी संता को उसकी बेटी यशा के जिंदा होने की खबर देती है। वह खेड़ा गाँव के पुनः बसने और महाराणा के आने की सूचना भी देती है।

यशा और मंगलु को महाराणा द्वारा गोगुंदा विजय कर लेने का समाचार मिलता है। वे खुश होते हैं। मेवाड़ के मीरां मंदिर को देखने व रणबंधुओं से मिलने दो किशोर व किशोरी आते हैं। अमरसिंह उनका आदर करता है।

महाराणा प्रताप मेवाड़ को पूर्ण स्वतन्त्र करने के लिए एक योजना बनाता है। वह मेवाड़ से दूर जाकर सैनिक संगठन बनाने की बात करता है। महारानी उसकी इस योजना से सहमत नहीं होती है। यह चर्चा चल रही है होती है उसी समय मेवाड़ के कोषाध्यक्ष भामाशाह आते हैं। भामाशाह कहते हैं कि मुगलो के कुंभलगढ़ पर आक्रमण करने से पहले ही मैंने सारा खजाना अपने भाई ताराचंद तुलिया के पास मालवा भेज दिया था। अब मेवाड़ में शांति है अतः मैंने सारा खजाना मंगवा लिया है, आप इस खजाने को ग्रहण करें और मेवाड़ को मुक्त कराने की तैयारी करें। महाराणा प्रताप कृतकृत्य होकर उस खजाने को ग्रहण करते हैं।

अध्याय – 4

डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली के नाटकों में पात्र योजना एवं संवाद

अध्याय–4 डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली के नाटकों में पात्र योजना एवं संवाद

पात्र योजना

4.1 पात्र योजना का महत्त्व :–

नाटक का प्रमुख तत्त्व पात्र है। पात्रों के माध्यम से नाटक में घटनाएं घटित होती है, जो कि कथावस्तु का निर्माण करती है। इनमें फल के अधिकारी या स्वामी को 'नेता' कहते है। नाटक का प्रमुख पात्र नायक कहलाता है। कथा की सभी घटनाएँ उसी के अभिमुख होकर बहती है और वही प्रमुख कार्यों का कर्त्ता होता है शेष पात्र उसके सहायक होते हैं और उसी का पोषण करते है। यह सामाजिकों को 'रसदशा' तक ले जाने वाला होता है।

नायक :–

भारतीय परंपरा के अनुसार नायक को विनीत, मधुर, त्यागी, चतुर, उच्च वंशवाला, स्थिर स्वभाव वाला, कलाविज्ञ, शूर, दृढ़, तेजस्वी, धार्मिक होना चाहिए। भरत मुनि के अनुसार नायक चार प्रकार के के होते हैं–

(i) धोरोदात्त (ii) धीरललित (iii) धीरप्रशांत (iv) धीरोद्धत।

नायिका :–

भारतीय आचार्यों के मतानुसार नायक की पत्नी अथवा प्रिया नायिका कहलाती है। गुणों में वह नायक तुल्य होती है। भरतमुनि ने नायिका के चार भेद किये हैं –

(i) दिव्या (ii) नृपतिनी (iii) कुलस्त्री (iv) गणिका ।

परंतु ये चार भेद न तो सर्वमान्य हुए और न विशेष प्रचलित ही। नायिका के मुख्य रूप से तीन भेद हैं–

(i) स्वकीया (ii) परकीया (iii) सामान्या।

अन्य पात्र :–

नाटक की सहायता करने वाले तथा प्रासंगिक कथा के प्रमुख पात्र को पीठमर्द तथा उसका विरोध करने वाले को प्रतिनायक कहते हैं।

चरित्र–चित्रण :–

चरित्र–चित्रण कथावस्तु का पूरक है। चरित्र–चित्रण का नाटक के प्रभाव रसात्मकता और पूर्णता की दृष्टि से बहुत महत्त्व है। चरित्र–चित्रण ही नाटककार के पास एक मात्र विधि है जिससे वह अपना संदेश, अपना जीवन दर्शन या अपना उद्‌देश्य पाठकों– दर्शकों के सामने प्रस्तुत करता है। चरित्र–चित्रण तीन प्रमुख विधियों से संभव हैः–

(1) पात्रों के क्रिया व्यापार द्वारा।

(2) पात्रों के संवाद, कथोपकथन अथवा वार्तालाप द्वारा तथा

(3) पात्रों के स्वगत संभाषण या आत्म कथन द्वारा

नाटक में प्रथम दो को ही उपयोगी और महत्त्वपूर्ण माना जाता है। इन दोनों विधियों के मिश्रित प्रयोग से ही उचित धारणा, ज्ञान और भाव पैदा हो सकते हैं। इनके द्वारा पात्र और दर्शक के बीच सीधा संबंध स्थापित होता है और प्रेषणीयता की सफलता सिद्ध होती है। पात्रों के व्यवहार और उनके कथोपकथन द्वारा उनकी वास्तविक वृति गुण–अवगुण और संपूर्ण व्यक्तित्व को प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति दी जाती है।

4.2 नाटकों के प्रमुख पात्रों का चरित्र–चित्रण –

पंचोली जी के नाटकों के प्रमुख पात्रों का चरित्र–चित्रण निम्नलिखित हैः–

1. लहर–लहर मधुपर्क :–

प्रस्तुत नाटक 'लहर–लहर मधुपर्क' में कुल तेरह पात्रों ने अभिनय किया है। नाटक के सभी पात्र ऐतिहासिक पात्र है। इस नाटक में मुख्य पात्र राजा पौरुष और उसकी पत्नी कल्याणी है। सहायक पात्रों के रूप में विष्णुगुप्त, शत्रुंजय, जया, अलक्ष्यदल, फुल्लप, प्रदीक्ष और दांड्यायन आते हैं। गौण पात्रों के रूप में अक्तोवी, अगस्थस्, सूर्याक्ष, आंभी, कुछ सैनिक व स्त्रियाँ है।

'लहर–लहर मधुपर्क' नाटक चरित्र–चित्रण की दृष्टि से सफल नाटक है। इस नाटक के सभी पात्र गतिशील है व कथावस्तु को आगे बढ़ाने वाले हैं। नाटक में नाटककार ने विश्लेषणात्मक पद्धति को अपनाया है और इसी

विश्लेषणात्मक पद्धति के सहारे नाटक सफल उद्देश्य तक पहुँचा है। नाटककार ने नाटक के सभी पात्रों के उज्ज्वल पक्ष को सामने रखा है और सभी पात्र चरित्र को उद्घाटित करने वाले हैं। नाटक में आए मुख्य पात्रों का चरित्र निम्न प्रकार से है–

पौरुष :–

राजा पौरुष झेलम व चिनाव के बीच के प्रदेश का शासक है। वह अपने देश की रक्षा के लिए सदा तत्पर रहता है। अपने देश की रक्षार्थ वह अपने प्राणों तक को न्यौछावर करने के लिए तत्पर रहता है। पौरुष की चारित्रिक विशेषताएँ इस प्रकार है–

(i) देश–प्रेमी :–

प्रस्तुत नाटक में पौरुष देश–प्रेमी रूप में प्रस्तुत हुआ है। पौरुष अपने देश से बहुत प्रेम करता है और उसकी रक्षा के लिए हमेशा तत्पर रहता है। पौरुष किसी भी देश द्रोही को अपने देश में पैर नहीं जमाने देता। वह उसे बाहर निकालकर ही दम लेता है।

(ii) दायित्वशील :–

पौरुष के चरित्र का यह मुख्य गुण है कि वह जिस दायित्व को अपने ऊपर लेता है उसे पूरा करने में किसी भी प्रकार की कसर नहीं छोड़ता। जब आंभी गांधार पर अत्याचार करना आरम्भ कर देता है तो पौरुष अपनी मातृभूमि की रक्षा का दायित्व अपने ऊपर लेकर उसे पूरा करता है। अग्रलिखित पंक्तियां इस गुण को प्रकट करती है। –''तो ढाल का दायित्व बढ़ जाता है। इस दायित्व को निभाने में समर्थ रहूँ तो समझना कि तुमने मुझे पौरुष निरर्थक नहीं कहा था।''[1]

(iii) अहंवृत्ति :–

पौरुष को अपनी शक्ति पर घमण्ड होता है। जब उग्रसेन का पुत्र शत्रुंजय युद्ध में उसकी मदद करता है तो वह उसे पहचान नहीं पाता और उसका परिचय मांगता है तथा उससे कहता है कि मुझे तुम्हारी मदद नहीं चाहिए और फिर मैंने तुमसे मदद भी तो नहीं मांगी। पौरुष का यह कथन उल्लेखनीय है–''परन्तु मैं अलक्ष्यदल का प्रतिरोध करने में समर्थ हूँ। अकेला ही उसके दाँत खट्टे कर सकता हूँ।'' [2]

(iv) कुशल सैन्य संचालक :–

राजा पौरुष ने अपनी सेना का भार स्वयं संभाल रखा था। जब वह अलक्ष्यदल के पड़ाव को तोड़ता हुआ उसके कक्ष में पहुँचता है तो उसकी यह नीति सराहनीय हैं। देशद्रोही आंभी को अपनी इसी नीति द्वारा घुटने टेकने पर मजबूर कर देता है।

(v) विनम्र व शील स्वभावः–

पौरुष स्वभाव से विनम्र व शालीन है। जब वह अलक्ष्यदल को पूरी तरह घेर लेता है तो स्वयं हाथी पर से उतरकर उसे आत्महत्या करने से रोकता है। एक राजा की तरह उसका स्वागत करता है। पौरुष उसे कहता है कि जीत उसकी हुई है मेरी नहीं और उसका सम्मान करता है। अलक्ष्यदल उसकी शालीन विनम्र नीति को देखकर उसकी प्रशंसा करता है। वह कहता है–''महाराज पौरुष! आपकी शालीनता देखकर मैं आश्चर्य में पड़ गया हूँ। दुःखी और जीवन से निराश व्यक्ति को सम्राट कह कर आप अपनी उदारता प्रकट कर रहे हैं।'' [3]

(vi) त्याग की भावना :–

इस नाटक में पौरुष को त्याग की भावना से युक्त बताया गया है। आचार्य दांड्यायन जब उससे उसका त्याग मांगते है तो वह अपनी सम्पूर्ण शक्ति को राष्ट्र के नाम समर्पित कर देता है। निम्न पंक्तियां इसका प्रमाण है– ''महात्मन् ! त्याग अपना पुरस्कार नहीं चाहता। मेरे लिए यह क्या कम गर्व की बात होगी कि मेरी शक्ति से नया राष्ट्र बनेगा।'' [4]

महारानी कल्याणी :–

प्रस्तुत नाटक 'लहर–लहर मधुपर्क' में कल्याणी राजा पौरुष की धर्मपत्नी है। कल्याणी चरित्र के उज्ज्वल पक्ष को लेकर प्रस्तुत हुई है। वह अपने संवादों द्वारा अपने चरित्र को सफल सिद्ध करती है।

(i) वीर क्षत्राणी :–

महारानी कल्याणी वीर क्षत्राणी है। वह अपनी वीरता का परिचय उस समय देती है, जब स्त्रियों की इज्जत पर आ बनती है। जब

अलक्ष्यदल का सैनिक उसकी इज्जत पर हाथ डालता है तो वह अपनी कटारी निकाल कर अपनी इज्जत की रक्षा करती है। वह प्रत्येक स्त्री को शस्त्र चलाना सिखाती है और अपनी अलग से सेना संगठित करती है। वह कहती है –''सेना तो नाम ही मर्यादा का है। उस मर्यादा में क्या मैं नहीं बंध सकती?'' [5]

(ii) शस्त्र विद्या में निपुणः–

महारानी कल्याणी वीर क्षत्राणी होने के साथ–साथ शस्त्र विद्या में भी निपुण है। जब उसे आंभी और अलक्ष्यदल की नीति का पता चलता है तो वह सारी स्त्रियों को एक जगह बुलाकर आने वाले संकट के लिए आगाह करती है। सभी स्त्रियों के हाथों में तलवार और तीर तरकश थमा देती है। परिणामस्वरूप नदी पार कर रहे शत्रु को स्त्री सेना रोक लेती है।

(iii) कर्तव्यनिष्ठः–

महारानी कल्याणी कर्तव्य पथ पर चलने वाली स्त्री है। वह अपने पति पौरुष के साथ कदम से कदम मिलाकर चलती है। इसके साथ ही अपने देश के प्रति अपने कर्तव्य का निर्वाह करती है। मातृभूमि के सम्मान की रक्षा करना अपना कर्तव्य समझती है।

(iv) पतिव्रताः–

महारानी कल्याणी पतिव्रता स्त्री है। वह अपने पति पौरुष के अतिरिक्त अन्य पुरुष की कल्पना भी नहीं करती। आंभी उस पर कलुषित दृष्टि रखता है परन्तु वह उसे स्पष्ट मना कर देती है। वह पौरुष से कहती है– ''मेरे स्वामी ! मुझे भी संसार की कोई शक्ति आपकी पत्नी होने के सौभाग्य से वंचित नहीं कर सकती।'' [6]

2. सूत्रधार :–

चरित्र–चित्रण की दृष्टि से 'सूत्रधार' का अवलोकन करें तो इस नाटक के सभी पात्र ऐतिहासिक है। इसमें कुल तेरह पात्रों ने भूमिका निभाई है। प्रमुख पात्रों के रूप में वासुदेव व उनकी पत्नी सत्यभामा है। सहायक

पात्रों के रूप में रुक्मिणी घोर आंगिरस, दुर्योधन, अर्जुन, मालिनी, सुप्रिया, उद्धव है। गौण पात्रों के रूप में अघोर भैरव, नारद व सेनापति द्युमत्सेन है।

प्रस्तुत नाटक के सभी पात्र गतिशील है। पंचोली जी ने चरित्र–चित्रण द्वारा नाटक को सफल बनाया है। चरित्र–चित्रण की दृष्टि से मूल्यांकन करने पर नाटक में सत्यभामा के चरित्र को उद्‌घाटित किया गया है। इस नाटक में सत्यभामा की अहंवृत्ति को उजागर किया गया है। वासुदेव और रुक्मिणी की सरल प्रवृत्ति व बुद्धिमत्ता से उसके अभिमान को तोड़ा जाता है। चरित्र नाटक का सबसे उज्ज्वल पक्ष है जिसको पंचोली जी ने बड़ी स्वच्छता के साथ प्रस्तुत किया है।

नाटक के मुख्य पात्रों का चरित्र–चित्रण निम्न प्रकार है–

वासुदेव :–

वासुदेव प्रस्तुत नाटक के नायक है। वासुदेव द्वारका के राजा है इसलिए उनको द्वारिकाधीश भी कहा जाता है। वासुदेव के चरित्र की विशेषताएँ निम्न प्रकार है–

(i) नाटक का नायक :–

प्रस्तुत नाटक में वासुदेव श्री कृष्ण एक सफल नायक सिद्ध हुए है, वे नायक के गुणों से सम्पन्न है। वे सुंदर, न्यायप्रिय, कर्तव्यनिष्ठ, वीर तीव्र बुद्धि को प्राप्त करने वाले हैं। उनकी ये विशेषताएँ ही उन्हे नायकत्व प्रदान करती है।

(ii) कुशल नेतृत्वकर्त्ता :–

वासुदेव चतुर बुद्धि वाले है। अर्जुन और दुर्योधन उनसे मिलने आते है, तो वे चुपचाप लेट जाते है। वे जानते हैं कि उनके मिलने का प्रयोजन क्या है। अर्जुन वासुदेव के चरणों में और दुर्योधन वासुदेव के सिर के पास बैठ जाते है और उनके उठने की प्रतीक्षा करते है। वासुदेव उठने पर दोनों से उनका आने का प्रयोजन पूछते है। फिर वासुदेव युद्ध में सहयोग के लिए एक और स्वयं को और दूसरी तरफ अपनी अश्वरोही सेना को रखते हैं। अर्जुन वासुदेव को चुनता और दुर्योधन उनकी अश्व सेना पाकर प्रसन्न होता है।

उनकी कुशाग्रता निम्न उदाहरण से स्पष्ट होती है–''सत्य और न्याय में अपना बल होता है। वह जिस पक्ष में होगा, विजय उसी की होगी।

इसके अतिरिक्त तुमने यह कैसे मान लिया कि मैं लड़ूंगा नहीं। क्या बिना शस्त्र के लड़ाई नहीं लड़ी जाती? लड़ाई अपने भरोसे पर लड़ी जाती है। इस युद्ध में यही तो परीक्षा होगी कि मुझे स्वयं पर कितना भरोसा है।''[7]

(iii) अपराजित :–

वासुदेव कभी किसी से पराजित नहीं होते हैं। यही कारण है कि अर्जुन युद्धार्थ उनको ही चुनता है, उनकी सेना को नहीं।

(iv) शांत स्वभावः–

वासुदेव बड़े शांत स्वभाव के है। जब सत्यभामा के अंतर्मन में अहं का भाव घर कर जाता है तो वे अपनी शांतिप्रिय नीति का उपयोग करके सत्यभामा के अहं को दूर करते हैं।

सत्यभामा :–

सत्यभामा वासुदेव की दूसरी पत्नी है। उसे नाटक की नायिका कहना उचित है। सत्यभामा के चरित्र की विशेषताएँ इस प्रकार है–

(i) ईर्ष्यावृत्ति :–

सत्यभामा में नार्योचित ईर्ष्या है। नारद के भड़काने पर सत्यभामा की ईर्ष्या का भाव और बढ़ जाता है। यही कारण है कि देव वृक्ष परिजात पीला पड़ जाता है। घोर आंगिरस कहते है–''देवी सत्यभामा की ईर्ष्या के तप्तवन ने इसको झुलसा दिया है। उसने इसे नंदनवन से इसलिए प्राप्त किया कि संसार में ऐसा वैभव और सौभाग्य अन्य किसी का न हो सके और आते ही उसने महादेवी रुक्मिणी को व्यंग्य बाणों से आघात पहुँचाना प्रारम्भ कर दिया।''[8]

(ii) अनुपम सुन्दरी :–

सत्यभामा अत्यंत सुंदर है यही कारण है कि वह अपने ऊपर इतना घमण्ड करती है और अपने को अनुपम सुंदरी मानती है।

3. अमृत धुले हाथ

'अमृत धुले हाथ' नाटक के सभी पात्र इतिहास पर आधारित है,परन्तु काल्पनिक नाटक है। प्रस्तुत नाटक में कुल नौ पात्रों ने भूमिका

निभाई है। जिनमें आठ पुरुष पात्र और एक नारी पात्र है। नाटक के प्रमुख पात्रों में आचार्य शाकटायन और उनकी पुत्रवधू जया है। सहायक पात्रों के रूप में गुणाकर, श्रीविजय, वसुमित्र, जयंत,शुकदेव,सिद्धनाथ,कुशलभोज है। गौण पात्रों के रूप में सूत्रधारिणी, सैनिक युवक है।

'अमृत धुले हाथ' नाटक के सभी पात्रों ने अपने अपने चरित्र द्वारा नाटक का उद्देश्य स्पष्ट किया है। इस नाटक के सभी पात्र गतिशील है एवं कथावस्तु को आगे बढाने वाले है। नाटक में शाकटायन और जया का चरित्र विशेष महत्त्व रखता है। नाटक के मुख्य पात्रों का चरित्र चित्रण निम्न प्रकार से है–

शाकटायन :–

आचार्य शाकटायन वृद्ध पुरुष है और प्रस्तुत नाटक के नायक है। वे अपने आश्रम में अपनी पुत्रवधू के साथ रहते हैं। उनकी चारित्रिक विशेषताएँ निम्नलिखित है–

(i) त्याग की भावना

आचार्य शाकटायन में त्याग की भावना कूट–कूट कर भरी है। जब उनका खोया हुआ पौत्र जयन्त अत्याचारियों को मारकर आता है तो वे उसे कहते हैं कि जो बुराई की जड़ को समाप्त करके आता है, उसके हाथ अमृत से धुले होते है और अपने पौत्र जयन्त को राष्ट्र निर्माण के लिए समर्पित कर देते हैं। ये पंक्तियाँ द्रष्टव्य है–''अवन्ती का भावी विनयधर जयन्त होगा। नये गणतंत्र का विनयधर। बिना किसी प्रकार की अधिकार भावना के यह देश की सेवा करेगा।''[9]

(ii) सेवाभावी

शाकटायन ने गाँव में अपना आश्रम खोल रखा है जिसमें वे युवा पीढ़ी को शिक्षा देना, योग सिखाना आदि के साथ–साथ अपने देश के प्रति कर्तव्य क्या है? उसकी भी शिक्षा देते हैं। आचार्य शाकटायन को सेवा की मूर्ति भी कहा जा सकता है। वे अपने शिष्यों को किसी भी प्रकार का कष्ट नहीं होने देते हैं।

(iii) शरीर से बलवान–

आचार्य शाकटायन शारीरिक रूप से बलवान है। शक्ति उनके अन्दर निवास करती है। पहले तो वे रुग्ण होकर खटिया पर पड़े रहते है किंतु श्रीविजय द्वारा यह प्रश्न करने पर कि उनका उद्देश्य क्या है? यह बात सुनकर वे एकदम उत्तेजित हो जाते हैं उनकी सांस फूल जाती है। जया वैद्यराज को बुलाती है, किंतु उनके आने से पहले ही वो ठीक हो जाते हैं। शाकटायन को देखकर सबको आश्चर्य होता है कि इतनी उम्र में इतना बल कहाँ से आया। उदाहरण स्वरूप गुणाकार का यह संवाद–''इस वृद्धावस्था में भी मैं आप को युवा जैसा देख रहा हूं। आचार्य! इतना प्रगाढ़ आलिंगन हमारे विद्यार्थी जीवन की स्मृति दिला देता है।'' [10]

(iv) देश–प्रेमी –

आचार्य शाकटायन देश के प्रति आदर और निष्ठा का भाव रखते हैं। वे अपने देश को विदेशियों से बचाने के लिए अपने आश्रम में युवा पीढ़ी को देश रक्षा के लिए तैयार करते हैं। आचार्य शाकटायन स्वयं भी अपने देश की रक्षा के लिए तत्पर हैं। वे अपने पौत्र को भी राष्ट्र रक्षार्थ समर्पित कर देते हैं। वे कहते हैं–''यह उचित ही किया तुमने। मातृभूमि की धूल को सिर पर धारण करने से ही इस पार्थिव शरीर में पूर्ण मनुष्यत्व का उद्भव होता है।'' [11]

(v) बुद्धिमान–

आचार्य शाकटायन शरीर से तो बलवान है ही बुद्धि से भी बलवान है। जब धैर्यबाहू उज्जयिनी में एक पहेली लिखकर भेजता है तो कोई भी राजनीतिज्ञ उस पहेली का जवाब नहीं भेज पाते हैं यहाँ तक कि आचार्य सांदिपनी भी इस विषय में मौन बैठे रहते हैं। आचार्य शाकटायन उस पहेली का मुँह तोड़ जवाब देते हैं।

जया–

जया आचार्य शाकटायन की पुत्रवधू है। वह युवावस्था में ही विधवा हो जाती है, इसके साथ ही उसका आठ वर्ष का पुत्र भी लापता रहता है। वह अपने श्वसुर के साथ आश्रम में उनका हाथ बंटाती है। जया कि चारित्रिक विशेषताएँ निम्नलिखित है–

(i) राष्ट्र निर्माण की भावना–

जया राष्ट्र निर्माण की भावना से ओत–प्रोत है। वह आश्रम में रहने वाले विद्यार्थियों को राष्ट्र के प्रति अपने कर्तव्य का बोध कराती है। जया विद्यार्थियों को शक्ति अर्जन और धनार्जन की शिक्षा देती है। वह उनको बताती है कि सशक्त नागरिकों से ही सुदृढ़ राष्ट्र का निर्माण होता है। जया में राष्ट्र निर्माण की भावना कूट–कूट कर भरी है। निम्न पंक्तियों से जया की राष्ट्र भावना स्पष्ट होती है–''आचार्य श्री कहना है कि सशक्त और समृद्ध राष्ट्र ही अपने नागरिकों को संसार में ऊँचा सिर करके आत्मसम्मानपूर्वक जीने का आधार देता है। विश्व में आध्यात्मिक चेतना जगाने वाले राष्ट्र को सशक्त व समृद्ध होना ही चाहिए।'' [12]

(ii) ममतामयी –

जया ममता की प्रतिमूर्ति है। उसके आंचल में ममता का सागर हिलोरे ले रहा है। जया आश्रम में रहने वाले विद्यार्थियों को माँ के समान ही स्नेह करती है। यदि विद्यार्थियों को किसी प्रकार का दुःख होता है तो वह उन्हे अपने आँचल में छुपा लेती है। जया ममता की असीम देवी है। विद्यार्थी सिद्धनाथ कहता है–''भगवती! आपकी स्नेहच्छाया पाकर हमें क्या नहीं मिल गया? हमें तो पता ही नहीं चल रहा कि हम अपने घर से बाहर आए हैं।'' [13]

(iii) सहनशीलता –

सहनशीलता जया के चरित्र का प्रमुख गुण है। युवावस्था में पति का देहान्त हो जाता है, वह वृद्ध ससुर की सेवा करती हुई इस कष्ट को सहन करती है। जब जया का आठ वर्षीय पुत्र कहीं चला जाता है और ढूँढने पर भी उसका पता नहीं चलता है तो जया अपने मन को समझाकर रखती है और वह इस बात को सहन करते हुए दस साल बिता देती है कि उसका पुत्र लौटेगा।

(iv) आत्मविश्वासी –

जया आत्मविश्वासी है उसे अपने आप पर पूरा भरोसा है, उसका पुत्र जयन्त लापता हो जाता है तो वह हमेशा एक ही बात सोचती है कि एक दिन उसका पुत्र जरूर आयेगा और वह शाकटायन से भी यही कहती है कि उसका

पुत्र अब भी जीवित है। वह अपने आत्म विश्वास को बनाये रखती है,और नाटक के अंत में उसका विश्वास कायम रहता है। उसे उसका पुत्र मिल जाता है।

4. हम नचिकेता–

प्रस्तुत नाटक 'हम नचिकेता' में कुल तेरह पात्रों ने भूमिका निभाई है। जिसमें नौ पुरुष एवं चार स्त्री पात्र है। प्रस्तुत नाटक में प्रमुख पात्रों के रूप में गोपाल (क्रिस्टोफर) और उसकी पत्नी मीरा (क्रिस्टीना) है। सहायक पात्रों के रूप में प्रमोद, उर्मिला, नंदू, जसोदा, सूरदास, शिवानंद, निरीक्षक, चौथमल आते हैं। गौण पात्रों के रूप में वृद्ध, वृद्धा व अखंडानंद आते हैं।

इस नाटक के पात्र आधुनिक पात्र हैं। चरित्र–चित्रण की दृष्टि से नाटक का मूल्यांकन करें तो 'हम नचिकेता' नाटक अपने निष्कर्ष पर खरा उतरता है। नाटक के पात्र सचेतन है। इसके साथ–साथ सभी पात्र गतिशील है। नाटक के मुख्य पात्रों का चरित्र–चित्रण निम्न प्रकार है

गोपाल–

गोपाल अमेरिका से आया हुआ नवयुवक है। गोपाल का मूल नाम क्रिस्टोफर है। वह भारतीय संस्कृति से अत्यन्त प्रेम करता है इसलिए अपना नाम गोपाल रख लेता है। वह अमेरिका की संस्कृति को छोड़कर भारत की संस्कृति को अपना लेता है। गोपाल के चरित्र की निम्नलिखित विशेषताएँ है–

(i) नाटक का नायक–

प्रस्तुत नाटक का नायक गोपाल धीर ललित नायक है। वह स्वभाव से शांत, अहिंसावादी धर्म कर्म में विश्वास करने वाला, विनीत स्वभाव, सुंदर और बुद्धिमान है। गोपाल में नायक के सभी गुण परिलक्षित होते हैं। इस प्रकार गोपाल को नाटक का नायक कहना उचित है।

(ii) धार्मिक प्रवृत्ति :–

गोपाल ईश्वर में विश्वास रखता है। वह अमेरिका की घुटनभरी जिंदगी से तंग आ जाता है उसे वह रास नहीं आती है। ऐसी जिंदगी से तंग आकर भारत आ जाता है। गोपाल खाते समय स्नान करते समय अर्थात हर समय हरे राम, हरे कृष्ण का ही जाप करता रहता है। निरीक्षक जब उसके घर की

तलाशी लेने आते हैं तो वह अलमारी में रखा लिफाफा उठाकर अपनी जेब में रख लेता है। निरीक्षक उसकी जेब से लिफाफा निकाल कर देखता है तो उसमें राम और कृष्ण की तस्वीर होती है। वह कहता है–''मिस्टर क्रिस्टोफर! इट इज रियली स्ट्रेंज।'' [14]

(iii) भारतीय संस्कृति से प्रेम–

गोपाल भारतीय संस्कृति से प्रेम करता है। इसलिए वह भारत का ही होकर रह जाता है। जब उर्मिला उससे अमेरिका के बारे में पूछती है तो वह भारतीय संस्कृति के ही गुण गाता है। उर्मिला गोपाल के साथ घूमने जाती है ताकि अमेरिका के बारे में जान सके परंतु गोपाल किसी वृद्ध के पास बैठकर भारतीय परिवार की एकता के किस्से सुनने लग जाता है। उर्मिला बोर होकर उसे व्यंग्य करती है।

(iv) हिंदी भाषा से प्रेम –

गोपाल हिंदी से प्रेम करता है। जब मीरां उससे पहली बार मिलती है तो वह अंग्रेजी में बात करती है तो गोपाल उसे हिंदी में बात करने के लिए कहता है। मीरां उससे हिंदी में बात करती है। गोपाल उसके मुँह से हिंदी सुनकर प्रसन्न होता है और उसे बधाई देता है। उदाहरण स्वरूप गोपाल का निम्न कथन द्रष्टव्य है–''माफ कीजिए! हम लोग भारत की धरती पर है। आपको असुविधा न हो तो हम बातचीत में यहां की राष्ट्रीय भाषा का ही प्रयोग करें।'' [15]

(v) कर्तव्यनिष्ठ –

गोपाल कर्तव्य परायण है। वह अपने कर्तव्य के प्रति सजग है जब जसोदा गोपाल से कहती है कि उसके पिता और श्वसुर कुंभ स्नान करने जाना चाहते है तो गोपाल कहता है कि माँ तुम भी जाओ। जसोदा कहती है गृहस्थी कौन संभालेगा। तब गोपाल कहता है कि माँ तुम निश्चिंत होकर जाओ गृहस्थी मैं संभाल लूंगा।

मीरां –

मीरां फ्रांस से आई हुई पढ़ी लिखी नवयुवती है। उसका फ्रांसीसी नाम क्रिस्टीना है। वह पश्चिम की घुटन भरी जिंदगी से तंग आकर भारत आ जाती है। 'मीरां' यह नाम गोपाल ने क्रिस्टीना का रखा है। मीरां गोपाल के साथ

रहती है। दोनों का एक ही उद्देश्य है– 'शांति प्राप्त करना'। मीरां की चारित्रिक विशेषताएँ निम्नलिखित हैः–

(i) नाटक की नायिका –

मीरां प्रस्तुत नाटक की नायिका है। मीरां के चरित्र में वे सभी गुण है जो एक नायिका में होने चाहिए। मीरां स्वभाव से विनम्र, शालीन, कर्तव्यनिष्ठ, धार्मिक मर्यादा आदि गुणों से सम्पन्न है। अतः उसे नायक की नायिका कहना सहज ही है।

(ii) धर्म में आस्था–

मीरां धर्म के प्रति विशेष रुचि रखती है। यही कारण है कि वह सिद्धि एवं शांति की खोज में शिवानंद जैसे ढोंगी के पास उसके आश्रम में पहुँच जाती है, किंतु वहाँ से उसे गोपाल बचाकर ले जाता है। वह पूजा पाठ में भी विश्वास रखती है।

(iii) भारत भूमि से लगाव–

मीरां फ्रांस की रहने वाली है फिर भी भारत भूमि से अत्यन्त लगाव रखती है। जब प्रमोद उसे फ्रांस जाने के लिए कहता है तो वह कहती है कि उसकी भारत छोड़ने की इच्छा नहीं है। मीरां प्रमोद से कहती है–''दोनों से। फ्रांस से इसलिए कि उसने मुझे यह शरीर और ये संस्कार दिए है। वह मेरी जन्मभूमि है। भारत से लगाव इसलिए कि वह मानवता की जन्मभूमि है। उस पर संसार को गर्व है। ....फ्रांस तो जाना ही है; पर भारत को छोड़ने की भी इच्छा नहीं होती।''[16] उसे यहां की सभ्यता और संस्कृति से प्रेम हो जाता है। यही कारण है कि वह गोपाल के साथ शादी करके यहीं रहती है।

(iv) सुशील एवं शर्मिली–

मीरां स्वभाव से सुशील एवं शर्मिली है। जब जसोदा सूरदास से मीरां के बारे में पूछती है तो वह कहता है–''बहुत सुशील। ..... नाम से मीरां, स्वभाव से मीरां और सुर से मीरां। मीरां तो इस देश की बेटी ही हो सकती है।'' [17] जब गोपाल मीरां से पूछता है कि माँ क्या कह रही थी तो वह संकोच पूर्वक उसे

बताती है कि वे सब नाती का मुँह देखकर सोने की सीढ़ी से स्वर्ग जाना चाहते हैं। गोपाल उसे तैयारी के लिए कहता है तो वह शरमाकर अंदर चली जाती है।

(v) मर्यादायुक्त–

मीरां भारतीय संस्कृति को अपनाने के बाद मर्यादा का पूर्णतः पालन करती है। जब उसकी सास कहती है कि बहू हम कुंभ स्नान करने जायेंगे तो वह अपनी मर्यादा का पालन करते हुए खांस कर बात का जवाब देती हैं इस प्रकार वह बखूबी अपनी मर्यादा का पालन करती है।

(vi) अनुपम सुंदर–

मीरां मन से जितनी सुंदर है उतनी ही तन से भी सुंदर है। यही कारण है कि प्रमोद, शिवानंद और अखंडानंद जैसे लोग उस पर बुरी नजर डालते हैं। प्रमोद कहता है–''मीरां! यू आर रियली चार्मिंग। वेरी अट्रेक्टिव पर्सनेलिटी। अँ ऽ ऽ ऽ ऽ..... अँ ऽ ऽ..... ।'' [18]

(vii) स्पष्ट वक्ता –

मीरां को जो कुछ भी कहना होता है वह स्पष्ट कहती है। ''स्वतंत्र चिंतन, नारी मुक्ति, समानता, मुक्त भोग आदि न जाने कितने नारे लगा–लगा कर तुम लोगों ने नारी के तन–मन और हृदय सभी को लूटा है। .....आँख बंद करके अनुकरण करना बंदर चाल कही जा सकती है। वही तुम लोग कर रहे हो।'' [19]

5. ध्रुवश्री :–

प्रस्तुत नाटक इतिहास रस का प्रेरणास्पद ऐतिहासिक नाटक है। इस नाटक के सभी पात्र गतिशील है। मुख्य पात्रों में विजिर प्रदेश की राजकुमारी ध्रुवश्री व कलिंग नरेश खारवेल है। सहायक पात्रों के रूप में पुष्यमित्र, अग्निमित्र, मणिप्रभा, वृहद्रथ है। विरोधी पात्रों के रूप में दैमैत्रेय, सुदत्त, निपेन है।

नाटक के पात्रों का चयन इतिहास पर आधारित है। नाटक में दो प्रकार के पात्र सामने आते है। प्रथम देश–प्रेमी और दूसरे देश–द्रोही। कोई भी पात्र जड़ प्रतीत नहीं होता है। सभी पात्र कथावस्तु को आगे बढ़ाने

वाले है नाटक के अंत में सुदत्त, पुष्यमित्र और खारवेल से प्रभावित होकर उन दोनों से क्षमा मांगता है और उनके साथ मिलकर उनके नक्शे कदम पर चलता है। यह स्त्री प्रधान नाटक है। नाटक में वर्णित प्रमुख–पात्रों का चरित्र–चित्रण निम्न प्रकार से है–

ध्रुवश्री–

ध्रुवश्री प्रस्तुत नाटक की नायिका है। वह खारवेल की प्रेयसी है। उसके चरित्र की विशेषताएँ निम्न प्रकार से है–

(i) कर्तव्यनिष्ठ :–

ध्रुवश्री अपने कर्तव्य के प्रति सजग है। वह शत्रु के साथ होने पर भी अपने कर्तव्य से पीछे नहीं हटती है देश की स्वतन्त्रता को बचाने के लिए वह उससे बगावत करती है। जब दैमैत्रेय खारवेल को धोखे से मारना चाहता है तो वह अपने कर्तव्य का निर्वाह करते हुए खारवेल की रक्षा करती है।

(ii) अत्यन्त सुंदर :–

ध्रुवश्री सुंदरता की प्रतिमूर्ति है। राजा खारवेल उसके इसी सौंदर्य और आवाज की मासूमियत को देखकर उस पर आकर्षित हो जाता है। उसका छोटा सा मुखमण्डल ऊपर से पुरुष वेश उसमें भी वह खारवेल को आकर्षित किए बिना नहीं रहती। अग्निमित्र भी उसके रूप सौंदर्य पर आसक्त हो जाता है।

(iii) देश–भक्त :–

ध्रुवश्री अपने देश के प्रति पूर्ण रूप से समर्पित है। वह दैमैत्रेय की नीति को पहचान जाती है और अपने देश को उसके चंगुल से बचाने के लिए पुष्यमित्र व खारवेल का साथ देती है। युद्ध में लड़ते–लड़ते वह बेहोश हो जाती है किंतु देश–प्रेम की भावना उसे पीछे हटने नहीं देती। उसकी देशभक्ति के संबंध में अग्निमित्र प्रशंसा करता हुआ कहता है–''यह तो पता नहीं चला; पर यदि वह यवन है तो उसकी भारत के प्रति भक्ति को देखते हुए उस पर शत–शत भारतीयों को न्यौछावर करने की इच्छा होती है।'' [20]

(iv) निर्भीक एवं साहसी :–

ध्रुवश्री निर्भीक एवं साहसी नारी है। वह दुश्मन के खेमे में रहकर भी अपने देश तक सूचना पहुँचाती है। वह अपने साहस एवं वीरता का परिचय उस समय देती है जब दैमैत्रेय खारवेल को घेरने के लिए अपने सैनिकों को कहता है और वह खारवेल की ढाल बनकर खड़ी हो जाती है।

(v) सच्ची प्रेमिकाः–

ध्रुवश्री सच्ची प्रेमिका है। राजा खारवेल उसकी प्रेरणा से मगध पर आक्रमण करने का विचार दिमाग से निकाल देता है और उसके साथ मैत्री भाव रखता है। युद्ध के दौरान ध्रुवश्री खारवेल की प्रेम भावना को देखकर उसके प्रति आकर्षित हो जाती है। वह उससे प्रेम करती है। प्रेम के संबंध में एक उदाहरण द्रष्टव्य है– ''जिसने अपनी महत्त्वकांक्षाओं को राष्ट्रनिष्ठा के सामने नगण्य समझा, उस हृदय–सम्राट पर मेरे जैसे अनेक जीवन न्यौछावर किए जा सकते हैं। हे भगवान! वह सुरक्षित है न ? मेरे सपनों ने अभी तो उसके सानिध्य में चार पैर चलना भी नहीं सीखा। उसके पहले ही यह कैसी विपत्ति आ गई! प्रभो, मेरे खारवेल को बचाना। जीवन की यही एक मात्र आकांक्षा है।'' [21]

6. उत्सर्ग :–

यह एक ऐतिहासिक नाटक है। चरित्र–चित्रण की दृष्टि से नाटक का मूल्यांकन करे तो यह खरा उतरता है। नाटक के मुख्य पात्रों के रूप में भीमदेव और उसकी प्रेमिका राजकुमारी इच्छिनी आते हैं। सहायक पात्रों के रूप में अमरसिंह, जैतसिंह, सलख, पृथ्वीराज चौहान, मीनल, देवबोधाचार्य आते हैं और गौण पात्रों के रूप में प्रधानमंत्री, गुप्तचर, सेनानायक, राजपुरोहित, ब्राह्मण, याचक और राजसेविकाएँ हैं। पात्र विधान की दृष्टि से पंचोली जी ने जो पद्धति अपनाई है वह अत्यंत सीधी और सरल है। 'उत्सर्ग' नाटक के सभी पात्र गतिशील है। नाटक के सभी पात्र पाठकों को प्रभावित करने वाले है। नाटक के मुख्य पात्रों का चरित्र–चित्रण इस प्रकार है–

भीमदेव :–

भीमदेव पाटण का राजा है। भीमदेव राजकुमारी इच्छिनी को पसंद करता है और उससे शादी करने की इच्छा रखता है। भीमदेव की चारित्रिक विशेषताएँ निम्नलिखित है–

(i) धीरोदात्त नायक–

प्रस्तुत नाटक में भीमदेव धीरोदात्त नायक के रूप में प्रस्तुत हुआ है। भीमदेव में वे सभी गुण है जो धीरोदात्त नायक में होने चाहिए। उसकी वीरता का परिचय उस समय मिलता है जब वह राजकुमारी इच्छिनी को मंडप से हाथ पकड़कर ले जाने लगता है। देवबोधाचार्य के रोकने पर वह रुक जाता है। भीमदेव वीर, पराक्रमी,साहसी, सुंदर और योग्य शासक इत्यादि गुणों से सम्पन्न नायक हैं।

(ii) सच्चा प्रेमी :–

भीमदेव, जैतसिंह परमार की पुत्री राजकुमारी इच्छिनी से पहली बार मिलता है तो वह उस पर आसक्त हो जाता है और इच्छिनी के समक्ष प्रणय निवेदन रखता है। भीमदेव राजकुमारी से इतना प्रेम करता है कि जब परमार उसके साथ रिश्ता करने से मना कर देता है तो वह उसे हरण करने को तत्पर हो जाता है। भीमदेव कहता है– ''मैंने कह दिया कि यदि परमारराज सहर्ष अपनी कन्या गुर्जरेश्वर को न देंगे तो उसका हरण कर लिया जाएगा। वे अपनी और से चाहे तैयारी कर सकते हैं।''[22]

(iii) उत्तेजित स्वभावः–

प्रस्तुत नाटक का नायक भीमदेव उत्तेजित स्वभाव का है। जब भीमदेव को इस बात का पता चलता है कि राजा परमार ने राजकुमारी के साथ उसका रिश्ता करने से मना कर दिया है तो भीमदेव उत्तेजना में अपनी तलवार निकाल लेता है और अमरसिंह को परमार पर चढ़ाई करने के लिए कहता है। वह कहता है–''(दाँत पीसते हुए) अच्छा, उसको इतना अभिमान हो गया है।''[23]

(iv) साहसी व निडरः–

उत्सर्ग नाटक का नायक निडर होने के साथ–साथ बहादुर भी है। भीमदेव डर नाम की किसी भी चीज को नहीं जानता। जब परमार उसका रिश्ता राजकुमारी के साथ करने से मना कर देता है तो वह बिना किसी भय के उसे युद्ध का निमंत्रण देता है। परमार सारी बात पृथ्वीराज को बताता है तो वह भी उसकी बहादुरी की प्रंशसा करता है।

भीमदेव निडर होकर राजकुमारी इच्छिनी से मिलने उसके महल में पहुँच जाता है। जब राजकुमारी उसे जाने के लिए कहती है तो वह कहता है–''मैं दिल्लीपति से नहीं डरता, राजकुमारी! दिल्लीपति से पहले तुम मेरी वाग्दत्ता हो चुकी हो। यह दूसरी बात है कि वाग्दान तुम्हारे पिता ने नहीं किया। तुम्हारे निश्छल मन ने किया है। भीमदेव के लिए निश्छल मन की साक्षी सबसे बड़ी साक्षी है।''[24]

(v) त्याग की भावना :–

भीमदेव में त्याग की भावना भी पूर्ण रूप से भरी हुई है। नाटक में उसका त्याग उस समय व्यक्त होता है जब इच्छिनी का हरण करने आता है और देवबोधाचार्य के कहने पर राष्ट्र की एकता के लिए उसका हाथ छोड़ देता है। राष्ट्र की एकता के लिए वह अपने प्रेम का त्याग कर देता है।

राजकुमारी इच्छिनीः–

राजकुमारी इच्छिनी राजा जैतसिंह परमार की पुत्री है। राजकुमारी की चारित्रिक विशेषताएँ निम्नलिखित है–

(i) नाटक की नायिका–

प्रस्तुत नाटक में राजकुमारी इच्छिनी नाटक की नायिका के रूप में प्रस्तुत हुई है। राजकुमारी अत्यंत सुंदर, त्यागी, कर्तव्यनिष्ठ, आदर की भावना से युक्त, सहनशील, हितैशी, देश–प्रेम इत्यादि गुणों से सम्पन्न है। राजकुमारी इच्छिनी में वे सभी गुण है जो एक नायिका में होने चाहिए।

(ii) कर्तव्यनिष्ठः–

राजकुमारी इच्छिनी कर्तव्यनिष्ठ है। जब भीमदेव राजकुमारी को हरण करने की बात कहता है तो वह भीमदेव को समझाती है कि उसका वाग्दान पृथ्वीराज चौहान के साथ हो गया है। वह अपने पिता की इच्छा के आगे कुछ नहीं कर सकती। राजकुमारी अपने कर्तव्य का पालन करते हुए पिता की इच्छा को स्वीकार कर लेती है।

(iii) त्याग की मूर्ति :–

राजकुमारी इच्छिनी त्याग की भावना से युक्त है। राजकुमारी भीमदेव के प्रति आसक्त है किंतु उसके पिता जैतसिंह परमार उसका वाग्दान दिल्लीपति राजा पृथ्वीराज चौहान के साथ कर देते है। जब भीमदेव उसका हरण करने के लिए आता है तो देवबोधाचार्य उसे रोक देते है और ऐसा करने का उनका कारण राष्ट्र की एकता को बढ़ाना है। इसलिए राजकुमारी सहर्ष अपने देश की एकता के लिए अपने प्रेम का त्याग कर देती है।

(iv) अनुपम सुंदरी :–

राजकुमारी इच्छिनी सुंदरता की प्रतिमूर्ति है। जब भीमदेव उससे पहली बार मिलता है तो उसके रूप सौंदर्य को देखकर वह उस पर आसक्त हो जाता है और उसके समक्ष प्रणय निवेदन करता है।

(v) सच्ची प्रेमिका :–

राजकुमारी इच्छिनी पाटण नरेश भीमदेव से प्रेम करती है। वह नित्य–प्रति उसी के बारे में सोचती है। जब उसके पिता उसका वाग्दान पृथ्वीराज चौहान के साथ कर देते हैं तो वह दुखी हो जाती है। अपनी सखी मीनल से कहती है–''मीनल! मुझे इस संकट से उबार लो। तुम्हीं बताओ मैं क्या करूं? पूज्य पिताजी का आदेश एक ओर है और मन की भावना दूसरी ओर। किसकी बात मानूं? (रोने लगती है)।''[25]

7. सुनहरे सपनों के अंकुर :–

यह ऐतिहासिक नाटक है। इस नाटक में ग्यारह पात्रों ने भूमिका निभाई है। प्रस्तुत नाटक के सभी पात्र ऐतिहासिक है। प्रमुख पात्रों के रूप में अवंती का महामात्य चारुदत्त और उसकी धर्मपत्नी धूता है। सहायक पात्रों के रूप में अवंती का राजा आर्यक, उसकी धर्मपत्नी रदनिका, चारुदत्त की प्रेमिका वसंत सेना, मैत्रेय, शर्विलक आते है और गौण पात्रों के रूप में पालक, संस्थान, रोहित, गुप्तचर कुछ नागरिक आदि आते हैं।

'सुनहरे सपनों के अंकुर' नाटक के सभी पात्र गतिशील एवं कथावस्तु को आगे बढ़ाने वाले है। सभी पात्र चरित्र को उदघाटित करने वाले है।

प्रस्तुत नाटक में पंचोली जी ने विश्लेषणात्मक पद्धति को अपनाया है। नाटक में चारुदत्त और धूता का चरित्र प्रमुख रूप से पाठकों को प्रभावित करता है। सभी पात्र नाटक को उद्देश्य की चोटी पर पहुँचाने वाले हैं। प्रस्तुत नाटक के प्रमुख पात्रों का चरित्र–चित्रण निम्न प्रकार से है–

चारुदत्त :–

चारुदत्त अवंती का महामात्य है। वह अवंती राज्य की स्वतंत्रता को बनाये रखने के लिए अपने प्राणों तक को न्यौछावर करने के लिए तत्पर रहता है। उसकी चारित्रिक विशेषताएँ निम्नलिखित है–

(i) धीरोदात्त नाटक :–

चारुदत्त प्रस्तुत नाटक का धीरोदात्त नायक है। वह अत्यंत वीर, पराक्रमी, धार्मिक, न्यायप्रिय, स्नेह भाव से युक्त और सच्चा देश–प्रेमी है। धीरोदात्त नायक के सभी गुण चारुदत्त में निहित है।

(ii) देश – प्रेमी :–

चारुदत्त सच्चा देशप्रेमी है। वह अपने देश पर किसी भी प्रकार की आंच नहीं आने देना चाहता। राजा पालक के अत्याचार से बचाने के लिए समाज को संगठित करता है।

(iii) जनता के प्रति जागरूकः–

चारुदत्त हमेशा जनता के प्रति जागरूक रहता है। वह हमेशा जनता के हित के बारे में सोचता है। वह नागरिकों को किसी भी प्रकार से कष्ट नहीं होने देता है। वह जनता को देश के प्रति उनके क्या कर्तव्य है यह समझाता भी है। वह प्रजा के प्रतिनिधि मंडल को संबोधित करते हुए कहता है–''आप अपने कर्तव्य को करेंगे तो राज्य भी अपने कर्तव्य के प्रति सजग रहेगा। असामाजिक तत्वों और बाहरी आक्रमणों से आपकी रक्षा करना राज्य का कर्तव्य है। राज्य की शक्ति तो नागरिकों की कर्तव्यनिष्ठा में ही निहित होती है।'' [26]

(iv) कर्तव्य परायण :–

चारुदत्त हर समय कर्तव्य के लिए तत्पर रहता है। वह देश व समाज के प्रति अपने कर्तव्य को बखूबी समझता है। वह कहता है–''जब तक पालक पकड़ा न जाए और आर्यक को खोज कर राज्य सिंहासन पर नहीं बैठा दिया जाए, तब तक मेरे लिए कोई भी समाचार शुभ नहीं हो सकता।''[27]

(v) नारी सम्मान की रक्षा :–

चारुदत्त नारी सम्मान एवं उनकी रक्षा हेतु हर समय तत्पर रहता है। जब वह वेश्यालय से वसंतसेना को अपने घर लाकर आश्रय देता है तो कुछ दुष्ट प्रवृत्ति के लोग इसका विरोध करते हैं तब चारुदत्त कहता है– ''(उत्तेजित होकर) हाँ देता हूँ। लोग उन लोगों की निंदा नहीं करते जो स्त्रियों को अपमानित करते हैं, उस व्यवस्था की निंदा नहीं करते जिसमें स्त्री शरीर बेचने के लिए विवश हो जाती है।'' [28]

धूता :–

धूता चारुदत्त की धर्मपत्नी है। वह भी चारुदत्त के समान वीर, क्षत्राणी, सहनशील और प्रत्युत्पन्नमति वाली है। धूता की चारित्रिक विशेषताएं निम्नलिखित है–

(i) नाटक की नायिका :–

प्रस्तुत नाटक 'सुनहरे सपनों के अंकुर' की धूता नायिका है। धूता में वे सभी गुण है जो एक नायिका में होने चाहिए। धूता के चरित्र का उज्ज्वल पक्ष इस नाटक में प्रस्तुत हुआ है।

(ii) वीर क्षत्राणी :–

धूता वीर क्षत्राणी है। जब उपद्रवियों को यह पता चलता है कि वसंत सेना चारुदत्त के यहां है तो वे सभी महल के चारों ओर घेरा डालकर हंगामा करते हैं, तब धूता निडर होकर उपद्रवियों के समक्ष आती है और कहती है यदि किसी कुलवधू का अपमान करने की परम्परा आपके यहां हो, तो आप जैसा उचित समझें, वैसा करें। हम लोग यहां खड़ी हुई है। उसकी इस बात को सुनकर सारे उपद्रवी अपने कदम पीछे हटा लेते हैं।

(iii) त्याग की मूर्ति :–

धूता इस नाटक में त्याग की मूर्ति के रूप में प्रस्तुत हुई है। उपद्रवियों के समक्ष धूता वसंतसेना का हाथ पकड़कर घोषणा करती है कि वसंतसेना आर्य चारुदत्त की पत्नी है। इस प्रकार उसने नारीत्व की रक्षा करके त्याग का परिचय दिया। तब धूता की प्रंशसा करती हुई वसंत सेना कहती है– ''ऐसे समय पर स्त्रियां पति को छोड़कर सब कुछ दे सकती है, परन्तु आपने तो मुझे पति भी दे दिया।..... ..... नारी जीवन का सर्वस्व मैनें आपसे प्राप्त किया है। जीजी! मुझे अपने चरणों से दूर मत करना कभी।'' [29]

(iv) पतिव्रता नारी :–

धूता पतिव्रता नारी है। जब चारुदत्त को पालक के कर्मचारी पकड़ कर ले जाते है तो वह अत्यंत व्याकुल हो जाती है। परंतु जब मैत्रेय चारुदत्त के सकुशल होने का समाचार धूता को देता है तो वह घनघोर रात्रि में अपने पति से मिलने चली जाती है।

(v)सहनशीलता :–

सहनशीलता धूता के चरित्र का प्रमुख गुण है। वह वसंत सेना के प्रति चारुदत्त की आसक्ति को जानती है। उपद्रवियों को शांत करने के लिए वह घोषणा कर देती है कि वसंत सेना चारुदत्त की पत्नी है। इस प्रकार उसने सहनशीलता का परिचय दिया। धूता कहती है–''बहिन! सौत तो मिट्टी की भी बुरी होती है। तुम मेरे यहां सौत बन कर तो आई नहीं थी। मुझे स्वयं पता नहीं था कि परिस्थितियां क्या कर देंगी।'' [30]

8. सुखी परिवार :–

प्रस्तुत नाटक में तीन नारी पात्र और चार पुरुष पात्र कुल सात पात्र है। नाटक के मुख्य पात्रों में धन्य व उसकी पत्नी गोपा आते हैं। सहायक पात्रों के रूप में श्रीकर व उसकी पत्नी कमला, सोम व सुधा आते हैं। गौण पात्रों में तथागत आते हैं।

'सुखी परिवार' नाटक चरित्र चित्रण की दृष्टि से सफल नाटक है। नाटक में धन्य व गोपा का चरित्र विशेष महत्त्व रखता है। दोनों अपने चरित्र के उज्ज्वल रूप में नाटक को सफलता की सीढ़ी तक ले जाते हैं। नाटक के सभी पात्र नाटक की कथावस्तु को आगे बढ़ाने वाले है, कोई पात्र जड़ प्रतीत नहीं होता। नाटक के प्रमुख पात्रों का चरित्र–चित्रण निम्न प्रकार से है–

धन्य :–

धन्य गांव का एक सम्पन्न किसान है। वह अपने परिवार के साथ हमेशा खुश रहता है। धन्य की चारित्रिक विशेषताएं निम्न है–

(i) परिवार को महत्त्व :–

प्रस्तुत नाटक में धन्य को परिवार को महत्त्व देने वाले के रूप में प्रस्तुत किया गया है। जब महात्मा बुद्ध के आने का समाचार उसको दिया जाता है तो वह कहता है–''वे प्रसन्न होंगे। वे वीतराग हैं। हम गृहस्थ हैं। हमारे साथ परिवार के बंधन हैं। हम अपने धर्म–कर्म को निभा रहे हैं–यह जानकर वे प्रसन्न होंगे।'' [31] परिवार का कार्य पहले फिर अन्य कार्य, यह उसकी विचारधारा है।

(ii) पशु–पक्षियों के प्रति आत्मीयता :–

धन्य पशु–पक्षियों को बहुत प्रेम करता है, वह उन्हे अपने परिवार का सदस्य मानता है। श्रीकर के एक प्रश्न का उत्तर देते हुए धन्य कहता है–''हां, मेरे परिवार में दस सदस्य हैं–घरवाली, बेटा, बिटिया, गो माता, उसकी बछिया, बछड़ा, कुत्ता,तोता, मैना और मैं स्वयं इस तरह दस।'' [32]

(iii) गौ–भक्त :–

धन्य सच्चा गौ भक्त है। वह दूध दुहते समय इस बात का पूरा ध्यान रखता है कि बछड़े के हिस्से का दूध उसे पिलाना है। कृषि प्रधान देश में गाय ही धन है। वह परिवार का ठोस आर्थिक आधार होती है। धन्य कहता है–''परिवार का ही नहीं, हमारे समाज और राष्ट्र का आर्थिक आधार भी वही है। परिवार और समाज सुदृढ़ आर्थिक आधार के बिना उन्नती नहीं कर सकते।'' [33]

(iv) समानता का भाव :–

धन्य के स्वभाव में समानता कूट–कूट कर भरी है। वह कहता है कि समाज में न किसी से द्वेष है, न किसी से अनुचित प्रीति। सबसे मित्रता है। वह पड़ौसियों से स्नेह करता है। पड़ोसियों के बच्चों को भी अपने ही बच्चे मानता है। वह कहता है–''बड़ों का आदर करते हैं। बराबर वालों से प्रेम करते हैं। छोटों को प्यार–दुलार करते हैं।'' [34]

(v) श्रमिक रूप :–

धन्य श्रमिक में जीविकोपार्जन करता है। वह अपने खेत में हल जोतता है। खेती को विशेष महत्व देता है। वह कहता है–''छोटे–बड़े सब कामों को सही ढंग से सही समय पर कर लेता हूं। काम को ही पूजा मानता हूं, काम को ही उपासना। .....हमारे खेत सोना उगलते हैं। परमात्मा मेहनत का पूरा फल देता है।'' [35]

गोपा :–

गोपा धन्य की धर्मपत्नी है। उसकी चारित्रिक विशेषताएं निम्नलिखित है–

(i) परिश्रमी :–

गोपा श्रम करने में धन्य से किसी भी प्रकार से कम नहीं है। वह धन्य का खेती–बाड़ी में सहयोग करती है। बीज बोना, पशुओं को पानी पिलाना आदि। गोपा परिश्रम में ही सुख का अनुभव करती है।

(ii) परिवार हितैषी :–

गोपा परिवार हितैषी गृहणी है। वह हमेशा परिवार के सुख की कामना में रत रहती है। वह कहती है–''अपनों के लिए श्रम करना भार नहीं लगता। बड़ा से बड़ा कष्ट सहने में सुख मिलता है।..... परिवार इसी को कहते हैं। मैं कहीं नहीं, हम ही हम। हम सबके प्यारे, सब हमारे प्यारे। सारी दिशाएं हमारी मित्र। हमारी गति में मिठास ; हमारी स्थिति में मिठास।''[36]

(iii) स्वच्छता को महत्व :–

गोपा स्वच्छता को महत्व देती है। वह हमेशा घर को साफ–सुथरा रखती है। उसका मानना है कि अतिथि देवता कह कर नहीं आते, देवता का स्वागत सजे–धजे घर में ही किया जाता है। स्वच्छता तो परमात्मा की उपासना का ही नाम है। घर को देव मंदिर की तरह पवित्र और स्वच्छ रखना चाहिए।

(iv) ईश्वर में आस्था :–

गोपा ईश्वर में आस्था रखने वाली महिला है। उसका मानना है कि हमारा प्रत्येक कर्म ईश्वर के निमित्त होना चाहिए। परिश्रम का फल प्रभु देता ही है। वह कहती है–''वाह! कितनी अच्छी बात कही। काम करो और परमात्मा को सौंप दो। जिसकी कृपा से काम पूरा हुआ, वह उसी का है। उसको सौंपने पर प्रसन्नता होगी ही। .....उसका काम करने में अपनी ओर से कोई कमी नहीं रहनी चाहिए। '' [37]

(v) सामाजिक भाव :–

गोपा समाज को महत्त्व देती है। वह कहती है कि समाज के साथ हम जुड़े हुए हैं। समाज में रहकर ही हम त्याग की भावना सिखते हैं। गोपा कहती हैं–''वह हमें उन्नति का अवसर देता है। हमारा कर्तव्य है कि सबको साथ

लेकर उन्नति करें। पिछड़े को साथ लें। गिरे हुए को उठाएं। बढ़ते हुए में उमंग जगाएं। साहस टूटने पर धीरज बंधाएं। .....सहयोग और सहानुभूति से हमारी पहचान होती है। सेवा से हम ऊँचे उठते हैं। प्रेम से हम दूसरों से जुड़ते हैं। सत्य से हमारी ऊँचाई का पता लगता है।''[38]

9. दायरे –

'दायरे' समसामयिक बोधपरक नाटक है। इस नाटक में ग्यारह पात्रों ने अभिनय किया है। प्रमुख पात्रों के रूप में रवि, शशि व रमण है।सहायक पात्रों के रूप में राजेश, सरोज, वसन्ती, फकीरचन्द, मंगलदास है। गौण पात्रों के रूप में सोमी दादा, फर्रू, सिपाही है।

प्रस्तुत नाटक के सभी पात्र गतिशील हैं कथावस्तु को अपने उद्देश्य तक पहुँचाने वाले हैं। पंचोली जी ने नाटक के सभी पात्रों के उज्ज्वल चरित्र को प्रस्तुत किया है। इसके प्रमुख पात्रों का चरित्र–चित्रण इस प्रकार है–

रविः–

रवि आधुनिक विचारधारा वाला एक बेरोजगार नवयुवक है। यह नाटक रवि के इर्द–गीर्द ही मंचित होता है। रवि के चरित्र की विशेषताएं निम्नलिखित है–

(i) कवि :–

रवि रोजगार की तलाश में भटकने वाला नवयुवक है। वह समाज में व्याप्त विसंगतियों पर कविताएं लिखता है। उसकी कविताएं परिवार जनों एवं महंगाई, रिश्वतखोरी आदि पर होती है। वह व्यंग्य प्रधान कविताएं लिखता है।

(ii) सीधा – साधाः–

रवि सीधा–साधा निश्छल विचार धारा वाला बेराजगार युवक है। वह इतना सीधा है कि सेठ फकीरचन्द द्वारा फैलाये जाल में फंस जाता है। सेठ फकीरचन्द उसके भोलेपन का उपयोग अपने लिए करना चाहता है।

(iii) शीघ्र हताश होने वालाः–

रवि सेठ फकीरचन्द व उसके मुनीम के फैलाये षड़यन्त्र का शिकार हो जाता है। वह समाज से छिपकर रहने लगता है। हर तरफ से निराशा हाथ लगने के कारण वह अपने आप को दोषी मानने लगता है। फर्रू के एक प्रश्न के उत्तर में वह कहता है–''मैं क्या बताऊँ कि मैं कौन हूँ.....मैं क्या बताऊँ। तुम अपनी निगाह से देखो न मैं चोर हूँ, रिश्तखोर हूँ और क्या–क्या नहीं हूं?''[39]

शशि :–

शशि एक अनाथ बालिका है। बचपन से ही वह रवि के घर में ही रहती है। घर को सुखद माहौल देने में वह निपुण है। उसके चरित्र. की विशेषताएं निम्न है–

(i) हँसी–मजाक करना –

हँसी मजाक करना शशि के चरित्र का प्रमुख गुण है। वह रवि की कविताओं को लेकर उसकी हंसी उड़ाती है। जब रवि कहता है कि तुमने मेरी कविता क्यों पढ़ी तो शशि कहती है–''मैने नहीं पढ़ी एक भी कविता। गाई जरूर है। पढ़ने और गाने में अंतर होता है न, बुआजी?''[40]

(ii) रवि से प्रेम करने वाली–

शशि प्रेम की भावना से परिपूर्ण है वह रवि के घर के प्रत्येक सदस्य से प्रेम करती है। वह रवि से प्रेम करती है परन्तु किसी को कहती नहीं है। रमण उसकी इस भावना को समझता है और रवि को शशि से विवाह करने को कहता है। शशि रवि से मिलने उसके केन्द्र पर भी जाती है।

(iii) घरेलू कार्यों में निपुण :–

शशि घरेलु कार्य करने में निपुण है। वह सरोज के साथ मिलकर खाना–बनाना, कपड़े–धोना, साफ–सफाई का कार्य अत्यंत कुशलता से करती है।

10. नींव के स्वर :–

यह एक ऐतिहासिक नाटक है। प्रस्तुत नाटक में कुल अठारह पात्रों ने भूमिका निभाई है। मुख्य पात्रों के रूप में मेवाड़ के महाराणा प्रताप और उनकी धर्मपत्नी महारानी है। सहायक पात्रों के रूप में यशा, सोमा, अमरसिंह, नूरी, संता भील आते है। गौण पात्रों के रूप में माहू, भामाशाह, सुखराज, खेमा, चम्पा, कमला, अल्लाबख्श आदि आते हैं।

प्रस्तुत नाटक में गौण पात्र महाराणा प्रताप के व्यक्तित्व को उभारने के लिए प्रस्तुत हुये है। पंचोली जी ने महाराणा प्रताप के बाहरी चरित्र को उद्‌घाटित न कर उनके आंतरिक चरित्र को उभारा है। प्रस्तुत नाटक के सभी पात्र गतिशील है। सभी पात्रों ने अपने चरित्र द्वारा पाठकों को प्रभावित किया है।

'नींव के स्वर' नाटक चारित्रिक अभिनय की दृष्टि से सफल नाटक है। नाटक के मुख्य पात्रों के चरित्र की विशेषताएं निम्न प्रकार है–

महाराणा प्रताप–

महाराणा प्रताप मेवाड़ राज्य का राजा है। वह मेवाड़ की स्वतंत्रता को बनाए रखने के लिए अपने प्राणों को न्यौछावर करने के लिए तत्पर रहता है। महाराणा प्रताप की चारित्रिक विशेषताएं निम्नलिखित है।

(i) राष्ट्र भक्त :–

महाराणा प्रताप सच्चा राष्ट्र भक्त है। जब अकबर मेवाड़ पर आक्रमण कर उसे कब्जे में कर लेता है तो वह हर संभव प्रयास कर मेवाड़ की स्वतंत्रता को बनाए रखताहै। वह प्रतिज्ञा करता है– ''बदला हम मिलकर लेंगे बेटी! कोई अत्याचारी दस्यु मेवाड़ को . . . मेवाड़ की धरती को, उसके निवासियों को अपमानित करके जीवित नहीं रह सकता। (म्यान में रखी हुई तलवार को छूकर) मैं इस तलवार को छूकर आज मेवाड़ की बेटी के सामने प्रतिज्ञा करता हूँ।''[41]

(ii) प्रजा वत्सल –

महाराणा प्रताप प्रजावत्सल है। वह कभी भी अपने आप को राजा नहीं समझता बल्कि प्रजा के साथ मिलकर उनके साथ साधारण जीवन यापन करता है। वह प्रजा से बहुत प्यार करता है। वह प्रजा से कहता है कि राज्य

उसका नहीं प्रजा का है। महाराणा प्रताप कहता है– ''धरती राजा की नहीं, प्रजा की होती है। उसे सौगात में नहीं दिया जा सकता। सेना के बल पर छीना भी नहीं जा सकता। राजा के हार जाने से प्रजा नहीं हारती।''[42]

(iii) कर्तव्यनिष्ठ –

महाराणा प्रताप अपने कर्तव्य के प्रति सजग है। वह अपनी प्रजा के प्रति, अपने काम के प्रति कर्तव्यनिष्ठ है। महाराणा प्रताप कहते हैं–''इसलिए सौंप देते हैं कि हमारी कथनी और करनी में अंतर नहीं है। हम जब तक अपने कर्तव्यपथ पर आरूढ़ रहेंगे तब तक हमारी जनता हमारी शक्ति बनकर हमारा साथ देती रहेगी।'' [43]

(iv) स्वाभिमानी –

महाराणा प्रताप स्वाभिमानी है। वह शत्रु के समक्ष नतमस्तक नहीं होता है। उसे अपने पुरुषार्थ पर पूरा भरोसा है। जब यशा कहती है कि आपके नाम से अकबर को एक दीनता भरा पत्र लिखा गया है, उसमें आराम से जिंदगी बिताने की बात लिखी गई है, तब प्रताप कहता है– ''ऐसी चाह रखने वाला भी शत्रु ही होगा। मित्र कैसे हो सकता है ? क्षत्रिय तो अपने यशः शरीर से जीता है। उसको समाप्त कर देने वाला निश्चय ही मित्र नहीं हो सकता। (ठहरकर) प्रताप जो पाएगा अपने पुरुषार्थ से पाएगा। किसी दया का दान प्रताप के लिए नहीं हो सकता।'' [44]

(v) धर्म में आस्था –

महाराणा प्रताप आस्तिक है। वह धर्म में विशेष रुचि रखता है। उसे ईश्वर पर पूरा विश्वास है। वह प्रत्येक कार्य की शुरुआत भगवान एकलिंग के दर्शन से करता है। वह राज्य की खुशहाली के लिए ईश्वर से प्रार्थना करता है– ''प्रिये! मैं तो भगवान एकलिंग से यही प्रार्थना करता हूं कि जनता–जनार्दन की सेवा करने का जो अवसर मिला है उसमें हर कसौटी पर खरा उतरूं।''[45] प्रताप स्वयं को एकलिंग का दीवान मानकर शासन करता है।

(vi) वीर यौद्धा –

महाराणा प्रताप वीरता का सूचक है। हल्दीघाटी के युद्ध के अनिर्णित परिणाम के फलस्वरूप महाराणा प्रताप अपने साहस को खोता नहीं है। पुनः सेना एकत्र कर अपना खोया हुआ राज्य प्राप्त करने का प्रयत्न करता है। वह गाँव–गाँव घूमकर जनता में स्वतंत्रता प्राप्ति हेतु संघर्ष करने की प्रेरणा देता है। महाराणा प्रताप कहता है– ''युद्ध का निर्णय नहीं हो पाया । हम लम्बी लड़ाई लड़ेंगे अपने अस्तित्व के लिए। वह सेना का काम नहीं है। प्रजा का काम है। हम आज विजयी नहीं हो पाये। पर कल का सूरज विजय का सूरज उगे–यह चाहता हूँ।''[46]

(vii) त्याग की भावना से युक्त–

महाराणा प्रताप त्याग की भावना से युक्त है। वह अपनी सम्पूर्ण शक्ति और शरीर को मातृभूमि की रक्षा के लिए समर्पित कर देता ह। वह सुख वैभव छोड़कर वन में निवास करता है। यशा द्वारा तलवार को राखी बांधने पर प्रताप कहता है–**''**.....तुमने मनुष्य धर्म की रक्षा का दायित्व इस तलवार को सौंपा है। बेटी! इस तलवार को धारण करने वाले ये हाथ धर्म और मातृभूमि की रक्षा के लिए समर्पित करता हूं।''[47]

महारानी–

महारानी, महाराणा प्रताप की धर्मपत्नी है। वह त्याग, सेवा, स्नेह,देश–भक्ति, प्रजा–वत्सल आदि गुणों से युक्त है। इस नाटक में 'महारानी' इस नाम से ही संबोधित किया गया है। महारानी के चरित्र की विशेषताएं निम्नलिखित है–

(i) ममतामयीः–

महारानी ममता की साक्षात मूर्ति है। वह अपनी प्रजा के प्रति ममता का भाव रखती है। वह प्रजा को अपने पुत्र व पुत्रियां मानती है। उन्हें अपनी संतान के समान स्नेह करती है। महारानी का यह वाक्य इसकी पुष्टि करता है– ''(गर्व से तनकर) नूरी मेरी बेटी है। मैंने अपनी कोख से पैदा नहीं किया तो क्या हुआ? वह

मेरी मानस पुत्री है।''[48] वह अपनी प्रजा पर आऐ संकट से दुखी हो जाती है, वह कहती है – ''..... मेरे सुख–दुःख के केन्द्र तो मेवाड़ के नर–नारी है। उन पर विपत्ति आऐ और मैं रो भी न पाउं। कैसी विडम्बना है? फिर कैसे व्यक्त करूं अपने मन की बात?.....।'' [49]

(ii) प्रजा–वत्सल :–

महारानी प्रजा वत्सल है। वह अपनी प्रजा से बहुत प्रेम करती है। बिना भेद–भाव के प्रजा से प्रेम करती है। वह प्रजा की रक्षा करना अपना कुलव्रत मानती है। वह कहती – ''.....मेवाड़ की प्रजा हमारी संतान है। उसकी रक्षा करना हमारा कुलव्रत है। उसका पालन करने में हम कहीं पीछे न रह जाएँ, भगवान ऐसा सामर्थ्य हमें दे ।''[50]

(iii) सेवाभावी :–

महारानी सेवा की भावना से ओतप्रोत है। हल्दीघाटी के युद्ध के बाद महारानी गांव–गांव जाती है, तथा युद्ध के दौरान पीड़ित हुऐ लोगों की सेवा करती है। चम्पादे के प्रश्न का उत्तर देती हुई महारानी कहती है – ''मैं परेशान कहां हूं। मेवाड़–वासियों की परेशानी देखने और दूर करने के लिऐ ही घर से निकली हूं। ..... पहले तुम्हारे लिऐ पथ्य की व्यवस्था करती हूँ मांद के मारे तुमने खाया भी तो कुछ नहीं होगा । आस – पास कोई गाय देखती हूं। दूध निकालकर तुमकों पिला दूं। औषधि भी .....।'' [51]

(iv) वीर क्षत्राणी :–

महारानी वीर क्षत्राणी है। वह अपने आपको किसी भी प्रकार से निर्बल नहीं समझती है। निर्भय होकर गांव–गांव घूमती है। वह क्षत्राणी धर्म निभाने के लिए तत्पर रहती है। वह कहती है – ''युद्ध में स्वामी को तिलक करके, आरती उतारकर भेजा था मैंने। युद्ध के परिणाम से क्षत्राणी नहीं घबराती । भाग्य से लड़ने के लिऐ भी तैयार रहती है, पर.....। अधीर नहीं हूं पितः। केवल जानकारी पाने के लिऐ उत्सुक हूँ। क्षत्राणी हूँ। भविष्य कितना ही विकराल हो,सामना कर सकती हूं। .....''[52]

(v) पतिव्रता :–

महारानी पतिव्रता स्त्री है। वह सच्ची सहधर्मचारिणी है। युद्ध के पश्चात महाराणा प्रताप के नहीं लौटने पर वह व्याकुल हो जाती

है। महाराणा प्रताप कहते हैं कि मेवाड़ की स्वतंत्रता के लिऐ राजकीय सुख छोड़कर तुम्हें वन में कष्ट भोगना पड़ा, तब महारानी का कथन प्रशंसनीय है। ''स्वामी! कैसी बातें करते हैं आप? मैं आपकी सहधर्मचारिणी हूँ। कठित परिस्थितियों से एक साथ मिलकर जूझे है हम लोग। पत्नी तो पति की छाया होती है। भगवान राम का साथ माता सीता ने दिया था,उसी तरह की राह मैंने अपनाई है। इसमें अनहोनी क्या हुई?'' [53]

4.3 नाटकों में गौण पात्रों का निरूपण :–

डॉ. पंचोली जी के नाटकों में गौण पात्रों की संरचना मुख्य पात्रों के व्यक्तित्व को उभारने के रूप में हुई है। कहीं पर ये ऐतिहासिक है तो कहीं पर काल्पनिक। डॉ. पंचोली के नाटकों के गौण पात्रों का वर्णन निम्नलिखित है:–

1 लहर–लहर मधुपर्क :–

प्रस्तुत नाटक के सभी गौण पात्र अपना अपना चरित्र बखूबी निभाते है। इस नाटक के मुख्य पात्र पौरुष के उज्ज्वल चरित्र को प्रकट करने में गौण पात्र अलक्ष्यदल के अत्याचारी व रूप लोभी चरित्र की भूमिका रही है। नाटक के अंत में वह भी एक स्वच्छ चरित्र धारण कर लेता है। प्रस्तुत नाटक में आंभी को देशद्रोही के रूप में और पौरुष को देशभक्त के रूप में दिखाया गया है। सभी गौण पात्रों ने पौरुष के व्यक्तित्व को उसके उज्ज्वल व देशभक्त चरित्र को उभारने में सहयोग दिया है।

2. **सूत्रधार** :–

प्रस्तुत नाटक में गौण पात्रों के रूप में महर्षि घोर आंगिरस आते है। उन्होंने ही बांसुरी – बजैया नटवर कृष्ण को पांचजन्य का उद्घोषक व योगेश्वर बनाने में मुख्य भूमिका का निर्वाह किया है। पट्टमहिषी रुक्मिणी, अर्जुन व दुर्योधन के चरित्र भी मुख्य पात्र कृष्ण के व्यक्तित्व को उभारने में सफल हुए है। नाटक में महाभारत युद्ध के पूर्व प्रसंग का उल्लेख है। जिसमें कृष्ण (वासुदेव) को युद्ध का नेतृत्व करने वाला अर्थात् सूत्रधार के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

3 **अमृत धुले हाथ** :–

'अमृत धुले हाथ' में नाटक रम्यता और प्रभावशीलता की सीमाओं में कुछ आधुनिक समस्याओं का समाधान ऐतिहासिक संदर्भों के माध्यम से खोजने का एक विनम्र प्रयास है। ऐतिहासिक संदर्भो को लिए हुए यह काल्पनिक नाटक है। इस नाटक के गौण पात्र गुणाकर, श्रीविजय, सिद्धनाथ आदि मुख्यपात्र शाकटायन का सहयोग करते हुऐ उसके चरित्र को प्रकट करते हैं। शाकटायन के गौरव को प्रकट करते हुए वसुमित्र कहता है –''यहीं है महर्षि शाकटायन का आश्रम । यहीं बहती है ज्ञान और कर्म की समन्वित धारा। अर्जन और समर्पण का उद्घोष यहीं हुआ है। '' [54] सभी पात्रों ने अपनी भूमिका का निर्वाह समुचित रूप से किया है और नाटक को सफलता के सोपान पर पहुँचाया है।

4 हम नचिकेता :–

प्रस्तुत नाटक के मुख्य पात्र गोपाल व मीरां है। इनके चरित्र को प्रकट करने के लिऐ सहायक व गौण पात्रों के रूप में प्रमोद व उर्मिला है। प्रमोद व उर्मिला भारतीय संस्कृति को छोड़कर विदेशी संस्कृति को अपनाना चाहते हैं, जबकि गोपाल व मीरां विदेशी होते हुए भी भारत से प्रेम करते हैं और यहीं स्थाई रूप से निवास कर लेते है। प्रमोद व उर्मिला की नकारात्मक छवि के कारण गोपाल व मीरां का व्यक्तित्व उभरकर आया है।

'हम नचिकेता' नाटक में गौण पात्रों ने अपने–अपने चरित्र को स्पष्ट करते हुए नाटक की कथा को आगे बढ़ाया है और नाटक को एक सफल उद्देश्य तक पहुँचाया है।

5 ध्रुवश्री :–

यह एक ऐतिहासिक नाटक है। गौण पात्रों की प्रसंगानुसार कल्पना की गई है। इतिहास प्रसिद्ध घटनाओं में कोई परिवर्तन नहीं किया गया है। ध्रुवश्री के राष्ट्रीय चरित्र को उभारने में मणिप्रभा, अग्निमित्र दैमैत्रेय जैसे सहायक पात्रों ने अपनी अमिट छाप छोड़ी है,साथ ही मुख्य पात्र ध्रुवश्री के व्यक्तित्व को उभारने में मुख्य भूमिका रही है।

6 उत्सर्ग :–

प्रस्तुत ऐतिहासिक नाटक में गौण पात्रों ने अपने अपने चरित्र को अच्छे ढंग से प्रकट किया है। मुख्य पात्र के गौरव को बढ़ाने में ही सहयोग दिया है। भीमदेव का मित्र अमरसिंह भीमदेव का पूरा–पूरा सहयोग करता है और उसके चरित्र की विशेषताओं को उभारता है। देवबोधाचार्य भी भीमसिंह के गौरवशाली चरित्र को उभारने में सहायक हुऐ है।

7 सुनहरे सपनों के अंकुर :–

प्रस्तुत नाटक इतिहास और कल्पना पर आधारित होने के कारण नाटक के पात्र ऐतिहासिक एवं काल्पनिक है। नाटक के सभी पात्र चारुदत्त के उज्ज्वल चरित्र को प्रकट करते है। सभी पात्र पाठकों को प्रभावित करने वाले है। चरित्र चित्रण की दृष्टि से यह एक सफल नाटक है।

8 सुखी परिवार :–

'सुखी परिवार' नाटक के अन्य पात्रों का मूल्यांकन करें तो चरित्र–चित्रण की दृष्टि से सफल सिद्ध हुए है। श्रीकर और उसकी पत्नी कमला दोनों धन्य और गोपा के चरित्र से प्रभावित होते हैं । दोनों उन्हीं के अनुसार चलने का प्रयास करते है। बाल चरित्र भी मुख्य पात्रों की विशेषताओं को प्रकट करके अपनी सार्थकता सिद्ध करते है।

9 दायरें :–

यह एक आधुनिक नाटक है। पंचोली जी ने प्रसंगानुसार पात्रों की सृष्टि की है। मुख्य पात्रों के अतिरिक्त गौण पात्रों में भी कहीं भी नाटकीयता नहीं है। सभी पात्र स्वतंत्र रूप से अपना अस्तित्व रखते है। पंचोली जी ने सभी पात्रों के उज्ज्वल चरित्र को प्रकट किया है। रमण भ्रष्टाचार, बेईमानी को रोकने के लिऐ 'पोल खोल समिति' का निर्माण करता है। सरोज और राजेश भी अपना चरित्र बखूबी निभाते है। सभी पात्रों ने कथावस्तु को आगे बढ़ाने में योगदान दिया है।

10 नींव के स्वर :–

प्रस्तुत ऐतिहासिक नाटक में गौण पात्र महाराणा प्रताप के व्यक्तित्व को उभारने के लिए ही प्रस्तुत हुए है। पात्रों की प्रसंगानुकूल सृष्टि की

गई है, जो कथावस्तु को आगे बढ़ाने में सहयोग करते है। सहायक व गौण पात्रों का अभिनय भी प्रभावशाली बन पड़ा है। चरित्र चित्रण की दृष्टि से नाटक सफल सिद्ध होता है।

संवाद

4.4 कथावस्तु को गति प्रदान करने वाले संवाद :–

पात्रों की आपसी बातचीत को कथोपकथन या संवाद कहते हैं। नाटक में इसका विशेष महत्त्व है। संवाद की सहायता से नाटककार कथा वस्तु का विकास करता है,उसमें सजीवता और सरसता लाता है तथा पात्रों के मनोवेगों और विचारों को प्रत्यक्ष कर उसके चरित्रों पर प्रकाश डालता है। संवादों द्वारा पात्रों का चित्रण दो प्रकार से होता है – प्रथम जब पात्रों के परस्पर संवाद से ही उनके बारे में जानकारी प्राप्त होती है तो उसे 'प्रत्यक्ष संवाद' कहते है। दूसरा जब वार्तालाप के प्रसंग में एक पात्र किसी परोक्ष पात्र के बारे में कुछ कहते हैं,तब वह 'परोक्ष चित्रण' कहलाता है।

नाटक प्रायः सर्वसाधारण के लिये रचा जाता है। अतः इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि इसके संवाद कृत्रिम, निरर्थक, अशोभनीय, अरोचक और अस्पष्ट न हो। इसके संवाद सरल, सुबोध और स्वाभाविक हों। संवाद को नाटक की आत्मा माना जाता है। अतः नाटककार द्वारा किया गया एक भी अस्वाभाविक उल्लेख समस्त दृश्य का नाश कर देता है।

पंचोलीजी का नाट्य साहित्य ऐतिहासिक और आधुनिक दोनों है। आपकी काव्यात्मक भाषा ने संवादों को सुंदर और सरस बना दिया है। नाटकों के संवाद कथानक को अग्रसर करने और चरित्रोद्घाटन में भी सहायक सिद्ध होते है। रंगमंचीय दृष्टि से नाटक के संवाद प्रसंग परिस्थिति और उद्देश्य के अनुकूल तो है ही, साथ ही उनमें एक ऐसी सजीवता और प्राणवत्ता भी है, जो नाटक के केंद्रीय पात्र के व्यक्तित्व को उभारते हुऐ पाठकों के लिये जीवनोपयोगी संदेश देने में भी सक्षम है।

पंचोली जी के नाटकों की संवाद – योजना क्रमशः कला के उच्च शिखर की और उन्मुख होती है। नाटकों में संवाद सुष्ठु, सजीव,

स्वाभाविक, जिज्ञासावर्द्धक, सार्थक, प्रसंगोचित, संक्षिप्त एवं रंगमंच के सर्वथा अनुकूल है। इन गुणों से सम्पन्न होने के कारण रोचकता स्वयं ही सिद्ध हो जाती है।

संवाद की दृष्टि से पंचोली जी के नाटकों की विशेषताएँ निम्नलिखित है :–

(1) कथा वस्तु को गति प्रदान करने वाले संवाद :–

नाटक में नाटककार जिन संवादों का विधान करता है, वे कथा को गति प्रदान करने वाले होने चाहिए । जब नाटक के कोई भी दो या दो से अधिक पात्र बातचीत करते हैं तब उनकी बातचीत से कथा को गतिशील बने रहना चाहिए। इस दृष्टि से पंचोली जी के नाटकों के संवादों का मंचन करें तो नाटकों के संवाद कथा को गति प्रदान करते हैं नाटक के संवादों में कहीं भी जड़ता का आभास नहीं होता है। पंचोली के नाटकों से उदाहरण प्रस्तुत है :–

1. लहर–लहर मधुपर्क :–

नाटक का मंचन करने पर यह नाटक गतिशीलता की दृष्टि से सफल सिद्ध होता है। निम्नलिखित संवादों से यह बात स्पष्ट होती है :–

''पौरुष – देवी ! सचमुच मुझे पता नहीं है, पर जो कुछ मेरे सामने घटित हुआ है, उससे आशंका है।

कल्याणी – क्या घटित हुआ है ?

पौरुष – क्या बताऊं ? हम तक्षशिला गुरुकुल में गये थे न! उस दिन आंभी मिला था .....।

कल्याणी – आंभी, गांधार का युवराज? बड़ी डरावनी मुखाकृति है उसकी। मैं उस दिन को भुला नहीं पाती, जिस दिन उसने मुझसे प्रणय–निवेदन किया था और .....।

पौरुष – और तुम्हारे द्वारा अस्वीकार कर दिये जाने पर वह तुमको बलात् अंकशायिनी बनाने की चुनौती देकर चला गया था। यही न ?

कल्याणी – हाँ, मैंने स्पष्ट कह दिया था कि भेड़िये जैसी मुखाकृति वाले व्यक्ति के प्रणय पर मेरा हृदय विश्वास नहीं कर सकता। तभी उसने राजपुरुषों से मुझे पकड़वाने की चेष्टा की थी। आप ठीक समय पर

न पहुँच जाते तो .....ओह.....(आँखों में आंसू भर आते हैं।)''[55]

3 सूत्रधार :–

सूत्रधार नाटक की निम्नलिखित पंक्तियां गतिशीलता को स्पष्ट करती है–

''श्रमिक – स्वामिनी ने इसी वृक्ष को काटने के लिए कहा है?

मालिनी – हाँ, इसी पारिजात को काटना है। देखो, आज संध्या तक कट जाना चाहिए। यदि तुमसे यह काम न हो सके तो कुछ और सहायक बुलवा लो।

श्रमिक – कैसी बात करती हो तुम? मैं राजवर्द्धकि हूँ चौबीसा। एक दिन में चौबीस पेड़ काट कर मैंने यह नाम पाया है।

मालिनी – चौबीसा जी ! आपका नाम तो गुणों के अनुसार ही है, परंतु यह साधारण वृक्ष नहीं है। स्वर्गलोक का पारिजात वृक्ष है यह। देवी सत्यभामा का आदेश है कि इसे काट कर इसकी जड़ें भी खोद कर फेंक दो।

श्रमिक – समय से पहले काम पूरा हो जायेगा। देवी से जाकर कह दो।'' [56]

3 अमृत धुले हाथ :–

प्रस्तुत नाटक के संवाद कथा को गति प्रदान करते हैं। संवादों में कहीं भी रुकावट का आभास नहीं होता है। उदाहरण स्वरूप निम्न पंक्तियां द्रष्टव्य है–

''जया – मैं आपकी विचारधारा नहीं समझ पाऊंगी।

शाकटायन – आचार्य वैशंपायन की शिष्या जया का यह कथन विनयशीलता का द्योतक है।

जया – गंभीर विचारों से भी मन बहलाने की क्षमता होती है–यह कोई आपसे सीखें।

शाकटायन – मेरी बेटी का मेरी उक्तियों से मन बहलता है तो इससे मुझे

प्रसन्नता ही होगी। मैं तो केवल यह कहना चाहता हूँ कि कालातीत तो सत्य ही होता है, असत्य नहीं। अतः तुम्हारे विश्वास में सचाई हो सकती है।

जया – अर्थात् मेरा जयंत कहीं जीवित है। यही न ?

शाकटायन – (प्रसन्न मुख से) हाँ, वह जीवित है। हो चाहे कहीं भी।''[57]

4 हम नचिकेता :–

प्रस्तुत नाटक के संवाद की गतिशीलता निम्न उदाहरण से स्पष्ट है–

''युवती – आपका नाम जान सकती हूँ?

युवक – मेरा .....? मुझे क्रिस्टोफर कहते है। भारत में आकर मुझे गोपाल नाम भा गया है। इसी नाम से अधिकतर मित्रों में जाना जाता हूँ।

युवती – गोपाल अच्छा नाम है। क्या ऐसा सुंदर नाम मेरे लिए भी नहीं सोच सकते ? मुझे क्रिस्टीना कहा जाता है।

युवक – बहुत मीठा, प्यारा नाम है। अपना भारतीय नाम मीरां रख लो तो कैसा रहे?

युवती – ठीक है। नाम पंसद है। मुझे मीरां कहोगे?

युवक – तुम्हारा नाम मीरां हो गया तो कहूँगा क्यों नहीं ?

युवती – मैं भी तुमको गोपाल कहूँगी।'' [58]

5 ध्रुवश्री :–

प्रस्तुत नाटक के संवाद गतिशील है । निम्नलिखित उदाहरण से इसकी पुष्टि होती है–

''बृहद्रथ – पुष्यमित्र इस योजना का विरोध करेंगे, मित्रवर!

सुदत्त – ब्राह्मण का मस्तिष्क व्यवहार की बातों में कम समझता है, सम्राट। पुष्यमित्र की की बात मुझ पर छोड़िए। आपको पता नहीं है, वह स्वयं सिंहासन पर अधिकार जमाना चाहता है।

बृहद्रथ – (घबराकर) तुम्हें यह कैसे पता, मित्र?

सृदत्त – सम्राट का सखा होकर क्या मैं इतना भी ध्यान नहीं रखूँगा?
कलिंग–नरेश खारवेल का यह पत्र आप भी पढ़ लीजिए। (एक पत्र निकालकर देता है।)

बृहद्रथ – (पत्र पर दृष्टिक्षेप करते हुए) इसमें तो लिखा है कि पुष्यमित्र शीघ्र ही मेरी हत्या करना चाहता है।

सुदत्त – सोचिये, कलिंग तक यह बात पहुँच गई है।'' [59]

6 उत्सर्ग :–

प्रस्तुत नाटक के संवाद गतिशीलता के साथ ही कथानक को विकसित करने में भी सहायक सिद्ध हुए हैं। नाटक के संवाद प्रासंगिक कथा को आधिकारिक कथा से जोड़ने वाले हैं।

''भीमदेव – किंतु अमर अभी विरुदावलि बखानने का कौनसा समय है? मैं तो तुम्हारे लिए सदैव भीमदेव ही रहूँगा।

अमरसिंह – मित्रवर, यह आपकी उदारता और मुझ पर अत्यधिक स्नेह है जो मुझे इतना गौरव देते हैं।

भीमदेव – इन सब असंभव घटना चक्रों के घटने से और इतने बड़े राज्य भार के सिर पर आ पड़ने से, कभी उस संबंध में सोचने का अवसर ही नहीं मिल पाया था।

अमरसिंह – किस संबंध में मित्र!

भीमदेव – अरे अमर! उसका श्रम सीकर से सजा मुख हृदय में बस गया है। निकाले भी नहीं निकलता।

अमरसिंह – अच्छा! अब भी आप उस स्वप्न सुंदरी को, मधुर स्वप्न का ही विषय बनाये हुए हैं। अब तो स्वप्न साकार होने जा रहा है। आगे की सोचिए।''[60]

7 सुनहरे सपनों के अंकुर–

प्रस्तुत नाटक के संवाद कथावस्तु को गति प्रदान करने वाले हैं। निम्नलिखित संवाद इस की पुष्टि करते हैं–

चारूदत्त – न्यायाधिकरण को क्यों दोष देते हो? यदि वसंत सेना की हत्या हुई है तो कोई तो हत्यारा होगा ही....।

संवाहक – और हत्यारे को दण्ड भी दिया जाएगा। यही न? पर न्यायाधिकरण अंधा न हो तो ऐसा कैसे मान लेगा कि जीवित व्यक्ति की भी हत्या हो सकती है।

चारूदत्त – तो क्या वसंतसेना जीवित है ?

संवाहक – न्यायाधिकरण को जो घोषणा करनी चाहिए वह मुझे करनी पड़ रही है। श्रीमती वसंतसेना जीवित है'' [61]

8 सुखी परिवारः–

प्रस्तुत नाटक के संवाद कथावस्तु को गतिशील बनाते हुए उसे विकसित करने में भी सहायक सिद्ध हुए हैं। उदाहरण स्वरूप संवाद द्रष्टव्य है –

धन्य – गोपा! आज गोमाता प्रसन्न है।

गोपा – (घर के भीतर से) अच्छा, दुह लो। मैं भोजन बना लेती हूँ।

धन्य – दुह लेता हूँ अभी।

श्रीकर – अरे धन्य ! किस पचड़े में पड़ा है। तुमने सुना कुछ ?

धन्य – भैया ! गाय दुह लूँ। फिर सुनूंगा।

श्रीकर – अरे! गाय तो जिंदगी भर से दुह रहा है। आज बड़े भाग्य जगे हैं हमारे।

धन्य – भाई! कोई अच्छी बात सुनाना है तो ठहर। उतावली क्यों करता है। गोमाता पावस रही है। दूध .....।

श्रीकर – पहले मेरी सुन। भगवान बुद्ध का नाम .....।

धन्य – हाँ, भगवान बुद्ध का नाम सुना है। बड़े तपस्वी हैं।

श्रीकर – वे हमारे गाँव में आये हैं।''[62]

9 दायरेः–

गतिशीलता की दृष्टि से नाटक के संवाद सफल है। पुष्टि के लिए निम्नलिखित उदाहरण द्रष्टव्य है –

''रवि – बुआ! देखो तो कैसी कविता है ?

वासंती – क्या कहा ? कविता ? तुम कविता करते हो?

रवि – (झेंपता हुआ) और कर ही क्या सकता हूँ ? नौकरी की तलाश में सड़कों पर डोलूं या कविता करूं।

वासंती – अभी देखती हूं तेरी रचना। हाथ धोकर आई। (हाथ मलती हुई चली जाती है।)

रवि – बुआ क्या देखेगी ? और देख भी लेगी तो समझेगी क्या? (कुछ सोचकर) शशि को क्यों नहीं बुलाऊँ ? शायद उसे कविता पसंद आ जाए। (द्वार की ओर बढ़कर वापस लौटता हुआ) अथवा शशि भी क्या करेगी ? सवाल कविता का नहीं जिंदगी का है। इसे कौन पसंद करेगा ?'' [63]

10 नींव के स्वर :–

गतिशीलता की दृष्टि से 'नींव का स्वर' नाटक सफल सिद्ध होता है। नाटक के प्रारंभ की पंक्तियाँ ही कथावस्तु को गति प्रदान कर देती है। उदाहरण प्रस्तुत है–

''यशा – अरे.....अरे.....कौन है.....तू कौन है ?

प्रताप – (चौंककर) अयँ, तुम .....तुम कौन हो ? मैं.....मैं..... तो अकेला हूँ.....एक राहगीर.....भटका हुआ .....।

यशा – (ध्यान से देखती हुई) नहीं.....नहीं.....तू नहीं है मुगल। तू नहीं है वैसा।

प्रताप – यों घबराती क्यों हो? बेटी! मैं सचमुच मुगल नही हूँ। तुम डरती हो मुगल से ?

यशा – मैं संता भील की बेटी यशा...किसी से नहीं डरती। भगवान से भी

प्रताप – वाह, मेरी शेरनी बेटी। तुम मेवाड़ की धरती की बेटी हो। सचमुच निडर हो। फिर भी घबरा रही हो ? क्यों ?

यशा – तू बार–बार बेटी कहता है मुझे। मैं संता भील की बेटी हूँ। किसी और की बेटी कैसे हो सकती हूं। ? हाँ मेवाड़ की बेटी तो जरूर हूँ।

प्रताप – मेवाड़ की बेटी तू अपने गुणों से है। अपनी गुणवती बेटियों पर मेवाड़ के हर आदमी को गर्व होना चाहिए। मुझे भी गर्व है। बेटी।'' [64]

इस प्रकार पंचोली जी के नाटकों में वर्णित संवादों का कथावस्तु की गतिशीलता की दृष्टि से विवेचन करने पर स्पष्ट प्रतीत होता है कि नाटक में आये संवाद कथा को गति प्रदान करते हैं।

4.5 चरित्र को उद्‌घाटित करने वाले संवादः–

चरित्र–चित्रण की दृष्टि से संवादों का विशेष महत्त्व है। संवाद चरित्र को उद्‌घाटित करने वाले होने चाहिए। पंचोली जी के नाटकों में ऐसे ही संवाद की योजना की गई है जो चरित्रोद्‌घाटन की दृष्टि से विशिष्ट है। पंचोली जी के समस्त नाटकों के प्रत्येक अंक, प्रत्येक दृश्य, प्रत्येक प्रसंग से आभासित होता है कि संवाद पात्रों की चरित्रगत विशेषताओं के अभिव्यंजक बनकर आये हैं।

उदाहरण के लिए पंचोली जी के समस्त नाटकों के संवाद को लिया जा सकता है–

1 लहर–लहर मधुपर्क –

प्रस्तुत नाटक में आये संवादों का विवेचन करने से स्पष्ट प्रतीत होता है कि नाटक में आये संवाद चरित्र को उद्‌घाटित करने वाले हैं। उदाहरण के लिए कल्याणी एवं पौरुष के संवादों को ले तो उनके वार्तालाप से आंभी के चरित्र के गुण–दोष परिलक्षित होते हैं। संवाद द्रष्टव्य है–

''पौरुष – हाँ, वही हो सकता है। बाद में भी सूचना मिली थी कि पश्चिमी गांधार में स्थान–स्थान पर युद्ध छिड़ा हुआ है। पर यह पता नहीं था कि आंभी युद्ध को इस देश की पवित्र भूमि पर भी आमंत्रित कर सकता है।

कल्याणी – तो क्या आंभी ने यवनों को यहां आने का निमंत्रण दिया है?

पौरुष – अभी निश्चित तो नहीं कहा जा सकता; परंतु प्रतीत ऐसा ही होता है।

कल्याणी – क्या उसे अपनी मातृभूमि पर आक्रमण को आमंत्रित करते हुए लज्जा नहीं आयेगी ?

पौरुष – निर्लज्ज की कोई मातृभूमि नहीं होती। स्वार्थ–साधना ही उसकी माता होती है और पाखण्ड ही उसका पिता।'' [65]

2 सूत्रधारः–

प्रस्तुत नाटक में आये हुए संवाद चरित्र को उद्‌घाटित करने वाले हैं। यहां घोर आंगिरस और रुक्मिणी के संवाद से सत्यभामा के चरित्र का पता चल रहा है। उदाहरण स्वरूप संवाद द्रष्टव्य है–

''घोर आंगिरस – देवी सत्यभामा की ईर्ष्या के तप्तवन ने इसको झुलसा दिया है। उसने इसे नंदनवन से इसलिए प्राप्त किया कि संसार में ऐसा वैभव और सौभाग्य अन्य किसी का न हो सके और आते ही उसने महादेवी रुक्मिणी को व्यंग्य बाणों से आघात पहुँचाना प्रारम्भ कर दिया।

रुक्मिणी – महायोगी! यदि देवी सत्यभामा की ईर्ष्या से पारिजात सूख गया तो फिर यह बाल–पारिजात कैसे उग आया!

घोर आंगिरस – यह तुम्हारी ईर्ष्या का परिणाम है महादेवी! सत्यभामा की यत्किंचित् सफलता का सूचक यह बाल–पारिजात तुम्हारी ईर्ष्या से पनप रहा है। अभी मैंने देवी सत्यभामा से कहा था कि वह 'पारिजात पीला क्यों पड़ता जा रहा है?' इस प्रश्न का उत्तर अपने मन से पूछे। उसी तरह तुमसे भी कहता हूँ कि अपने प्रश्न का उत्तर अपने मन से पूछो।'' [66]

3 अमृत धुले हाथ :–

इस नाटक के संवादों में भी चरित्रोद्‌घाटन की क्षमता देखी जा सकती है। अधोलिखित संवाद से धैर्यबाहु के चरित्र का उद्‌घाटन हो रहा है।

''श्रीविजय – आचार्य श्री ! आपने धैर्यबाहु का नाम नहीं सुना कदाचित्!

शाकटायन – नहीं, कौन है यह ?

श्रीविजय – धैर्यबाहु, प्रभंजन जैसी गति वाला, सूर्य के तेज, पर्वत की दृढ़ता, अश्व के गति–लाघव व सिंह की शक्ति का साकार रूप। यही बतलाया है हमारे आचार्य ने। इससे अधिक हम लोग उसके विषय में कुछ नहीं जानते।

शाकटायन – ऐसी शौर्यमूर्तियों से ही वसुंधरा शोभा पाती है।

श्रीविजय – ऐसे लोगों से यह धरती बोझे भी मरती है कभी – कभी।

शाकटायन – यदि कंस और दुर्योधन जैसे हो जाएँ तो।'' [67]

4 हम नचिकेता :–

प्रस्तुत नाटक से चरित्र को उद्‌घाटित करने वाले संवाद द्रष्टव्य है–

''मीरां – मैं यह कह रही थी स्वामी जी! कि अखंडानंद के साथ मेरी साधना आगे नहीं बढ़ेगी।

शिवानंद – अखंडानंद बड़ा प्यारा शिष्य है मेरा। बड़ा ही आज्ञाकारी, बहुत ही समझदार और होनहार।

मीरां – पर, मुझे वह पशु, साक्षात पशु लगता है। (घृणा की मुद्रा बना कर मुँह एक ओर फेर लेती है।)

शिवानंद – ओहो! (जोर से हंसता हुआ) समझ गया, सब समझ गया। यदि तुम्हें मेरे शिष्य में पशु के दर्शन हो गये तो बड़ी भाग्यशालिनी हो तुम। तुम्हें शीघ्र ही पशुपतिनाथ के दर्शन होने वाले हैं।

मीरां – (झूंझलाकर) पर मैंने कह दिया कि अब मैं उसके साथ साधना नहीं करूंगी।

शिवानंनद – (चिंतित होकर) देखा, साधना तो तुमको करनी पड़ेगी। आखिर इतनी दूर से इस देश में तुम आई किसलिए हो ?

मीरां – (सोच में पड़कर) स्वामी जी! साधना तो मैं करना चाहती हूँ, पर अखंडानंद के साथ नहीं। वह बहुत ही बदतमीज है।

शिवानंद – ओहो! (हँस कर) तो यों कहो। मैं सब समझ गया। कल से तुम मेरे साथ साधना करोगी। अखंडानंद क्या, मैं किसी की भी बदतमीजी सहन नहीं कर सकता।

मीरां – बहुत–बहुत धन्यवाद!'' [68]

5. ध्रुवश्री :–

प्रस्तुत नाटक में आये सभी पात्र अपने संवादों द्वारा व्यक्तित्व के गुण–दोषों को स्पष्ट करने में सफल सिद्ध हुए है। चरित्रोद्घाटन की दृष्टि से खारवेल और जिनसेन के संवादों से ध्रुवश्री के चरित्र का गुण परिलक्षित होता है। संवाद द्रष्टव्य है–

''जिनसेन – मेरा अनुमान है कि यही वह नवयुक है जिसने आपको भिन्न दिशा में सोचने की प्रेरणा दी है।

खारवेल – तुमने ठीक अनुमान लगाया है जिनसेन! ऐसा निर्भीक वक्ता मैंने जीवन में नहीं देखा।

जिनसेन – आकर्षक मुखमंडल ही उसके हृदय की निश्छलता और निर्भीकता का साक्षी है, राजन्!

खारवेल – मैं तो इसे आजीवन सहचर बनाने को तैयार हूं। यह भारत के पश्चिमी सीमांत का निवासी है। यवन–सेना में रह कर भी यह भारतीयता की रक्षा के लिए प्राणपण से सचेष्ट है।

जिनसेन – जिसने कलिंग–नरेश के सहज विरागी मन को बांध लिया, उसके चरित्र की गरिमा को कौन नहीं सराहेगा?'' [69]

6 उत्सर्गः–

प्रस्तुत नाटक चरित्रोद्घाटन की दृष्टि से सफल नाटक है। उदाहरण स्वरूप जैतसिंह और प्रधानमंत्री के संवादों को ले तो भीमदेव के चरित्र की विशेषताएं सामने आती है।

'' जैतसिंह – मंत्रिवर ! यह भीमदेव का सौभाग्य ही कहिए कि वे इतनी कम उम्र में इतने विशाल राज्य के अधिपति बन गए।

प्रधानमंत्री – राजन् ! भीमदेव इस योग्य है भी !

जैतसिंह – आपने ठीक कहा है मंत्रिवर ! भीमदेव की सिंह की सी उठान, घन–गर्जना सा गंभीर घोष और हिमगिरी के प्रस्तर–खंड सा सुदृढ़ वक्षःस्थल उन्हे गुर्जरेश्वर की गरिमा प्रदान करते हैं। उनका व्यक्तित्व बड़ा प्रभावशाली है।

प्रधानमंत्री – भीमदेव कुशल यौद्धा भी है राजन्! उन्हे अपने वंश, कुल और मर्यादा का भी पूरा ख्याल है।

जैतसिंह – हां मंत्रीजी, उनकी लगन और कार्य क्षमता की मैं प्रशंसा करता हूँ। गुर्जरेश्वर अजयपाल के राज्याभिषेक के अवसर पर डेरे से कलंगी लाकर उन्हीं ने दी थी। मैं भेंट में देने वाली उस मूल्यवान हीरों की कलंगी को वहीं भूल गया था।

प्रधानमंत्री – क्या भीमदेव स्वयं गये थे, राजन् ?

जैतसिंह – हां, इससे पहले कि मैं उन्हे मना करूँ, वे चले गए और वैसे भी काम में छोटा क्या, और बड़ा क्या? भीमदेव वह व्यक्ति है, जिसका हाथ लगते ही बड़े से बड़ा और कठिन से कठिन काम भी सुकर हो जाता है।'' [70]

7 सुनहरे सपनों के अंकुर :–

चरित्रोद्घाटन की दृष्टि से यह सफल नाटक है। शर्विलक और गुल्मनायक के संवाद से चारुदत्त की चारित्रिक विशेषताएं प्रकट होती है।

''शर्विलक – देखा नहीं, कल जब आर्य चारुदत्त को वध के लिए ले जाया जा रहा था तब राजमार्ग पर खड़े हुए सभी लोग आँसू बहा रहे थे। दरिद्र व्यक्ति इतना लोकप्रिय हो.....ऐसा कभी सुना है ?

गुल्मनायक – आर्य चारुदत्त की बात छोड़िए। उन जैसा व्यक्ति, धनी हो या निर्धन, सदैव लोकप्रिय बना रहेगा। उनमें इतने गुण हैं कि धन उनके सामने गौण हो जाता है। यदि पालक को अपदस्थ

करने में थोड़ी भी देरी हो जाती तो निश्चय ही उनका वध कर दिया जाता ।

शर्विलक – और उज्जयिनी अपने एक महान् नागरिक को खो देती। हमारा सौभाग्य है कि हमें उन जैसा महामात्य मिला।''[71]

8 सुखी परिवारः–

प्रस्तुत नाटक के संवाद चरित्र को उद्घाटित करने वाले हैं। उदाहरण स्वरूप संवाद द्रष्टव्य है– यहाँ श्रीकर व धन्य के संवादों से भगवान बुद्ध के चरित्र का पता चलता है–

''श्रीकर – वे तपस्वी है। हमसे अधिक ज्ञानी है।

धन्य – माना। वे ज्ञानी है। इसीलिए कहता हूं कि उन्होने परिवार को छोड़ा नहीं है।

श्रीकर – सब तो यही कहते हैं कि .....।

धन्य – कहने दो। नामसझी है?

श्रीकर – तो क्या वे त्यागी नहीं हैं ?

धन्य – त्यागी तो है। उन्होने परिवार का सुख देखा है।

श्रीकर – पर परिवार का सुख छोड़ा न !

धन्य – हाँ, सुख छोड़ा। परिवार नहीं छोड़ा। वे एक बड़े परिवार का सपना देखते हैं। भूतल के सब मानवों का मानव परिवार।''[72]

9 दायरे :–

प्रस्तुत नाटक के संवाद चरित्रोद्घाटन की दृष्टि से सफल है। निम्नलिखित पंक्तियां इसकी पुष्टि करती है–

''सरोज – पर एक मिनिट सोचिए तो क्या पता रमण ठीक कह रहा हो। देवर जी सचमुच ही कहीं चले गए हों।

राजेश – ऐसा कैसे हो सकता है। वह मेरा भाई है। आखिर ईमानदारी से काम करना, और सबको खुश रखना उसने सीखा है। मैं उसके राहत केन्द्र पर एक बार होकर आया हूं। सारे मजदूर उससे खुश है।.....अब भगवान ही मालिक है; पर वैसे

रवि समझदार है। उसे अपना भी ख्याल है और अपने परिवार का भी। ''[73]

10 नींव के स्वरः–

प्रस्तुत नाटक के संवाद पात्रों के चरित्र को उद्घाटित करने वाले हैं। प्रस्तुत नाटक में सैनिक और पुरोहित के वार्तालाप से महारानी के चरित्र का उद्घाटन हो रहा है।

''पुरोहित – महारानी जी मेवाड़ के प्रत्येक गांव में जाकर लोगों में उत्साह भर रही है। इस समय भी यात्रा पर हैं। बड़ी सफलता मिल रही है। लोग अनुभव कर रहे हैं कि राजा प्रजा का सेवक होता है और महाराणा में प्रजानुरंजन के सब आदर्श गुण विद्यमान है।

सैनिक – महाराणा के स्वभाव में सभी मेवाड़वासी सुपरिचित हैं। इसीलिए तो उनके लिए प्राण तक न्यौछावर करने को तत्पर रहते हैं।

पुरोहित – महारानी जी इस आत्मीयता को और अधिक बढ़ा रही हैं। वीराने गांवों को बसा रही हैं। रक्षा व्यवस्था मजबूत कर रही है। घर–घर जाकर लोगों के सुख दुःख का हाल जानती है। रोगियों का उपचार करती हैं। आबाल–वृद्ध उनके स्नेहसूत्र में बंधते चले जा रहे हैं।

सैनिक – वे तो सचमुच मेवाड़ की माता ही है। प्रभु उनको सफलता प्रदान करें।'' [74]

4.6 संक्षिप्तता एवं सहजताः–

डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली जी के नाटकों में प्रयुक्त संवादों की एक विशेषता यह भी है कि वे बड़े लम्बे नहीं है, वे दीर्घता के दोष से मुक्त है, उनकी संक्षिप्तता और सहजता पाठकों को प्रभावित करने वाली है। नाटकों में संक्षिप्तता

एवं सहजता के कारण संवाद रोचक बन पड़े हैं। संक्षिप्तता पंचोली जी के नाटकों का प्रमुख गुण है। संक्षिप्तता एवं सहजता की दृष्टि से नाटकों में आये संवाद निम्नलिखित है–

1 लहर–लहर मधुपर्क –

प्रस्तुत नाटक संक्षिप्तता और सहजता के गुणों से युक्त है। उदाहरण स्वरूप संवाद द्रष्टव्य है–

''कल्याणी – (आशंकित–सी होकर) यवनायन से तुम यहां क्यों आये हो? क्या कोई व्यापारी हो?

आगंतुक – यह तो मैं भी नहीं जानता कि यहाँ क्यों आया हूँ। व्यापारी..... .....हाँ हाँ .....नहीं नहीं....मै व्यापारी .....हूँ.....नहीं..... .....नहीं हूँ।

कल्याणी – क्या बात है ? इतने क्यों घबरा रहे हो ?

आंगतुक – हाँ..... मैं घबरा ही रहा हूँ। मेरी पत्नी ने आत्महत्या की थी। बहुत भली थी वह।

कल्याणी – तो क्या उसकी मृत्यु के बाद तुम देशाटन करके अपना मन बहलाने के लिए यहाँ आये हो?

आगंतुक – हाँ.....हाँ.....मैं इसीलिए आया हूं। मखधन्या में अध्यापक था मैं। वहीं से आया हूं।

कल्याणी – यह मखधन्या नगरी किधर है ?

आगंतुक – मखधन्या को नहीं जानती ? वही है मखधन्या, जहाँ त्रिभुवनजयी अलक्ष्यदल पैदा हुआ है।'' [75]

2. **सूत्रधारः–**

संक्षिप्तता एवं सहजता की दृष्टि से प्रस्तुत नाटक सफल है। उदाहरण द्रष्टव्य है–

''अघोर भैरव – तो इस ओषधि का क्या करूँ ?

सत्यभामा – इसे देवी रुक्मिणी को दे दो। कदाचित वे इसका कोई उपयोग कर लें।

अघोर भैरव – देवी रुक्मिणी को दे दूँ ? .....ठीक है सिद्धौषधि व्यर्थ नहीं जानी चाहिए। मैं महादेवी को देने जा रहा हूँ ..... (जाने को उद्यत होता है।)

रुक्मिणी – (प्रवेश करके) ठहरिये महात्मन्! रुक्मिणी को भी अपराजिता सिद्धौषधि की आवश्यकता नहीं है।

सत्यभामा – महादेवी आप !

रुक्मिणी – हां, बहिन! अपराजिता की तुम्हे आवश्यकता नहीं है तो मुझे भी आवश्यकता नहीं है।

सत्यभामा – हाँ, महादेवी! इस ओषधि का क्या किया जाय ? आप ही बताइए।'' [76]

3. अमृत धुले हाथः–

प्रस्तुत नाटक के संवाद संक्षिप्तता एवं सहजता के गुणों से युक्त है। उदाहरण प्रस्तुत है–

'' वसुमित्र – रोना तो यही है कि धन धर्म के काम में भी नहीं लगा। (उदास हो जाता है)

कुशलभोज – (साश्चर्य) अरे! ऐसा कैसे हुआ ? क्या राजा के मन में दुर्भाव आ गया ?

वसुमित्र – वासुदेव के विषय में ऐसा सोचना पाप का भागी बनना है।

कुशलभोज – तो क्या सार्थवाह लुट गया ?

वसुमित्र – इस देश में लुटेरों का क्या काम ?

कुशलभोज – तो क्या व्यापार में घाटा लग गया? या घर में आग लग गई।

वसुमित्र – नहीं ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। सारे धन को धरती निगल गई।

कुशलभोज – (भौंचक्का सा होकर) अरे! ऐसा कैसे हुआ ? आज तक ऐसा नहीं सुना गया।'' [77]

4. हम नचिकेताः–

प्रस्तुत नाटक के संवाद संक्षिप्तता और सहजता के गुणों से युक्त है। उदाहरण द्रष्टव्य है–

''मीरां – गोपाल ! यह क्या चक्कर है ?

गोपाल – सोच लो क्या चक्कर हो सकता है ?

मीरां – मुझे तो एक्साइज इन्सपेक्टर लगा वह।

गोपाल – हाँ, ठीक सोचा तुमने। दल बल के साथ हमकों स्मगलर मान कर तलाशी लेने आया था।

मीरां – ली फिर तलाशी ?

गोपाल – ली, अच्छी तरह से ली । अफसरशाही का एक उल्लेखनीय नमूना देखा।

मीरां – फिर क्या हुआ ?

गोपाल – निर्बल के बल राम और कृष्ण के चित्र देखकर प्रणाम करके चले गये।

मीरां – और हम लोगों को भगत बना गये।''[78]

5 ध्रुवश्री :–

प्रस्तुत नाटक में सर्वत्र संक्षिप्तता और सहजता से युक्त संवाद द्रष्टव्य है।

''बृहद्रथ – कलिंग–नरेश की शुभकामनाओं के लिए मैं कृतज्ञ हूं।

सुदत्त – सम्राट ! भगवान जिनेन्द्र की संध्याकालीन अर्चना प्रारम्भ हो गयी है। चलिए, दर्शन कर आवें।

बृहद्रथ – (आगंतुक से) भद्रपुरुष! तुम यहीं ठहरों हम अभी भगवान् के दर्शन करके आ रहे हैं।

पुष्यमित्र – (आगंतुक के कंधे पर हाथ रख कर) कलिंग–नरेश की जय हो!

आगंतुक – (चौंक कर आँखें खोलते हुए) अयं, तुम कौन हो ? तुमने मुझे कैसे पहचाना ?

पुष्यमित्र – महामेघवाहन ऐल खारवेल को दूत का वेश धारण करने पर कौन नहीं पहचानेगा ?

आगंतुक – तुम्हारे सम्राट और उनके मित्र सुदत्त ने तो नहीं पहचाना मुझे।

पुष्यमित्र – आंखे बंद करके चलने वाले किसे पहचानेंगे?''[79]

6. उत्सर्ग :–

प्रस्तुत नाटक के संवाद संक्षिप्तता एवं सहजता की दृष्टि से सफल हैं।

''जैतसिंह – नहीं दूत! जो वाग्दान मैं दे चुका, उसका मुझे निर्वाह करना ही होगा।

अमरसिंह – (विनम्रता से) परंतु महाराज! आपने वचन दिया था।

जैतसिंह – मैं अपने वचन पर दृढ़ हूँ दूत!

अमरसिंह – तो महाराज! राजकन्या गुर्जरेश्वर को दीजिए।

जैतसिंह – यह असंभव है दूत! वाग्दत्ता कन्या अन्यत्र नहीं दी जा सकती।

अमरसिंह – (उदासीन होकर) किंतु यह गुर्जरेश्वर सहन नहीं करेंगे।

जैतसिंह – (क्रोध से लाल होकर) क्या गुर्जरेश्वर को ऐसा घमण्ड हो गया है? क्या वे दुस्साहस करेंगे ? वे वाग्दत्ता कन्या को मांगते हैं?

अमरसिंह – (व्यंग्यपूर्वक) मांगते नहीं राजन्! हरण करना चाहते हैं। मैं उसकी सूचना देने आया हूं।'' [80]

7. सुनहरे सपनों के अंकुर–

प्रस्तुत नाटक के संवाद संक्षिप्तता और सहजता से युक्त है।

''चारुदत्त – परिस्थिति मुझे आपकी बात मानने के लिए बाध्य कर रही है।

धूता – आर्यपुत्र! अब घर चलिए रोहित को आश्वस्त कीजिए।

चारुदत्त – बंधु! आप भी अतिथि के रूप में मेरे यहां विश्राम करें।

आर्यक – मैं अपने जीवन की रक्षा के लिए नगर के बाहर छिप कर

रहने को विवश हूं।

धूता – ईश्वर करे, आपका संकट शीघ्र दूर हो। आप अपना नाम तो बता दें।

आर्यक – अभी नाम भी गुप्त ही रहने दीजिए। मेरे नाम से कहीं आप लोगों पर नया संकट नहीं आ जाय।

चारुदत्त – संकट से तो मैं नहीं घबराता, पर आपकी विवशता को समझता हूँ।

आर्यक – अच्छा, तो मैं श्मशान की ओर जा रहा हूँ। कभी इस अपरिचित को स्मरण कर लिया करें।

धूता – भद्रपुरुष! अब आप हमारे लिए अपरिचित नहीं रह गए हैं।'' [81]

8 सुखी परिवारः–

संक्षिप्ता और सहजता की दृष्टि से संवाद–द्रष्टव्य है–

''सोम – तुझे खेलना पड़ेगा।

सुधा – मैं नहीं खेलती जा।

सोम – तु मेरी अच्छी बहिन है। नन्हीं गुड़िया।

सुधा – जा आ रे।

सोम – अच्छा, यह धरती तेरी है बस।

सुधा – ऊँ हूँ , मेरी नहीं है। तुने क्यों कहा था पहले ?

सोम – मैं तो हँस रहा था। धरती भी तेरी? सूरज भी तेरा, मां भी तेरी।

सुधा – जा, मुझे बना रहा है।

सोम – नहीं, बना नहीं रहा, सब तेरे हैं।

सुधा – तू भी मेरा है, मेरा प्यारा भैया।

सोम – हाँ, तेरा भैया हूं। तू मेरी बहिन।''[82]

9. दायरेः–

प्रस्तुत नाटक संक्षिप्तता और सहजता की दृष्टि से सफल नाटक है। पुष्टि के लिए अधोलिखित संवाद द्रष्टव्य है–

''सोमी – तेरा नाम क्या है?

फर्रू – फर्रू उर्फ फर्राटा।

सोमी – मेरा नाम क्या है?

फर्रू – सोमी दादा।

सोमी – तेरा काम क्या?

फर्रू – मौज करना।

सोमी – मेरा काम क्या ?

फर्रू – राज करना।

सोमी – क्या खाता है?

फर्रू – भेजा।

सोमी – किसका रे ?

फर्रू – तुमको छोड़कर सबका दादा ।'' [83]

10 नींव के स्वर :–

प्रस्तुत नाटक के संवाद संक्षिप्तता एवं सहजता की दृष्टि से सफल है। उदाहरण प्रस्तुत है–

''अल्लाबख्श – कौन ? किसको देख रही है, छोकरी ?

सोमा – जो मुझे देख रहा है उसी को देख रही हूँ। कौन हो तुम ? किसने भेजा है तुमको यहां?

अल्लाबख्श – मैं.....मैं.....मुसाफिर हूँ।

सोमा – मुसाफिर हो तो ठीक है। कोई तकलीफ तो नहीं है?

अल्ला बख्श – नहीं .....नहीं.....तकलीफ तो कुछ भी नहीं है।

सोमा – (आँखों में झांककर) तो क्या यहां तकलीफों का बीज बोने के इरादे से आये हो ?'' [84]

4.7 उद्‌देश्योन्मुख संवाद :–

डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली के नाटक जिस उद्‌देश्य को लेकर लिखे गये हैं, वह उद्‌देश्य नाटक में आये संवादों से भी व्यक्त हो जाता है।

इनके नाटकों में प्रयुक्त संवाद ना तो उबाउ है, न ही कमजोर है, न अनावश्यक है और न ही घटना या प्रसंग के विपरीत है। स्पष्ट रूप से नाटकों में वर्णित संवाद उद्देश्य को प्राप्त करने वाले संवाद हैं।

उदाहरण के लिए क्रमशः नाटकों के उद्देश्योंन्मुख संवाद प्रस्तुत है–

1. लहर–लहर मधुपर्क :–

प्रस्तुत नाटक के संवाद उद्देश्य को स्पष्ट करते हैं–

''पहली स्त्री – इतने से दिनों में महारानी ने हमें क्या से क्या बना दिया। आज तक हम पर केवल परिवार का भार था।

दूसरी स्त्री – और अब तो संपूर्ण राष्ट्र को अपने परिवार के रूप में अनुभव कर रही हैं।

पहली स्त्री – हम पढ़ी लिखी नहीं है; पर यह तो समझती ही हैं कि परिवार सुदृढ़–भवन नारी की साधना और सहिष्णुता का फल होता है।

दूसरी स्त्री – जब उसकी साधना और सहिष्णुता व्यापक रूप धारण कर लेती है तब सारा विश्व ही परिवार बन जाता है।

पहली स्त्री – परिवार को बीज की तरह बोना, बिरवे की तरह स्नेह से सींचना और विशाल वटवृक्ष की तरह विकसित हो जाने पर उसकी छाया को सुखद व शीतल बनाना नारी का ही काम है।

दूसरी स्त्री – और, उस परिवार पर किसी तरह का संकट आये तो उसे दूर करने के लिए प्राणों का पण लगा देना भी नारी का ही काम है। ''[85]

2. सूत्रधारः–

प्रस्तुत नाटक उद्देश्योन्मुख संवाद की दृष्टि से सफल है। उदाहरण द्रष्टव्य है–

''रुक्मिणी – समाज की शक्ति बिखर जायेगी।

वासुदेव – शक्ति बिखर सकती है, एकता नष्ट हो सकती है। कलियुग में मिलकर रहने से ही ऐसी संभावनाएं समाप्त हो सकती है – संघे शक्ति कलौ युगे।

सत्यभामा – मिलकर रहने का महत्व तो सभी युगों में रहा है।

वासुदेव – परंतु कलियुग में इसके बिना जीवन–यापन करना संभव ही नहीं है।

रुक्मिणी – हाँ जब तोड़ फोड़ करने वाले ऐसा कर दे और नया निर्माण न कर सकें तब समाज के निर्माता–वर्ग को सक्रिय होना ही पड़ेगा। इसलिए दोनों में सहयोग बहुत आवश्यक है।

वासुदेव – युद्ध का काम सेना करे तो श्रमिक विविध प्रकार के कार्यों में अपनी कुशलता दिखायें, किसान खेती करें और विद्वान इनको ऐसा करने के लिए प्रेरणा दें। समाज के इन विभिन्न घटकों को एकता के सूत्र में पिरोना ही नये युग का प्रभावी–गान हैं।''[86]

3 अमृत धुले हाथ–

प्रस्तुत नाटक के संवाद उद्देश्य को प्राप्त करते हुए सफल सिद्ध हुए हैं।

''जया – ऐसा कहते हैं आर्य ? वीर की पीठ ऐसी निर्बल क्यों होती है ?

गुणाकर – निर्बल नहीं, कोमल होती है। इसीलिए तो वीर शत्रुओं के शल्य छाती पर झेलना चाहते हैं। उनकी पीठ को ढककर सारा देश खड़ा रहे तब बात बने।

जया – हाँ, सारे देश को वीर की पीठ पर खड़े रहना चाहिए।

गुणाकर – वीर की ऐसी कोमल पीठ उघाड़ी रह जाए तो वह देश को कब तक बचा पाएगा? शत्रु उसकी निर्बलता जान जाएगा और एक दिन .....।

जया – नहीं , नहीं ऐसा सूर्य कभी नहीं उगेगा।

वसुमित्र – (शीघ्रतापूर्वक आकर) क्यों उगेगा ऐसा सूर्य ? देश का यौवन जूझेगा, देश का ज्ञान उसमें मंत्र बल जगाएगा, देश के बड़े–बूढ़े उसको प्रोत्साहित करेंगे और देश का बचपन नये–नये सपनों का संसार रचा कर उसको नये भविष्य के दर्शन करायेगा, तब तक तो ऐसा सूर्य नहीं उग सकता।'' [87]

4 हम नचिकेता :–

प्रस्तुत नाटक के उद्‌देश्योन्मुख संवाद द्रष्टव्य है:–

''गोपाल – उठो जागो और श्रेष्ठ पुरुषों के संपर्क में आकर ज्ञान प्राप्त करो। यह मार्ग कवियों द्वारा तीखी तलवार की धार के समान दुर्गम कहा गया है।

मीरां – जागरण की यह लोरी कितनी मीठी है? जीवन को खिलवाड़ समझने वालों के लिए चुनौती है यह। सचमुच तलवार की तीखी धार सा है यह जीवन।

गोपाल – हरे राम! हरे कृष्ण !

मीरां – यह किसका नाम ले रहे हो गोपाल ?

गोपाल – सृष्टि का सबसे रमणीय तत्त्व राम है और सबसे आकर्षक तत्त्व कृष्ण। जीवन में रमणीयता की प्रतिष्ठा करने वाले राम और आकर्षण के चरम केन्द्र कृष्ण इस देश के दो महान् सांस्कृतिक पुरुष हुए हैं।'' [88]

5 ध्रुवश्री :–

प्रस्तुत नाटक के संवाद उद्‌देश्य की दृष्टि से सफल सिद्ध हुए हैं।

''ध्रुवश्री – राजन्! भारतीयता की जिस विशेषता का आपने उल्लेख किया वह सचमुच गर्व की वस्तु है ; परंतु क्षमा करें.....कभी–कभी अपनी सरलता के कारण भारतीय धोखा भी खा जाते हैं।

खारवेल – आत्मीयों से धोखा खाना भी अपने आप में बहुत बड़ी वस्तु है, नवयुवक!

ध्रुवश्री – परन्तु आँखों पर चढ़ा हुआ तथाकथित सरलता का चश्मा आत्मीय की पहचान के विषय में व्यर्थ प्रमाणित हो जाता है।

खारवेल – हो सकता है, परंतु बुराई के डर से अच्छाई का त्याग तो नहीं किया जा सकता।

ध्रुवश्री – आदर्शों के कल्पित मनोराज्य में विचरण करने वाले भोले राजा! तुम क्या जानों कि राक्षस, देवताओं के रूप धारण करके ठगने में पीछे नहीं रहते। यवन–विजेता के आमंत्रण पर शत्रुओं के बीच में आते समय तुमसे किसने कहा था कि तुम अपना खड़ग भी छोड़ आना। सेनाध्यक्ष, जिनसेन! क्या तुम इतनी ही रणनीति जानते हो?

खारवेल – मित्रता अविश्वास पर नहीं पनपती, युवक !

जिनसेन – और कुछ अघटित घट जाने का भय ही मन में समाया हो तो खड़ग ही उस भय को कैसे दूर कर देगी?''[89]

6 उत्सर्गः–

प्रस्तुत नाटक के संवाद उद्देश्य को स्पष्ट करने वाले हैः–

''भीमदेव – वह क्या उद्देश्य है, आचार्यपाद ?

देवबोधाचार्य – हमारे घर, वर, मन सब बंटे हुए है, वत्स! इससे राष्ट्र की शक्ति क्षीण हो जाती है और ब्राह्य आक्रामक हमें पादाक्रांत कर देता है। अपना और अपने राष्ट्र का अस्तित्व बनाए रखने के लिए हमें एकता की शक्ति को समझना होगा। एक होकर शक्ति का आह्वान करना होगा।

भीमदेव – यह तो अच्छी योजना है आपकी।'' [90]

7 सुनहरे सपनों के अंकुरः–

प्रस्तुत नाटक के संवाद उद्देय की दृष्टि से सफल सिद्ध होते है –

''चारुदत्त – आप अपने कर्तव्य को करेंगे तो राज्य भी अपने कर्तव्य के प्रति सजग रहेगा। असामाजिक तत्त्वों और बाहरी आक्रमणों से आपकी रक्षा करना राज्य का कर्तव्य है। राज्य की शक्ति तो नागरिकों की कर्तव्यनिष्ठा में ही निहित होती है।

पहला नागरिक – आर्य! आज्ञा दें। हम देश की समृद्धि और सुरक्षा के सभी प्रयत्नों में आपके साथ है।

चारुदत्त – आप लोग जाइए। जब भी आपको कोई बात कहनी हो आप निस्संदेह मेरे पास आ जाएँ। आप मुझे अपने जैसा ही नागरिक समझें। (सब नागरिक जाते हैं।) यह अवंती राज्य सारे भारत का केन्द्र है। सबका रक्षक होने से ही इसका नाम अवंती है। मैत्रेय! हम सब इसे सुदृढ़ और सुव्यवस्थित बनाने के लिए कृतसंकल्प हैं। हम केन्द्र को सुधारेंगे तो सारा भारत ही सुधर जाएगा।

मैत्रेय – इसमें संदेह ही क्या है? दूसरे को सुधारने के स्थान पर स्वयं को ही सुधारने का प्रयत्न होना चाहिए।''[91]

8. सुखी परिवार–

प्रस्तुत नाटक उद्देश्योन्मुख संवाद की दृष्टि से सफल है–

''धन्य – गो माता है। दूध पिलाकर जीवन देती है। उसकी भक्ति ने मुझे निहाल कर दिया है। कभी–कभी तो ऐसा लगता है कि वह अपने बछड़े का दूध चुराकर मुझे दे देती है।

श्रीकर – हमारे कृषि प्रधान देश में गाय ही धन है। वह परिवार का ठोस आर्थिक आधार होती है।

धन्य – परिवार का ही नहीं, हमारे समाज और राष्ट्र का आर्थिक आधार भी वही है। परिवार और समाज सुदृढ़ आर्थिक आधार के बिना उन्नति नहीं कर सकते हैं।

श्रीकर – यह सही बात है इससे भी बड़ी बात यह है कि गौ के साथ हमारा भावात्मक संबंध है।

धन्य – हाँ, गो माता है। हमारे परिवार का अंग है। सोना, चांदी, रत्नाभरण भी धन होते है ; पर वे निर्जीव होते हैं। गौ सजीव धन है। इसका प्यार–दुलार हमारे मन को तृप्त कर देता है।'' [92]

9 दायरें :–

प्रस्तुत नाटक के संवाद उद्देश्य की दृष्टि से सफल है–

सोमी – उसने कौन सी समिति बनाई है वो? हाँ याद आया 'पोल खोल समिति'।

फर्रू – उसके उद्देश्य कितने स्पष्ट है। समाज में रहकर समाज को गंदा करने वाले, समाज का शोषण करने वाले सभी तत्त्वों का पर्दाफाश किया जाय।

सोमी – और साहित्य रचना करके जन–जन का ध्यान इस ओर खींचा जाय कि जनता ऐसे काले मन वाले लोगों के वास्तविक चेहरों को देखकर उनसे सावधान हो जाए।''[93]

10 नींव के स्वर :–

प्रस्तुत उद्देश्योन्मुख संवादों की दृष्टि से पूर्णतया सफल है। उदाहरण स्वरूप संवाद द्रष्टव्य है–

''सोमा – साम्राज्यवादी शासक प्रजा को यह अधिकार नहीं देते। इसलिए मेवाड़ के निवासी अकबर और उसके शासन

का विरोध करते हैं। अकबर से लड़ाई महाराणा प्रताप की नहीं, मेवाड़ वासियों की है।

वीरभान – भारत में राजा और प्रजा का संबंध .....।

सोमा – शासक और शासित का नहीं है, पिता और संतान का होता है। आदर्श शासक प्रजापालक पिता होते रहे हैं, प्रजानुरंजक होते रहे हैं।

वीरभान – तुम तो बहुत ज्ञानी हो, बहना।

सोमा – नहीं, भैया! मैंने तो एक आखर नहीं पढ़ा। यह जरूर जानती हूँ कि राम राजा राम क्यों थे और सभी मनुष्यों के पिता मनु, मनु क्यों थे?

अमरसिंह – यह जानना ही तो विद्या है। अपने पूर्वजों के गुणों को समझकर उनका अनुकरण करना शिक्षा है।

सोमा – यह सब हमने अपनी धरती की गंध से पा लिया है। हवाओं से सीख लिया है। '' [94]

संदर्भ :–

1. लहर–लहर मधुपर्क, पृष्ठ – 15
2. वही पृष्ठ – 59
3. वही , पृष्ठ – 91
4. वही , पृष्ठ – 111
5. वही , पृष्ठ – 17
6. वही , पृष्ठ – 13
7. सूत्रधार – पृष्ठ – 51

8.	सूत्रधार –	पृष्ठ – 22
9.	अमृत धूले हाथ,	पृष्ठ – 87 – 88
10.	वही,	पृष्ठ – 25
11.	वही,	पृष्ठ – 88
12 .	वही ,	पृष्ठ – 43
13.	वही,	पृष्ठ – 42
14.	हम नचिकेता ,	पृष्ठ – 32
15.	वही,	पृष्ठ – 7 – 8
16.	वही,	पृष्ठ – 50
17.	वही,	पृष्ठ – 72–73
18.	वही,	पृष्ठ– 44
19.	वही,	पृष्ठ –46
20.	ध्रुवश्री,	पृष्ठ – 53
21.	वही,	पृष्ठ – 58
22.	उत्सर्ग ,	पृष्ठ – 28
23.	वर्ही ,	पृष्ठ – 29
24.	वर्ही ,	पृष्ठ – 57
25.	वर्ही ,	पृष्ठ – 21
26.	सुनहरे सपनों के अंकुर ,	पृष्ठ – 43
27.	वही,	पृष्ठ – 55
28.	वही,	पृष्ठ – 35 – 36
29.	वही,	पृष्ठ – 46 – 47
30.	वही,	पृष्ठ – 47
31.	सुखी परिवार,	पृष्ठ – 7
32.	वही,	पृष्ठ – 12
33.	वही,	पृष्ठ – 11
34.	वही,	पृष्ठ – 40
35.	वही,	पृष्ठ – 36

36.	वही,	पृष्ठ – 17 व 24
37.	वही,	पृष्ठ – 20
38.	वही,	पृष्ठ – 23
39.	दायरे ,	पृष्ठ – 61
40.	वही,	पृष्ठ – 10
41.	नींव के स्वर ,	पृष्ठ – 14
42.	वही,	पृष्ठ – 17
43.	वही,	पृष्ठ – 80
44.	वही,	पृष्ठ – 73 – 74
45.	वही,	पृष्ठ – 98
46.	वही,	पृष्ठ – 17
47.	वही,	पृष्ठ – 15
48.	वही,	पृष्ठ – 77
49.	वही,	पृष्ठ – 4
50.	वही,	पृष्ठ – 80
51.	वही,	पृष्ठ – 51
52.	वही,	पृष्ठ – 19 – 20
53.	वही,	पृष्ठ – 79
54.	अमृत धुले हाथ ,	पृष्ठ – 61
55.	लहर – लहर मधूपर्क ,	पृष्ठ – 10 – 11
56.	सूत्रधार ,	पृष्ठ – 11 – 12
57.	अमृत धूले हाथ ,	पृष्ठ – 15 – 16
58.	हम नचिकेता ,	पृष्ठ – 8
59.	ध्रुवश्री ,	पृष्ठ – 9
60.	उत्सर्ग ,	पृष्ठ – 7 – 8
61.	सुनहरे सपनों के अंकुर ,	पृष्ठ – 9
62.	सुखी परिवार ,	पृष्ठ – 5 – 6
63.	दायरे ,	पृष्ठ – 7 – 8

64. नींव के स्वर , पृष्ठ – 13

65. लहर – लहर मधुपर्क , पृष्ठ – 14

66. सूत्रधार, पृष्ठ – 22

67. अमृत धूले हाथ , पृष्ठ – 17

68. हम नचिकेता , पृष्ठ – 36

69. ध्रुवश्री , पृष्ठ – 45 – 46

70. उत्सर्ग , पृष्ठ – 11 – 12

71. सुनहरे सपनों के अंकुर , पृष्ठ – 29

72. सुखी परिवार , पृष्ठ – 7 – 8

73. दायरे , पृष्ठ – 53 – 54

74. नींव के स्वर, पृष्ठ – 56

75. लहर – लहर मधुपर्क, पृष्ठ – 20

76. सूत्रधार, पृष्ठ – 31

77. अमृत धुले हाथ, पृष्ठ – 63

78. हम नचिकेता, पृष्ठ – 34

79. ध्रुवश्री , पृष्ठ – 11 – 12

80 उत्सर्ग, पृष्ठ – 16

81. सुनहरे सपनों के अंकुर, पृष्ठ – 26 – 27

82. सुखी परिवार , पृष्ठ – 27

83. दायरे , पृष्ठ – 56 – 57

84. नींव के स्वर , पृष्ठ – 31

85. लहर – लहर मधुपर्क , पृष्ठ – 37

86. सूत्रधार , पृष्ठ – 66

87. अमृत धुले हाथ, पृष्ठ – 72

88. हम नचिकेता, पृष्ठ – 13

89. ध्रुवश्री , पृष्ठ – 48

90. उत्सर्ग , पृष्ठ – 89 – 90

91. सुनहरे सपनों के अंकुर , पृष्ठ – 43 – 44

92. सुखी परिवार , पृष्ठ – 11 – 12

93. दायरे , पृष्ठ – 58

94. नींव के स्वर , पृष्ठ – 95

अध्याय – 5

डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली के नाटकों में रंगमंचीयता

अध्याय– 5 **डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली के नाटकों में रंगमंचीयता**

5.1 प्रस्तावना

5.2 रंगमंच क्या है ?

5.3 पाश्चात्य रंगमंच

5.4 हिंदी नाटक का रंगमंच

5.5 पंचोली जी के नाटकों में रंगमंचीयता

5.1 प्रस्तावना :–

श्री भरत मुनि प्रणीत नाट्य–शास्त्र में 'नाट्य' शब्द का प्रयोग और व्यवहार बहुत ही व्यापक अर्थ में हुआ है, जिसकी अपनी मर्यादा और विशेष अर्थ–गौरव है। यहाँ 'नाट्य' से तात्पर्य केवल नाटक अथवा रंग से नहीं है, बल्कि इसके अन्तर्गत नाटक(कृति), रंग, वास्तु, अभिनय, रस, छंद, नृत्य, संगीत, अलंकार, वेशभूषा, रंग–शिल्प, उपस्थापन, पात्र और दर्शक–समाज सब है– और इन सब का शास्त्र 'नाट्य–शास्त्र' है। नाट्य–शास्त्र के प्रथम अध्याय का एक सौ सोलहवां श्लोक इस स्थापना को स्वयं प्रमाणित करता है।

न तज्ज्ञानं न तच्छिल्पं न सा विद्या न सा कला।
नऽसौ योगो न तत्कर्म नाट्येऽस्मिन्यन्नदृश्यते।।

अर्थात अध्ययन (श्रव्य एवं दृश्य) से प्राप्त किया ऐसा कोई ज्ञान नहीं है, कोई शिल्प नहीं है, विद्या नहीं है, कला नहीं है, योग नहीं है, कर्म नहीं है, जो इस 'नाट्य' में न देखा जाता है।

5.2 रंगमंच क्या है? :–

सर्वप्रथम रंगशाला एवं रंगमंच के स्वरूप पर विचार करना आवश्यक है। रंगशाला उस भवन या स्थान को कहते हैं जिसके भाग में दर्शक बैठते हैं और उसके सामने वाले भाग में, वह रंगमंच बनाया जाता है जिस पर नाटक का अभिनय किया जाता है। इस प्रकार रंगमंच रंगशाला का एक भाग है। रंगमंच, रंगशाला के उस भाग को कहते हैं, जिस पर नाटक का अभिनय किया जाता है। श्रव्य एवं दृश्य के भेद से काव्य के दो रूप माने गये हैं। श्रव्य–काव्य का संबंध जहाँ श्रवण या पठन

से हैं, वहां दृश्यकाव्य का श्रवण एवं अभिनय से है। नाटक दृश्यकाव्य के अन्तर्गत आता है। इसलिए उसकी सफलता का प्रमाण अभिनेयता है।

आचार्य भरत ने तीन प्रकार की रंग शालाओं का उल्लेख किया है, जो इस प्रकार हैं–

(क) चतुरस्र :– इस प्रकार की रंगशाला की लम्बाई–चौड़ाई समान होती थी। इसके तीन प्रकार मिलते हैं – 108 हाथ का ज्येष्ठ, 64 हाथ का मध्यम एवं 32 हाथ का कनिष्ठ।

(ख) विकृष्ट :– इस प्रकार की रंगशाला की चौड़ाई, लम्बाई से आधी होती थी। इसके भी तीन प्रकार मिलते हैं– 108 हाथ, 64 हाथ एवं 32 हाथ वाले।

(ग) त्र्यस्य :– इस रंगशाला का आकार त्रिकोण के आकार का होता था।

उपर्युक्त रंगशालाओं में 'विकृष्ट' सर्वोत्त्म माना जाता था। 'विकृष्ट' मनुष्यों के लिए, चतुरस्र देवों के लिए एवं 'त्र्यस्य' घरेलू दर्शकों के लिए होते थे।

रंगमंच एक अनुभूति है, उसे हम रंगमंच का आंतरिक पक्ष कह सकते हैं, पर जीवन में इसकी विराटता और समग्रता को देखना और उसके विभिन्न तत्त्वों को सही अर्थों तथा उसके ही अनुपात में समझना, रंगमंच की अनुभूति का व्यवहारिक पक्ष है।

रंगमंच का इसके संपूर्ण अर्थ में ग्रहण अथवा इसकी महत अवधारणा, यह आधुनिक युग के चिंतन और व्यवहार का फल है। प्राचीन अथवा मध्ययुग में मनुष्य ने नाटक की रचना की, उसे खेला, देखा और वह भावमग्न हुआ। वह इतने बड़े रंगमंच का व्यापक प्रयोग अथवा व्यवहार कर रहा है, शायद वह इसके लिए इतना चेतन न था–जितना कि आधुनिक युग रंगमंच के प्रति चेतन और जागरूक हुआ है।

रंगमंच के विषय में आधुनिक युग की चेतना इतनी बड़ी है कि इसे विज्ञान तक का स्तर मिला है। विभिन्न पक्षों में एक दृष्टि से देखकर रंगमंच का एक व्यापक और सही अर्थ इस युग में लिया गया। हम जब रंगमंच कहते हैं, तब हमारी अवधारणा और दृष्टि में इतना व्यापक अर्थ रहता है:

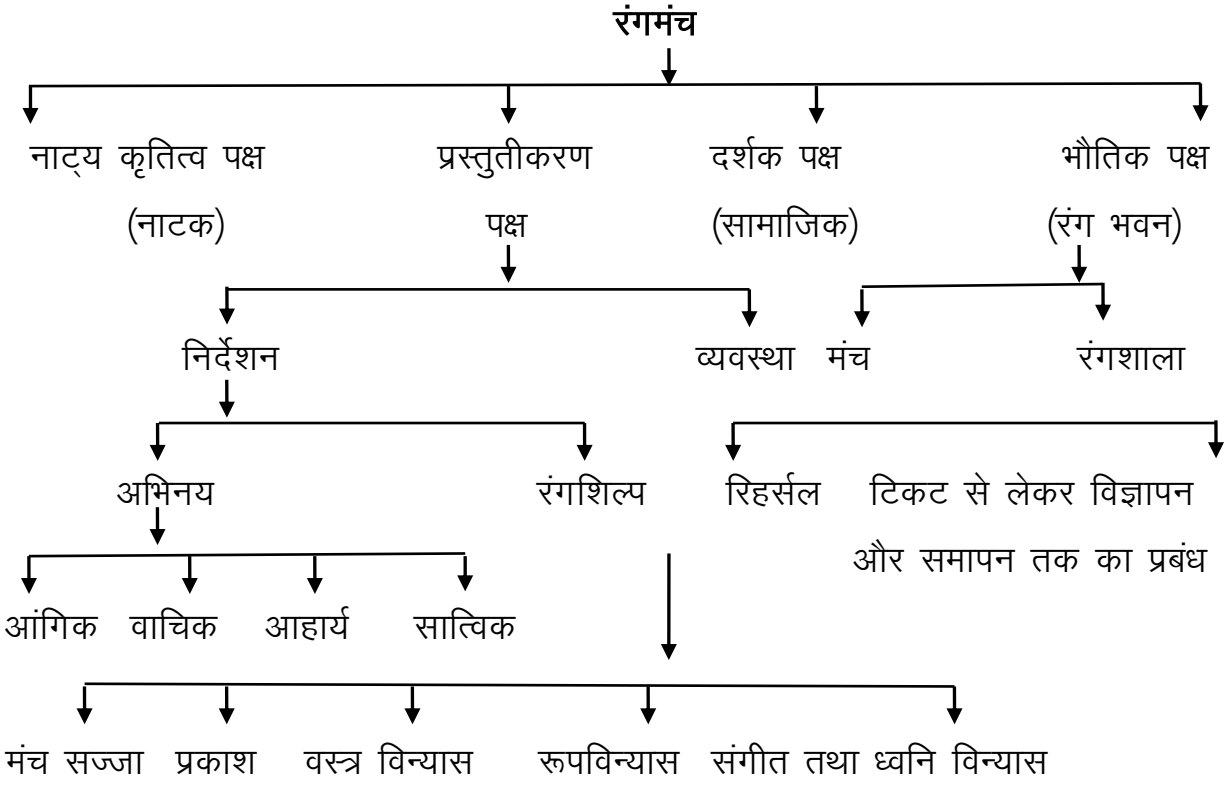

रिचर्ड साउथर्न ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'द सेविन एजेज ऑफ दे थियेटर' में शुरू से आज तक संसार भर के रंगमंच विकास को ध्यान में रखते हुए इसे सात चरणों में अध्ययन करके देखा है।

पहला चरण है – वस्त्र– विभूषित मुखौटाधारी अभिनेताओं का। इस चरण में रंगमंच के अन्य तत्त्व उसके सहायक न हो सके थे।

दूसरे चरण में यही मुखौटाधारी अभिनेता अधिक संख्या और वर्ग में महोत्सव के रूप में आते है। मुक्त आकाशी मंच, चारों ओर दर्शकों से घिरे हुए। यात्रा रूप में, धार्मिकता के तत्त्वों के साथ, पूजा के अवसरों पर। इसी चरण में कुछ लिखित नाट्य अंश का भी समावेश संभव हुआ।

तीसरे चरण में रंगमंच अपने अधिक तत्त्वों तथा साधनों के साथ उजागर हुआ। विचित्रता के स्थान पर सहजता। उमंग और उल्लास के स्थान पर व्यावसायिकता।

चौथे चरण में विशेष मंच का निर्माण। मंच पर अनेक अंकों और दृश्योंवाले नाटकों का उदय। कथा तत्त्व और चरित्र–चित्रण पर आग्रह। पात्रों के आंतरिक संघर्ष और द्वंद्व भाव पर विशेष बल।

पांचवे चरण में रंगमंच का पूर्णरूप से चित्रबंध स्थिति में प्रतिष्ठित होना। विशेष रंगभवनों का निर्माण। रंग शिल्प में दृश्य– सज्जा, प्रकाश व्यवस्था का उदय। नाटक के गूढ़, मर्मस्थलों की समुचित सम्प्रेष्णीयता और उसके अर्थबोध पर आग्रह।

छठे चरण में सत्यभास पर आग्रह। जीवन के यथार्थ बोध को रंगमंच का आधार बनाना और

रंगमंच का **सातवां चरण** है, असत्याभास का। तटस्थता का, अनियमन का।

भरत के पश्चात कोहल, धुर्तिल, शाण्डिल्य, वात्स्य, बादरायण आदि आचार्य मिलते हैं। धनंजय द्वारा रचित 'दशरूपक' रामचंद्रगुण का 'नाट्यदर्पण' शारदातनय का 'भावप्रकाश', रूय्यक का 'नाटक मीमांसा' जैसे नाट्य–सिद्धान्तों के ग्रंथों की अबाध परम्परा से संस्कृत परम्परा गतिशील रही तथा भरत के ही नाट्य–सिद्धान्तों का विवेचन एवं विश्लेषण होता रहा।

हिंदी साहित्य में यह परम्परा अन्य गद्य साहित्य विधाओं की तरह भारतेंदु हरिश्चन्द्र से ही शुरू होती है। जिन्हे पारसी थियेटर की निकृष्ट शैलियों की प्रतिक्रिया ने न केवल इस दिशा में हिंदी को अपने नाटक लिखने की ओर प्रेरित किया, अपितु हिंदी रंगमंच के स्वरूप को निर्धारित करने की ओर उन्मुख किया। इसी परम्परा में आगे चलकर जयशंकर प्रसाद, रामकुमार वर्मा, उपेन्द्रनाथ अश्क, लक्ष्मीनारायणलाल जैसे अनेक मनीषियों ने नाट्य–लेखन एवं नाट्य–चिंतन दोनों स्तरों पर परम्परा का निर्वाह किया।

रंग :–

भारतीय नाट्य की दृष्टि से 'रंग' शब्द अपने आप में संपूर्ण 'नाट्य' के अर्थ का द्योतक है। 'अभिनव भारती' के रचयिता अभिनवगुप्त नाट्य से संबंधित 'रंग' शब्द के तीन अर्थों में से एक अर्थ स्पष्ट करते हुए लिखते है कि

''जिसमें सामाजिक आनंद लाभ करे वह रंग नाट्य है अर्थात रंग शब्द की इस व्युत्पति के अनुसार मुख्य रूप 'नाट्य' रंग कहलाता है।''[1]

'साहित्य दर्पण' के रचयिता आचार्य विश्वनाथ ने– 'भाव प्रकाशन' से उदाहरण देते हुए लिखा है कि ''पूर्वरंग क्या है? इसे जानने से पहले रंग किसे कहते हैं? यह जानना आवश्यक है। 'रंग' का अभिप्रायहै–

''सभापतिः सभा सम्या गायकावादका अपि।
नटी नटाश्य मोदन्ते यत्रान्योन्यानुरंजनात।।''

जीवन में जहाँ कही भी हमें उल्लास, उत्साह, सौन्दर्य दिखाई पड़ता है, अनुभूत होता है, वहाँ हम कहते हैं कि वाह, क्या रंग है। रंग का अर्थ है उल्लास। प्रकृति जब उत्साह दिखाती है, मनुष्य जब उत्साह से भरपूर होता है तो उसमें एक विशेष रंग सहज ही उभर आता है। कला के स्तर पर रंग से अभिप्राय है–'आंतरिक उल्लास और एक संपूर्ण उत्साह।' डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली जी के नाटकों में आनंद, उत्साह, उल्लास के रंग सर्वत्र दिखाई देते हैं।

मंच :–

'मंच' के लिए वामन शिवराज आप्टे 'संस्कृत हिंदी कोश' में इस प्रकार से अर्थ स्पष्ट करते हैं –''शय्या, चारपाई, पलंग, बिस्तर, उभरा हुआ आसन, वेदी, सम्मान का आसन, राज्यासन, सिंहासन, मकान, टाँड, व्याासपीठ, ऊँचा आसन,।''[2]

हमारे यहाँ रंगमंच शब्द नहीं था, हमारे यहाँ रंगभूमि है। 'मंच' शब्द पश्चिम के 'स्टेज' शब्द का सीधा अनुवाद है। मंच अर्थात– एक ऐसी जगह, जो जमीन की सतह से ऊपर उठा हुआ हो।

संस्कृत रंगमंच का सारा बल उसके अभिनय पक्ष पर है। अभिनय के माध्यम से मंचबोध, देशकाल, परिस्थिति का अभिज्ञान तथा उन्हीं के सहारे दर्शकों को नाटक के पात्रों तथा भावों से साधारणीकरण का कार्य, उन्हे परिकल्पित कर कल्पनालोक में ले जाने का धर्म, इतनी मर्यादा है संस्कृत रंगमंच अभिनय की।

आधुनिक रंगमंच में एक्टिंग है–पात्रों के अनुरूप विस्तार करना। हमारे यहां अभिनय है, मन के भावों को अनुकुल करने वाला। तभी इसका

रूप विस्तार बाहर से अधिक और भीतर उतारने वाला है और मानव–मन और प्रकृति की समस्त वृत्तियों और रीतियों को समेटने वाला है।

डॉ. लक्ष्मीनारायणलाल इस बात को प्रमाणित करते हुए लिखते हैं कि ''संस्कृत नाटक को उसके रंगमंच की दृष्टि से पढ़कर ऐसा लगता है कि नाटयकृति रूपी समुद्र में इसका व्यावहारिक रंगमंच उसमें परिव्याप्त अतलस्पर्शी विशाल पर्वत की भांति है जिसमें केवल शिखर पानी के ऊपर दीख पड़ते है, शेष उसके अंतस्थल में रसमग्न रहते हैं।''[3]

रंगमंच जीवन का आदिम सत्य है और मनुष्य की मूलतः आंतरिक वृत्तियों तथा उसकी संपूर्ण शक्ति का सृजन नाटक और नाटकीयता की आत्मा है। रंगमंच की पूर्णता दर्शक तक कृति को सम्प्रेषित करने में है, जिसमें अभिनेता अपने निज के सभी साधनों का उपयोग करता है।

5.3 पाश्चात्य रंगमंच –

पाश्चात्य रंगमंच का प्रादुर्भाव सर्वप्रथम यूनान देश में हुआ जिसे इतिहासकारों ने 'थियेटर ऑफ डायोनिसस' की संज्ञा दी है। डायोनिसस के पूजन–आराधन मुख्यतः वसंत के दिनों में होते थे, जो निश्चय ही यूनानियों के जीवन के लिये अपूर्व आनंद और उल्लास का प्रतीक होता था। 'डायोनिसस' की इस पूजा–पद्धति में पश्चिम के आदि रंगमंच का सूत्रपात हुआ।

'थियेटर ऑफ डायोनिसस' की रंग–प्रतिष्ठा में सर्वप्रथम 'ड्रामा' का उदय हुआ। ई.पू पाँच सौ से लेकर चार सौ ई.पू. तक का सौ वर्षों का समय यूनानी ड्रामा के इतिहास में अत्यंत महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुआ, क्योंकि प्राचीन यूनान के तीन महान् नाटककार–एस्कीलस, सोफोक्लीज और यूरोपाइडीज इसी काल में हुए। इस क्षेत्र में सर्वप्रथम 'अरस्तु' ने लगभग 330 ई.पू. में अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'पोइटिक्स' की रचना की। अरस्तु ने 'ट्रेजडी'–(ड्रामा) को काव्यकला का उत्कृष्ट रूप माना और इसी के आधार से उसने–'ड्रामा' के सिद्धान्तों का विवेचन किया।

''तभी कुछ लोगों का कहना है कि इन काव्यों को 'ड्रामा' इसलिये कहा जाता है कि इनमें कार्य–व्यापार का निदर्शन रहता है।'' 4

'ड्रामा' की शास्त्रीय और व्यावहारिक आलोचना में प्राचीन काल से आज तक काल(टाईम), स्थान(प्लेस) और कार्य (ऐक्शन) के संकलनों की विवेचना होती आयी है।

ग्रीक थियेटर में ड्रामा की व्यापक अन्विति के स्तर पर उनका 'कोरस' तत्त्व आदि से अंत तक एक महत्त्वपूर्ण कार्य करता था, जिससे कि उनकी सारी स्थापना, व्यापक विविधतापूर्ण होती हुई भी 'कोरस' की मूल धूरी से वंचित रहती थी।

दृश्यता के तत्त्व में हर युग के रंगमंच में बड़ी विभिन्नता रही है। ग्रीक, एलिजाबीथन, 'नोह प्लेज ऑफ जापान' तथा काबुकी मंच पर दृश्य–विधान की व्यवस्था नहीं थी। फिर भी इन सारे रंगमंच प्रकारों में उल्लेखनीय दृश्य–प्रधान वस्त्र–विन्यास होता था। ग्रीक ड्रामा का वह कोरस और काबुकी में नृत्य, एलिजाबीथन मंच का वह पात्र समूहन, वह दृश्यांकित गति संचार, यह सब वही दृश्यता ही थी–दर्शक को आकर्षित करने वाली।

दुखान्तकी पश्चिमी देशों की उपलब्धि है। भारत में नाटक की कल्पना 'रस' और 'आनंद' के रूप में की। ईश्वर और शैतान, जीवन और मृत्यु यह विराट् संघर्ष शेक्सपियर की दुखान्तकी की आत्मा है। पश्चिम में दुखान्तकी की यह दृष्टि दर्शन के स्तर से चाहे जो रही हो, पर नाट्यकला और उसकी शक्ति–सम्पन्नता की दृष्टि से अनन्य रही है।

रंगमंच का कृतित्व पक्ष ड्रामा(नाटक) जिस तरह एक कला–रचना है, ठीक उसी तरह रंगमंच का दूसरा पक्ष प्रस्तुतीकरण भी एक स्वायत्त कला है। कला के प्रति पाश्चात्य दृष्टिकोण है कि हर कला, प्रकृति का अनुकरण है। पश्चिम के रंगमंच–इतिहास और उसकी परम्परा में निर्देशक के व्यक्तित्व को बड़ा ही निश्चित और उल्लेखनीय स्थान प्राप्त है। उसे पश्चिम के रंगमंच में रचनाकार और व्याख्याकार दोनों का पद एक साथ मिला है।

पश्चिम के रंगमंच–इतिहास और परम्परा अध्ययन में, आधुनिक युग से पूर्व काल तक में 'रेस्टोरेशन' थियेटर का वर्णन आवश्यक है। 'रेस्टोरेशन' रंगमंच के अन्तिम चरण से ही पश्चिम के रंगमंच में इस सत्य के लक्षण मिलने

लगे कि रंगमंच की दिशा मूलतः यथार्थवाद और उससे प्राप्त नये युग की ओर मुड़ने जा रही है। रंगमंच का वास्तविक संरक्षक अब राजा न होकर समाज का सर्वथा नया वर्ग होने जा रहा है–नागरिक, साहूकार, उदीयमान मध्यवर्ग।

वस्तुतः इसी नये वर्ग ने, दर्शक–भाव से लेकर विषयवस्तु और यथार्थ–बोध तक पश्चिम के रंगमंच को प्रभावित किया। इसी महा प्रभाव से आगे उदय हुआ पश्चिम का आधुनिक रंगमंच।

5.4 हिंदी नाटक का रंगमंच :–

भारतीय रंगमंच के उदय और उससे वैदिक संस्कृति का अभिन्न संबंध रहा है, इसका प्रमाण हमें स्वयं नाट्य–शास्त्र में मिलता है। हिंदी रंगमंच के विकास में अन्य भाषाओं के रंगमंच का पर्याप्त योग रहा है। बंगला रंगमंच का विकास 1900 ई. से प्रारम्भ माना जाता है। अंग्रेजो द्वारा उत्पन्न अनेक अवरोधों के बावजूद उसका विकास नहीं रूक पाया। रवीन्द्रनाथ ठाकुर की रचनाओं ने उसे इतना लोकप्रिय बनाया कि बंगला के बाहर भी उसका प्रभाव जा पहुंचा। हिंदी रंगमंच से इसी समय उसका सम्बन्ध हुआ और परस्पर आदान–प्रदान की प्रवृत्ति बढ़ी। बंगला रंगमंच के माध्यम से हिंदी नाटकों में नये–नये प्रयोग होने लगे। मराठी और गुजराती नाटकों के अभिनय के लिए जो मंडलिया होती थी, वे अपने नाटकों को लोकप्रिय बनाने के लिए हिंदी में उनका अनुवाद करके हिंदी क्षेत्र में भी अभिनय करने के लिए जाती थी।

आरंभ में पारसी रंगमंच गुजराती नाटकों में ही मिलता था। गुजराती के प्रभाव से हिंदी रंगमंच पर पारसी रंगमंच का प्रभाव विशेष बढ़ गया। मराठी और गुजराती के रंगमंच की अलग–अलग विशेषताएँ थी जिन्हें हिंदी रगमंच ने सरलतापूर्वक आत्मसात कर लिया। गुजराती और मराठी के लोक नाटकों में आरंभ में कथा सूत्रों को जोड़ने के लिए सूत्रधार सदैव मंच पर वर्तमान रहता था। वह अपने पात्रों की ओर से स्वयं भी गीतों में उनके मन की बात कहता था और पात्र केवल आंगिक या मौखिक अभिनय कर देते थे।

ज्यों–ज्यों बंगला,मराठी और गुजराती में नये–नये प्रयोग होते गये, त्यों–त्यों इन भाषाओं की रंग मंडलियों के द्वारा उन प्रयोगों का हिंदी रंगमंच में प्रवेश होता गया। पांचवें दशक से अब तक हिंदी रंगमंच यदि किसी भाषा

के रंगमंच से अधिक प्रभावित हुआ है तो वह मराठी का रंगमंच है। बंगला, मराठी और गुजराती के रंगमंच का हिंदी रंगमंच को जो योगदान रहा है, वह हिंदी रंगमंच की अपनी निजी सम्पत्ति बन गया है और उससे हिंदी रंगमंच को एक नयी दिशा मिली है।

भारतेंदु से पूर्व हिंदी रंगमंच का स्वरूप सुनिर्धारित नहीं था। हिंदी रंगमंच की अभिनयात्मक परम्परा के विशद रूप के दर्शन भारतेंदु काल में होते हैं। भारतेंदुयुगीन रंगमंच के दो स्वरूप थे–

(क) व्यावसायिक हिंदी रंगमंच (पारसी रंगमंच)।

(ख) अव्यवसायिक साहित्यिक रंगमंच।

भारतेंदु हिंदी मंच पर अभिनय को पर्याप्त महत्त्व दिया जाता था। उच्च स्वर, संगीतपूर्ण वाणी और सुंदर आकार प्रकार को अधिक प्रश्रय दिया जाता रहा है। अभिनय कला को सुव्यवस्थित और सुसम्पन्न बनाने के उद्‌देश्य से कुछ क्लबों ओर नाट्य प्रशिक्षण संस्थाओं की स्थापना की गयी थी। भारतेंदु का 'सेनीरीडिंग' क्लब' इसका उदाहरण है।

द्विवेदी युग एक प्रकार से संकलन युग है। इसमें संस्कृत नाट्य, यूरोपियन नाट्य, पारसीक थियेटर, लोक नाट्य और हिंदी रंगमंच का अद्‌भुत समन्वय दिखाई देता है। इस युग के नाट्य प्रस्तुतीकरण बहुत कलात्मक नहीं थे। द्विवेदी युगीन अभिनय कला अतिनाटकीयता प्रेरित थी। इसमें हास्य रस और प्रहसन को अधिक प्रोत्साहन दिया जाता था। इसी युग की नागरी नाटक मंडली ने मुद्रित आमंत्रण पत्रों द्वारा दर्शकों को बुलाना आरम्भ किया। द्विवेदी युग का हिंदी रंगमंच के शुद्धता अभियान में महत्त्वपूर्ण योग है।

हिंदी रंगमंच के इतिहास में प्रसाद का अभूतपूर्व योगदान है। इस युग में नाट्य कृतियों को शुद्ध साहित्यिक स्वरूप प्रदान किया गया और इन्हे सुरुचि सम्पन्न भी बनाया गया। इस युग के रंगमंचीय प्रदर्शन अत्यल्प है। इस युग में प्रस्तुतीकरण अपेक्षाकृत जटिल दिखाई देते हैं। जयशंकर प्रसाद अत्यंत समुन्नत और सुविकसित रंगमंच की मांग कर रहे थे। वे कहते हैं ''मैंने उन कम्पनियों के लिए नाटक नहीं लिखे है, जो चार चलते अभिनेताओ को एकत्र कर कुछ पैसा जुटाकर चार पर्दे मंगनी मांग लेती है और अन्नी अठन्नी के टिकट पर इक्केवाले, खोमचेवाले और दुकानदारों को

बटोर कर जगह–जगह प्रहसन करती फिरती है। 'उत्तर रामचरित, 'शंकुतला' या मुद्राराक्षक' कभी न ऐसे अभिनेताओं द्वारा अभिनीत हो सकते है और न जनसाधारण में रसोद्रेक का कारण बन सकते हैं।'' यदि परिष्कृत बुद्धि के अभिनेता हो, सुरूचि सम्पनन सामाजिक हो और पर्याप्त दृश्य काव्य में लाया जाय तो ये नाटक अभीष्ट प्रभाव उत्पन्न कर सकते हैं।

प्रसादोत्तर युग में हिंदी रंगमंच संबंधी अनेक प्रकार के प्रयोग और परीक्षण दिखाई देते हैं। वस्तुतः हिंदी रंगमंच का व्यवस्थित रूप यही प्रकट होता है। इस काल की प्रमुख नाट्य संस्थाओं में पृथ्वी थियेटर्स (मुम्बई), भारतीय विद्या भवन (इलाहबाद), श्री भास्कर नाट्य मंडल (जोधपुर) राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय (दिल्ली) आदि।

प्रमुख रंगकर्मियों में श्री पृथ्वीराज कपूर, डॉ. भानुशंकर मेहता, गोविन्द शास्त्री, बेचन शर्मा 'उग्र', बलराज साहनी डॉ.रागेय राघव, उदयशंकर भट्ट, अमृतलाल नागर, ओम शिवपुरी, विनोद रस्तोगी आदि उद्धरणीय है।

पृथ्वीराज ने पृथ्वी थियेटर्स की स्थापना 15 जनवरी,1944 को मुम्बई में की। वे कहते हैं कि 'पृथ्वी थियेटर्स का निर्माण मैंने इसलिए किया है कि रंगमंच के माध्यम से हिंदुस्तान की आम जनता को शिक्षित व राष्ट्र के लिए जागरूक बना सकूँ ताकि इस विदेशी हुकुमत का जुआ उतार कर जनता फेंक सके।' पृथ्वीराज ने रंगमंच की प्राचीन परंपरा का अनुगमन किया था साथ–साथ देशकाल के अनुसार उसमें परिवर्तन भी किये थे। पृथ्वीराज ने पारसी थियेटर से स्पर्धा कर हिंदी रंगमंच को युगरुचि के अनुकूल सर्वांगीण स्वरूप दिया है। आज का उन्नत रंगशिल्प उनकी साधना और प्रेरणा का ही सुपरिणाम है।

इस युग में नाटक कला विधि का प्रशिक्षण आरंभ हो गया था। नाट्य केन्द्र इलाहाबाद ने सर्वप्रथम प्रदर्शन का तकनीकी प्रशिक्षण आरंभ किया। भारतीय नाट्य संघ के लखनऊ, इलाहाबाद, शिमला अधिवेशन ऐतिहासिक महत्त्व के सिद्ध हुए है। इस काल का हिंदी रंगमंच सर्वथा आधुनिक कहा जा सकता है।

वर्तमान हिंदी रंगमंच ने पात्र अभिनेता और अभिनय के क्षेत्र में कई प्रयोग किये हैं। अभिनय कला की दृष्टि से वर्तमान रंगमंच

विकासोन्मुख कहा जा सकता है। मंच निर्माण की दिशा में हिंदी रंगमंच ने सफल प्रयोग किये हैं। आज का हिंदी रंगमंच चटकीली बनावटी रंग सज्जा के विरूद्ध है। इस युग में यथार्थवादी रंग सज्जा पर बल दिया जाने लगा है। नाट्यारंभ, नाट्यांत संबंधी प्रयोग, प्रकाश से प्रयोग, ध्वनियों पर प्रयोग अनेक नये–नये प्रयोग मंच से संबंधित किये जा रहे है।

समसामयिक हिंदी रंगमंच शिल्प प्रयोग स्तर और अपनी विविध कलात्मक उपलब्धियों के कारण महत्त्वपूर्ण है। इसने परिणाम तथा उत्कृष्टता दोनों दृष्टियों से अन्य विदेशी विभाषी रंगमंचों से सफल स्पर्धा की है और अपनी अनन्त सम्भावनाओं सहित यह अनूदित प्रगति की ओर उन्मुख दिखाई देता है। निःसंदेह हिंदी रंगमंच का भविष्य अत्यंत समुज्ज्वल है।

नाटक की वास्तविक कसौटी इसकी पांडुलिपि नहीं, अपितु रंगमंच है। जिस प्रकार व्यक्ति प्रत्यक्ष रूप से अपने शरीर में नहीं, अपितु अपने कर्मों के दपर्ण में देखता है। उसी प्रकार नाटक भी पाण्डुलिपि में नहीं, रंगमंच में अभिव्यक्त होता है। नाट्य–लेखन तो रंगमंच की तलाश है और नाटक लिखना रंगमंच ढूंढना है। अतः रंगमंच के लिए नाटक की रचना होनी चाहिए।

5.5 पंचोली जी के नाटकों में रंगमचीयता

स्वातंत्र्योत्तर नाट्याकाश में जो तारा चमकता हुआ दिखाई देता है वह है डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली। रंगचेतना उनके नाटकों का प्राण बनी। पंचोली जी का रंगदर्शन नाटक और रंगमंच को पूर्णतः समर्पित एक रंगकर्मी का दर्शन है। उनके इस रंगदर्शन में नाटक और रंगमंच या रंगमंच और नाटक में कही भिन्नता नहीं । रंगमंच एक सनातन दृष्टि है ऐसा कहने वाले पंचोली जी है। अपने मूल और मिट्टी से जुड़े भारतीय नाट्य और रंगभूमि का अद्‌भुत समन्वय है।

आज नाटक को जनसाधारण के बीच लाने वाले, दर्शक और नाटक के बीच की खाई पाटने, लोकमंच और लोकशैली को भारतीय परिवेश में और अधिक महत्त्वपूर्ण बनाने की चेतना डॉ. पंचोली में अत्यधिक दिखाई देती है। मानव ही मानव के लिए सबसे अधिक कौतुक का विषय रहा है।

पंचोली जी का रंगमंच यही से शुरू होता है, मानव अपने और अपने परिवेश के साथ निरन्तर संघर्ष करता है, क्योंकि हर मनुष्य में कहीं न कही एक प्रेरक शक्ति होती है, जो उसे हमेशा क्रियाशील रखती है और उसमें कही न कही आदर्श होता है, जो उसे मंत्र की तरह, सुन्दरता की तरह बाँधे रखता है।

डॉ.पंचोली का यह रंगमंच कौतुकता, परिवेश से संघर्ष फिर भी आदर्श और सुन्दरता के मंत्र से पुता हुआ संपूर्णतः भारतीय रंगमंच की कल्पना को साकार करता है।

नाटककार डॉ.पंचोली के नाटकों की अन्तर्यात्रा से नाटक और रंगमंच के अन्तःसंबंध के माध्यम से उनकी रंगदृष्टि को और भी अधिक अच्छे ढंग से समझा जा सकता है। 'लहर–लहर मधुपर्क' नाटककार की प्रथम रचना है। इस नाटक में यथार्थवादी रंगमंच की जकड़न मजबूत है। प्रथम अंक के रंगमंचीय दृश्य भारतीय पद्धति पर आधारित है। यह पूर्णाकार नाटक पाँच अंकों में विभक्त है। यह स्थूलकाय रचना है। पट–परिवर्तन द्वारा ही दृश्य–परिवर्तन एवं अन्तराल की सूचना दी जाती है। 'लहर–लहर मधुपर्क' शीर्षक प्रतीकात्मक है। 'लहर–लहर मधुपर्क' वितस्ता नदी के तट पर पौरुष के पराक्रम से अलक्ष्यदल को पराजित करने का दृश्य है। राष्ट्रीय एकता का भाव प्रकट हुआ, अतः 'लहर–लहर मधुपर्क' नाम सार्थक हुआ। प्रथम अंक में प्रमदवन का दृश्य है। रंगमंच पर पृश्ठभूमि में कुछ पेड़–पौधे दिखाई देते हैं। द्वितीय अंक में संध्याकाल के वितस्ता नदी के तट का दृश्य है। रंगमंच पर संध्या का वातावरण उपस्थित करने के लिए प्रकाश कम दिखाया गया है। तीसरे अंक में नगर के बाहर के एक चतुष्पथ का दृश्य है। रंगमंच साधारण ढंग से सज्जित है। चतुर्थ अंक में वितस्ता नदी का तट परंतु दिन के तीसरे पहर का दृश्य है। युद्ध का दृश्य है। पर्दे की पीछे सैनिकों की ललकार व उनके शस्त्रों की झंकार कभी–कभी सुनाई पड़ जाती है। मंच पर तीव्र प्रकाश है जो धीरे–धीरे कम होता जाता है। इससे ढलती हुई संध्या का दृश्य सामने आ जाता है। पंचम अंक में महर्षि दाण्ड्यायन के आश्रम का दृश्य है। साधारण कुटिया है। कुटिया के पास ही एक ओर दूर तक कपडत्रे की कनाते तनी है। यह आतुरालय है जिसमें से पात्र मंच पर प्रवेश करते हैं कुटिया के बाहर प्रस्तर खंड है उस पर महर्षि ध्यानावस्था में आसीन है।

सामने यज्ञ–वेदी है। रंगमंच पर सभी दृश्य स्पष्ट दिखाई दे रहे हैं। नाटक का अंत सुखांत है।

'सूत्रधार' नाटक में तीन अंक है। यत्किंचित् परिवर्तन के साथ तीनों अंकों के लिए एक ही मंच व्यवस्था पर्याप्त है। नाटककार ने मंच सज्जा के निमित दिशा निर्देश नाटक के प्रारंभ में दिया है। 'रंगमंच यदि 30 हाथ लम्बा और 20 हाथ चौड़ा हो तो सामने की ओर 10 हाथ चौड़ा राजमार्ग होगा। पृष्ठभूमि में पीछे की ओर उपवन की लगभग 8 फीट ऊँची दीवार दिखाई देगी जिसमें बाँई और उपवन 8 हाथ चौड़ा द्वार दिखाई पड़ रहा है। राजमार्ग और उपवन की दीवार के बीच में बची हुई कम से कम 8 हाथ चौड़ी पट्टी में मंच पर दाहिनी और बाल–परिजात का आलवाल है। उपवन के द्वार के ठीक पास ही पत्थर की दो चौकियाँ बैठने के लिए रखी हुई है। यह द्वारिका के राजोद्यान का दृश्य है जिसके सामने राजमार्ग है। तीनों अंको में किंचित परिवर्तन के साथ मंच–सज्जा एक सी ही है।

प्रस्तुत नाटक में हास्य सायास अधिक सहायक है। इस नाटक में व्यंग्य व हास्य दोनों समान रूप से उत्पन्न होते हैं। लकड़हारा चौबीसा की बातें हास्य पैदा करती है तो सत्यभामा व रुक्मिणी का वार्तालाप व्यंग्य से भरा है वृक्ष काटने का दृश्य परदे के पीछे आवाज के द्वारा स्पष्ट किया जाता है। नाटक के घटित घटनाक्रम को आपसी वार्तालाप से स्पष्ट किया गया है।

'अमृत धुले हाथ' यह नाटक लोकनाट्य पद्धति को आधार लेकर लिखा गया है। सर्वप्रथम रंगमंच पर सूत्रधार प्रवेश करता है। नाटक की भूमिका को समझाने का प्रयास करता है। सूत्रधार का सूत्रधारिणी भी सहयोग करती है।

'अमृत धुले हाथ' पाँच अंकों में विभाजित है। नाटककार ने प्रत्येक अंक के लिए मंच सज्जा हेतु स्पष्ट निर्देश दिए हैं। प्रथम अंक में नाटककार ने कुटिया के भीतर का दृश्य इन पंक्तियों के साथ स्पष्ट किया है 'मंच के ऊपर धीरे–धीरे प्रकाश फैलता है। प्रसिद्ध वैयाकरण शाकटायन रोग शैया पर पड़े दिखाई देते हैं। छोटी–सी कोठरी के बाहर आंगन का दृश्य है। रोगी की परिचर्या के लिए आवश्यक कतिपय वस्तुएँ काष्टपीठ पर रखी हुई है। शाकटायन खाँसते हुए चारपाई पर उठ कर बैठ जाते हैं। नीचे चारपाई के पास कतिपय चटाईयाँ पड़ी है। उन्ही में से एक

पर उनकी पुत्रवधू जया बैठी है।' दृश्य शाकटायन के बोलने से शुरू होता है। दूसरे अंक में राजमार्ग का दृश्य है। साधारण सज्जा में दृश्य स्पष्ट हो रहा है। तीसरे अंक में दिन के चतुर्थ प्रहर का और उज्जयिनी की एक गली के नुक्कड़ का दृश्य है। नागरिकों की वेशभूषा सामान्य है, परन्तु कुलवृद्धों की वेशभूषा विशिष्ट है। चतुर्थ अंक में एक घर के बाहर का दृश्य और सामान्य मार्ग का दृश्य है। पंचम अंक में प्रथम अंक के समान किंचित हेरफेर के बाद का दृश्य है। रंगमंचीयता और अभिनेयता की दृष्टि से यह नाटक सफल है।

'हम नचिकेता नाटक' तीन अंकों में विभाजित है। साथ ही प्रत्येक अंक तीन–तीन दृश्यों में भी विभाजित है। प्रस्तुत नाटक का नाट्य–संरचना शिल्प बिलकुल नया है। नाटक में लोकगीत व संस्कृत श्लोकों का वर्णन ताजगी उत्पन्न करता है। नाटककार ने संवाद एवं अभिनय के माध्यम से सम्प्रेषित करने का प्रयास किया है। 'हम नचिकेता' नाटक का दृश्यात्मक आधार सुदृढ़ है।

नाटक के प्रथम अंक के पहले दृश्य में रंगमंचीय सज्जा का वर्णन इस प्रकार किया है –'आबू के टूरिस्ट बंगलॉ के एकान्त प्रकोष्ठ की सज्जा सामान्य है। बीच में एक सुंदर मेज है। उसके आसपास तीन कुर्सियां पड़ी हुई है। कोने में लकड़ी का दीवान है जिस पर एक विदेशी नवयुवक (गोपाल) बैठा हुआ है। वह गंभीर विचार में मग्न है। सोचते–सोचते बीच–बीच में कभी 'हरे रामा, हरे कृष्णा' का उच्चारण करता है।' प्रथम अंक में पहले दृश्य का अभिनय इसी सज्जा पर सफलतापूर्वक खेला गया है। प्रथम अंक के शेष दो दृश्य भी इसी रंगमंचीय सज्जा पर सफलतापूर्वक मंचित किए जा सकते हैं।

रंगमंचीय अभिनय की दृष्टि से यह नाटक सफल है। बिना तड़क–भड़क के सामान्य साज–सज्जा में प्रभावी मंचन इस नाटक का हो जाता है।

नाटककार डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली का सर्वाधिक मंचित व सर्वाधिक सफल नाटक 'ध्रुवश्री' है। यह नाटक प्रदेश, देश व विश्व के अनेक राष्ट्रों में सफलतापूर्वक मंचित हुआ है। डॉ.पंचोली जी कहते हैं ''ध्रुवश्री नाटक राजस्थान के महाविद्यालयों, विद्यालयों में तो अनेक बार मंचित हुआ ही है साथ ही गुजरात राज्य में भी

मंचित हुआ है। इतना ही नहीं त्रिनिनाद में भी सफलतापूर्वक खेला गया है। यह नाटक सौ से भी अधिक बार मंच पर खेला गया है।''

ध्रुवश्री तीन अंको के सोलह दृश्यों में विभाजित है। पर्दा गिराकर दृश्य परिवर्तन का संकेत किया गया है। वह घटनाएं जो मंच पर नहीं खेली गई उन घटनाओं को पात्रों के आपसी वार्तालाप द्वारा स्पष्ट किया गया।

अगले दृश्य की भूमिका पूर्व के दृश्य में पात्रों के वार्तालाप से प्रकट कर दी गई है। मगध सम्राट बृहद्रथ के वध का दृश्य मंच पर नहीं दर्शाया गया। केवल नेपथ्य से इस आशय की सूचना प्रदान की गई। भारतीय रंगमंच में हत्या के दृश्य नहीं दिखाये जाते, इसी का पालन नाटककार ने किया है।

युद्ध के दृश्य भी नाटककार ने नहीं दिखाए। युद्ध की घटना का वर्णन अन्य पात्र के मुख से करवाया है। 'ध्रुवश्री' नाटक प्रेरणाप्रद ऐतिहासिक नाटक है। अतः मंच सज्जा व वेशभूषा भी समय के साथ एकात्म भाव वाली है।

अभिनयात्मिकावृत्ति की अभिव्यक्ति होती है नाटक की दृश्यात्मक परिकल्पना में। इसे हम दो दृष्टियों से लक्ष्य कर सकते हैं–प्रथम–दृश्यात्मक परिकल्पना की आंतरिक अन्विति कार्य व्यापार और द्वितीय इसका बाह्य दृश्य बंध। जिसमें नाटक का संपूर्ण कार्य व्यापार पिरोया गया होता है। 'ध्रुवश्री' नाटक को अभिनेयता का पर्याप्त बल प्राप्त हुआ है। 'ध्रुवश्री' नाटक में ध्रुवश्री पुरुष वेश में रहकर राष्ट्र के लिए कार्य करती है। संपूर्ण अभिनय सटिक है।

'उत्सर्ग' नाटक तीन अंकों में लिखित है। प्रत्येक अंक में पांच–पांच दृश्य है। पुरुष व स्त्री पात्रों की वेशभूषा तत्कालीन समय के अनुरूप क्षत्रिय वेश है। नाटककार ने प्रत्येक दृश्य से पूर्व मंच सज्जा व समय का संकेत किया है। प्रस्तुत नाटक रंगमंच पर सफलतापूर्वक खेला गया है। जब नाटककार का नाटक रंगमंच पर खेला जाता है तभी नाटककार की सार्थकता सिद्ध होती है।

प्रथम अंक के प्रथम दृश्य में नाटककार ने संकेत दिया है–मार्ग में सम्राट भीमदेव और अमरसिंह शेवड़ा एक वृक्ष तले विश्राम करते हुए दिखाई दे रहे हैं। समय–मध्याह्न। इस संकेत के अनुसार मंच सज्जा में वृक्ष तथा पूर्ण प्रकाश होने पर दृश्य में सजीवता आ जायेगी।

द्वितीय दृश्य में दरबार का दृश्य है। उसी अनुरूप मंच सज्जा का निर्देश दिया गया है। मंत्रिगण यथास्थान बैठे हैं। चौथे दृश्य में 'चंद्रावती के पास गुर्जरेश्वर भीमदेव का सैन्य–शिविर लगा हुआ है। भीमदेव एक पटमण्डप के सामने व्याग्रावस्था में घूम रहा है। समय मध्याह्न। नाटककार ने प्रत्येक दृश्य के लिए मंच सज्जा कैसी हो इस हेतु निर्देश दिए हैं। प्रत्येक दृश्य का परिवर्तन पर्दे के गिरने से होता है। इस नाटक में जहां राजमहल का उल्लेख है वहां महल का पर्दा दिखाकर मंच पर नाटक प्रस्तुत किया जा सकता है। डॉ. पंचोली जी ने अपना नाटक यथार्थवादी मंच पर प्रस्तुत करने योग्य लिखा है। उनका रंगमंच क्लिष्ट नहीं बल्कि सरल है। रंग सज्जा का कोलाहल नहीं है। खर्चीले रंगसज्जा की आवश्यकता भी नहीं है।

'सुनहरे सपनों के अंकुर' नाटक तीन अंको का है। प्रत्येक अंक की मंच सज्जा भिन्न–भिन्न है, परंतु साधारण है। प्रथम अंक के प्रारंभ ने नाटककार ने मंच सज्जा हेतु निर्देश देते हुए लिखा है– 'मंच पर सामान्य मार्ग का दश्य दिखाई देता है। बीचों बीच एक गोल चबूतरा सा है। उस पर ताण्डवरत शिव की मूर्ति प्रतिष्ठित है। रात्रि का प्रारम्भ, धीरे–धीरे अंधेरा बढ़ता जाता है। मंच पर अंधेरा रहता है। केवल पात्रों के मुख पर विद्युतप्रकाश पड़ता रहता है। अंधेरा धीरे–धीरे घना होता जाता है।' अतः दिए हुए संकेत में कहीं भी तड़क–भड़क वाली मंच सज्जा नहीं है।

द्वितीय अंक की मंच सज्जा हेतु नाटककार ने संकेत दिया है कि– 'समय प्रातःकाल, स्थान–उज्जयिनी के राजसभागार के बाहर का भाग। मंच पर पृष्ठभूमि में राजसभागार के द्वार का दृश्य दिखाई देता है। द्वार बंद है। मंच पर 3–4 काष्ठासन पड़े हुए हैं। एक पर बैठकर शर्विलक चारुदत्त की प्रतीक्षा कर रहा है।'

तृतीय अंक के लिए संकेत है–'स्थान–चारुदत्त के भव्य भवन का बाह्य प्रतीक्षागृह। समय–दिन का तीसरा पहर। मंच पर साधारण सज्जायुक्त प्रतीक्षागृह का दृश्य दिखाई देता है। पृष्ठभूमि में मध्य में भवन के भीतर प्रवेश करने का द्वार है जो यथावश्यकता खुल कर बंद हो जाता है। उसी से पात्र भीतर जाते हैं और बाहर आते हैं। मंच पर आने–जाने वालों के बैठने के लिए 5–7 काष्ठासन हैं। एक ओर लम्बा काष्ठासन है। पात्र कभी बैठकर और कभी खड़े रहकर वार्तालाप करते हैं।

प्रस्तुत नाटक में नाटककार ने मंच सज्जा और रंग निर्देश स्पष्ट रूप से दिया है। प्रकाश व्यवस्था व समय का निर्देश दिया हुआ है। इन निर्देशों के माध्यम से संपूर्ण नाटक आराम से खेला जा सकता है।

'सुखी परिवार' नाटक अंकों में विभाजित नहीं है। यह नाटक चार दृश्यों में विभाजित है। इस नाटक के सभी दृश्य एक ही स्थान पर घटित हुए हैं। अतः एक प्रकार की रंग सज्जा संपूर्ण नाटक के लिए पर्याप्त है। एक मध्यवर्गीय परिवार की घटना इस नाटक में वर्णित है। अतः मंच सज्जा उसी अनुरूप है। समय–प्रातःकाल, चबूतरे के ऊपर चारपाई पड़ी है। पास ही खूंटे पर गाय बंधी हुई है।'

नाटककार ने इस नाटक में सभी दृश्य सूर्योदय के समय के लिखे है, अतः संपूर्ण नाटक में प्रकाश व्यवस्था भी एक समान रहेगी। केवल पर्दे के गिरने व उठने से दृश्य परिवर्तन का संकेत मिलता है।

'दायरे' नाटक तीन अंको में विभाजित समसामयिक विषय पर आधारित नाटक है। नाटक के प्रथम अंक में डॉ.पंचोली जी ने मंच सज्जा हेतु निर्देश दिया है–' मध्यवर्गीय परिवार के ड्राइंग रूम का दृश्य। सुरुचिपूर्ण सज्जा। एक ओर तीन–चार कुर्सियां पड़ी है। उनके बीच में मेज रखी है। मंच के ऊपर कमरे में आने के के दो द्वार दिखाई पड़ते हैं। एक पृष्ठभाग में है, दूसरा बाँई ओर। पृष्ठभाग का द्वार फ्लेट के अंदर प्रवेश करने का है और बाँई ओर वाला बाहर सड़क पर से आने का। राजेश, शशि आदि पात्र बाहर से बाएँ द्वार से प्रवेश करते हैं। इसके विपरीत वासंती, सरोज आदि पात्र भीतर से पीछे के द्वार से आते हैं। बाँई ओर के द्वार की ओर एक दीवान पड़ा है। जिस पर गाव–तकिया लगा है। प्रकाश पूरे मंच पर समान रूप से पड़ रहा है। पात्र कभी कुर्सी या दीवान पर बैठकर और कभी खड़े–खड़े बातें करते हैं।'

इस नाटक मे पंचोली जी ने एक मध्यवर्गीय परिवार के बैठक में घटनायें दिखाते हैं। खर्चीले रंगसज्जा की आवश्यकता नहीं है। सरल रंगमंच पर नाटक खेला जा सकता है। सभी अंक इसी सज्जा को आधार मानकर लिखे गये हैं। अतः थोड़े से परिवर्तन के साथ पूरा नाटक एक प्रकार की मंच सज्जा में खेला जा सकता है। लेखक ने अंको में अंतराल के लिए अंधेरे का प्रयोग किया है। अर्थात अंधकार द्वारा अंतराल का संकेत मिलता है।

'नींव के स्वर' नाटक तीन अंको में विभाजित है। प्रत्येक अंक पांच–पांच दृश्यों में बंटा हुआ है। नाटककार ने प्रत्येक अंक के प्रत्येक दृश्य की मंच सज्जा हेतु स्पष्ट संकेत किया है। चूंकि यह इतिहास रस वाला नाटक है। अतः मंच सज्जा भी उसी अनुरूप की गई है। प्रथम अंक के प्रथम दृश्य के लिए नाटककार लिखते हैं–'' 31 मई,1576 का दिन। हल्दीघाटी के घमासान युद्ध में मुगल सेना पीछे हट गई। पर युद्ध अनिर्णित रहा। महाराणा प्रताप घायल चेतक पर बैठकर युद्ध भूमि से बाहर निकल गए। उस समय का दृश्य है। मंच पर एकांत रास्ते की दृश्य सज्जा। घोड़े को पीछे छोड़कर प्रताप आगे बढ़ आए है। नेपथ्य से घोड़े के हिनहिनाने की आवाज आती रहती है। महाराणा बार–बार चितिन्त मुद्रा में आकाश की ओर देखते रहते हैं। उनके चेहरे पर निराशा की झलक तनिक भी नहीं है। कई बार मुक्का तानकर निश्चयात्मक दृढ़ता का परिचय देते हैं। समय–सूर्यास्त से पूर्व का।

प्रथम अंक के दूसरे दृश्य के लिए नाटककार से संकेत किया है– 'एकलिंग देवालय को जाने वाले मार्ग का दृश्य। मंच पर पहले दृश्य की सज्जा में कुछ परिवर्तन किया गया है। मार्ग बांयी ओर तिरछा जा रहा है। एक पत्थर की चौकी पर महारानी बैठी हुई है। कभी चिन्तित मुद्रा में खड़ी होकर चल देती है और फिर मुड़कर बैठ जाती है।

प्रथम अंक के तीसरे दृश्य में मंच सज्जा हेतु नाटककार ने संकेत दिया है–मंच पर झोंपड़ी पृष्ठभूमि में दिखाई दे रही है। मंच पर खुली जगह पर अमरसिंह, वीरभान और सुखराज वार्तालप कर रहे हैं। झोंपड़ी की ओर जाने वाली एक पगडंडी दिखाई दे रही है। 'समय–प्रातः सूर्योदय के पूर्व का।

प्रथम अंक के चौथे दृश्य में–मेवाड़ के एक गांव का बाहरी भाग। पृष्ठभूमि में कुछ कच्चे झोंपड़े दिखाई पड़ते हैं। सामने खुला मैदान है।

प्रथम अंक का पांचवाँ दृश्य –मंच पर ग्राम की चौपाल का दृश्य है। पृष्ठभूमि में गांव के एक मकान का पिछला हिस्सा दिखाई देता रहता है। समय– संध्याकाल। चौथे व पांचवे दृश्य में मंच सज्जा में किंचित परिवर्तन करके नाटक खेला जा सकता है।

नाटककार ने प्रस्तुत नाटक में ग्रामीण पृष्ठभूमि को ध्यान में रखकर मंच सज्जा की है। अतः सरल व साधारण है। पूरे नाटक में लगभग एक जैसी ही मंच सज्जा है। थोड़े–थोड़े परिवर्तन से अलग–अलग दृश्यों को मंच पर खेला जा सकता है।

संदर्भ :–

1. नाट्य शास्त्र – भरत मुनि 116 वाँ श्लोक

2. नाट्य शास्त्र – भरत मुनि

अध्याय – 6

डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली के नाटकों में शिल्प–विधान

अध्याय–6 डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली के नाटकों में शिल्प–विधान

भाषा अभिव्यक्ति का सबसे सशक्त माध्यम है। साहित्यिक विधा होने के कारण कलात्मक अभिव्यक्ति नाटक का महत्त्वपूर्ण तत्त्व हैं। कलात्मक भाषा और शैली नाटक का आधार है। मनुष्य कहीं भी रहे, किसी भी स्थिति में रहे, मौन धारण करके नहीं रह सकता है। वह जिस स्थिति में होता है, उसी के अनुकूल उसके मन में विचारों का वेग उमड़ने लगता है और वेग जब अधिक बढ़ जाता है तब वे विचार बाहर आने के लिए कसमसाने लगते हैं। इसी कसमसाहट को व्यक्त करने के लिए भाषा का प्रयोग किया जाता है। अन्य सब तत्त्व उपयुक्त और संगत होने पर भी यदि भाषा अथवा प्रतिपादन शैली दोषपूर्ण हो तो प्रभाव खंडित हो जाता है। व्यक्तिगत प्रतिभा ही नाटककार की निजी शैली का निर्माण करती है। प्रतिभाशाली लेखक जानता है कि भाषा पात्रानुकूल और शैली अभिव्यंजना शक्ति से पूर्ण होनी चाहिए। घटना और चरित्र का पूर्ण प्रभावपूर्ण उद्‌घाटन ही भाषा तथा शैली का गुण है। भाषा शैली देशकाल और वातावरण के अनुकूल तथा सहज और स्वाभाविक होनी चाहिए। विचार और परिस्थिति की संगति इसकी सफलता का मानदंड है। शैली सरल, सरस और प्रभावपूर्ण होनी चाहिए। शैली के भाव का विशेष ध्यान रखा जाना अपेक्षित होता है।

डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली जी के नाटकों में भाषा :–

पंचोली जी द्वारा रचित नाटकों की भाषा सहज, सरल, व्यावहारिक एवं प्रभावशाली है। इनके नाटकों की भाषा में तद्‌भव और तत्सम शब्दों का अच्छा तालमेल स्पष्ट दिखाई देता है। नाटककार ने समग्र नाटक में प्रारंभ से अंत तक ऐसी भाषा का प्रयोग किया है जो न केवल सहजग्राह्य हैं, अपितु सामाजिक, धार्मिक परिप्रेक्ष्य को भी उजागर करने में समर्थ है। इनके नाटकों में उचित शब्दावली का प्रयोग किया गया है। इनके नाटकों की भाषा विषयानुकूल, प्रेषणीयता, प्रभावशाली, स्पष्टता, भावुकता, सोद्‌देश्यता इत्यादि गुणों से युक्त है। इनके नाटकों में मुहावरों और कहावतों के प्रयोग भी भरे पड़े हैं। नाटकों में भाषा सरल एवं बोलचाल की भाषा है। भाषागत विशेषताओं का विस्तार से वर्णन इस प्रकार है–

6.1 मुहावरों का प्रयोग :–

पंचोली जी के नाटकों में मुहावरों का प्रयोग पर्याप्त मात्रा में हुआ है। मुहावरे लोक जीवन की सम्पत्ति है। इनके नाटकों में लोक जीवन से संबंधित मुहावरों का प्रयोग किया गया है। जिससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि वो अपनी भाषा को लोक जीवन से जोड़ रहे हैं। पंचोली जी ने नाटकों में मुहावरों का प्रयोग कर रोचकता प्रदान की है। इनके नाटकों में आए मुहावरों के उदाहरण प्रस्तुत हैं–

(i) लहर–लहर मधुपर्क :–

1. अन्यथा मैं उसके मुँह पर थूक कर आती।[1]
2. आत्मोन्नति की साधना छोड़कर अब तुम एक नृशंस हत्यारे के हाथ की कठपुतली बन बैठे हो ?[2]
3. विषैले तीर इन्हीं के द्वारा छोड़े गये लगते थे। [3]
4. मन के लड्डू फोड़ने वाला विश्वविजय करने चला है।[4]
5. वह तो ऐसे अदृश्य हो गई जैसे उसे धरती ही निगल गयी हो। [5]
6. श्रीमान् यह सोचने का समय नहीं है। युद्ध का पासा एक ही झटके में पलट सकता है। [6]

(ii) सूत्रधार :–

1. वासुदेव का मुझसे प्रेम प्रदर्शित करना उन्हे फूटी आँखों भी नहीं सुहाता था। [7]
2. यह तो मेरे पराक्रम को दाँतों तले अंगुली दबा कर देखता ही रह गया।[8]
3. पारिजात को क्या काट डाला–जी का जंजाल हो गया। [9]
4. अंधकार और प्रकाश की आँख मिचौनी तो समाप्त होगी ही दीदी। [10]

(iii) अमृत धुले हाथ :–

1. फिर भी मुनुष्य उसको तिलांजलि नहीं देता। [11]
2. इस बात का लोहा आचार्य सांदीपनि भी मानते हैं। [12]
3. यों बिना पैंदे के लोटे मत बनो आर्य गुणाकर जी। [13]

4.

5. हमको ईंट का जवाब पत्थर से देना चाहिए। [14]
6. जो आप लोगों को जोड़–तोड़ करना हो कर लेना। [15]
7. जहाँ वे एक–दूसरे की टांग खींचने और पगड़ी उछालने का अभिनय करते हैं।[16]

(iv) हम नचिकेता :–

1. कितने ही उसमें आकंठ मग्न हो जाते हैं, कितने ही चुल्लू भर से आचमन करते है।[17]
2. पुण्य कार्यों में सौ का सीर होता है। [18]
3. ऐसी शुभ–घड़ी आयेगी तो बहती गंगा में हाथ धोना कौन नहीं चाहेगा? [19]

(v) ध्रुवश्री :–

1. वह कट्टर ब्राह्मण है, उसे श्रमण फूटी आँखों भी नहीं सुहाते। [20]
2. हाँ, आँख के अँधों को प्रतिशोध लेने की बात तब सूझती है जब विदेशी शत्रु अजगर की तरह सारे राष्ट्र को निगलने के लिए तत्पर हो रहा हो।[21]
3. तेवर बदलना सिखाया किसने है ? तुम्हीं ने तो। [22]
4. दैमेत्रेय और सूसेन क्रोध से दाँत पीसते हुए एक ओर चल देते हैं। [23]

(vi) उत्सर्ग :–

1. मित्रवर, आपने मेरे मुँह की बात छीन ली। [24]
2. सेनापति नहीं आए और मेरी बाँई आँख फड़क रही है। [25]
3. राजकुमारी इच्छिनी देवी दिल्लीश्वर की परिणिता होगी और इस कार्य में जो बाधा डालेगा, उसे मौत के घाट उतार दिया जायेगा। [26]
4 परंतु बिना युद्ध हमारी आन–बान की रक्षा हो जाती है तो इसमें कोई बुराई नहीं है।[27]
5 हाँ, शृंगार करो, सखि! बलि के बकरे को भी वधस्थल पर ले जाने के लिए ऐसे ही सजाया जाता है ?[28]

6 पाणिग्रहण का कार्य इस तरह हो जाना चाहिए कि किसी को कानों कान खबर न हो। [29]

(vii) सुनहरे सपनों के अंकुर :–

1. आप तो सौभाग्य के वरद पुत्र रहे ही हैं। [30]
2. भद्रपुरुष ! उसको बनाए रखने के लिए मुझे अपने पैरों पर खड़े होने दो। [31]
3. चारुदत्त, मेरे मार्ग का कांटा अब निकल गया। [32]
4. आर्यपुत्र! आपको सामने देख कर हर्ष हृदय में नहीं समा रहा है। [33]
5. पहले प्राणों की बाजी लगा कर आर्यक को कारागार से मुक्त किया। [34]
6. इसके लिए तुम लोग कोई भी ऐसा समाज–विरोधी कार्य मत करो कि तुम्हारे ऊपर कोई अंगुली उठाए।[35]
7. मुझे बहिन मानकर आर्य सेनापति अपने व्यक्तित्व का अपमान तो करेंगे ही, मेरी हँसी भी उड़ाएँगे। [36]

(viii) सुखी परिवार :–

1. अरे धन्य ! किस पचड़े में पड़ा है। [37]
2. उसे हमारा भला–बुरा सोचने का अधिकार है। [38]
3. साहस टूटने पर धीरज बंधाएँ।[39]
4. काम करते–करते मन की गाँठें खुल जाती हैं। [40]
5. किसी के मन में वैर भाव हो तो उससे ही मित्रता। [41]

(ix) दायरे :–

1. हाय राम ! सूरज पश्चिम में उग आएगा तब तो। [42]
2. तो कान पकड़ा जाए इसके लिए। [43]
3. डाल लो डायरी का अचार। [44]
4. छोड़ो ये बातें। बेकार सिर खपाने से क्या लाभ। [45]
5. एक महीने फाका करना पड़ेगा सिलाई मशीन खरीदने के लिए। [46]
6. क्या बताऊँ रमण, इस महंगाई ने तो कमर ही तोड़ दी। [47]

7. रवि लौट आएगा और दूध का दूध, पानी का पानी सामने आ जाएगा। [48]
8. पुलिस के मारे वैसे ही नाक में दम है। [49]

(x) नींव के स्वर :

1. पर, हम क्या कर रहे हैं, इसकी कानों कान किसी को खबर न हो। [50]
2. आँखों से आँसुओं की झड़ी लग जाती है। [51]
3. बहुत अच्छा! कोई और पूछता तो कहता दूध से कुल्ले कर रहा हूँ। [52]
4. आप चिंता न करें। फूंक–फूंककर कदम रखना होगा। [53]
5. गाँव–गाँव में सिर पर कफन बांधकर अलख जगाने वाले युवक हैं। [54]

6.2 बोलचाल के शब्दों का प्रयोगः–

डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली जी के नाटकों में बोलचाल के शब्दों का प्रयोग भी हुआ है। बोलचाल के शब्दों के प्रयोग द्वारा नाटककार ने नाटक की भाषा को सहज और सर्वजन हिताय रखने का प्रयास किया है। इस दृष्टि से उदाहरण द्रष्टव्य है–

(i) लहर–लहर मधुपर्क :–

1. अन्यथा मैं उसके मुँह पर थूक कर आती। [55]
2. (कान पर हाथ रखती हुई) बस करो। देख ली तुम्हारी सभ्यता और संस्कृति। [56]
3. रात में शत्रु की आँख बचाकर नदी पार करना मेरे लिए असह्य है। [57]
4. और, काम बिगड़ गया तो उत्तरदायित्व किसका होगा? [58]
5. आप मुझे गधा कह रहे हैं ? [59]

(ii) सूत्रधार :–

1. यदि तुमसे यह काम न हो सके तो कुछ और सहायक बुलवा लो। [60]
2. गृहस्थ का काम गृहस्थी संभालना होता है। [61]
3. तभी तो वानरों की तरह उछल–कूद करता हूँ। [62]
4. किसको, क्या नहीं हो गया है ? [63]

(iii) अमृत धुले हाथ :–

1. हाँ, ठीक कहा–अपना काम नहीं है। इसका लेखा–जोखा करना। [64]
2. पर बेटी ! मेरे बाद तुम्हारा क्या होगा ? यही सोच–सोच कर .....। [65]
3. ऐसे लोगों से यह धरती बोझे भी मरती है कभी–कभी । [66]
4. काम तो है पर बहुत ही साधारण । [67]
5. भैया ! तुमने भी क्या बात कही है ? [68]

(iv) हम नचिकेता :–

1. हमें आँखे दिखाने लगी ? बड़ी लाट बन रही हो। [69]
2. नहीं, चखना नहीं शाब । क्या पता शाब जहर हो। [70]
3. अभी तो एक ही खाऊँगी स्वामी जी। [71]
4. ऐसा सराहने योग्य भाग्य कहाँ लिखाया है साहब हम गरीबों ने। [72]
5. अंग–अंग खोला कर दिया नासपिट्टों ने । [73]
6. अरे दईमारे माँ भी कहता है और मुझसे यह भी पूछता है कि तुम कौन हो ? [74]
7. अरी भागवान ! साता से बात कर। बेटे को तकलीफ नहीं होगी क्या तेरे अण्ट–सण्ट बकने से। [75]

(v) ध्रुवश्री :–

1 तुम्हें यह कैसे पता चला, नवयुवक ? [76]

2 अयँ, ऐसा कैसे हो सकता है ? [77]

3 मैं भी यही सोचता हूँ। अब क्या करना चाहिए ? [78]

4. कुमार, देखो तो यह शव किसका है ? [79]

5 बाहर कौन है ? जो भी हो अंदर आ जाओ, भाई। [80]

6 बहिन, यह तुम क्या कह रही हो ? [81]

(vi) उत्सर्ग :–

1. यह क्या कह रही हो राजकुमारी, परमार कुल पर कैसी विपत्ति आ गई ? [82]

2. अभी जाकर पता लगाता हूँ, महाराज ! [83]
3. मैंने तो तुमसे पहले ही कहा था अमर ! वह अवसर तो निकल गया। [84]
4. तो हम बिना भोजन किए जा रहे हैं। इसके लिए कोई हमें दोष न दें। [85]
5. मीनल ! तुमने मुझे जगाया भी नहीं। मैं तो थक कर सो गई थी। [86]

(vii) सुनहरे सपनों के अंकुर :–

1. चुप रहो। मैं अभी बता दूँगा कि तुम कौन हो ? [87]
2. नहीं भाई ! रहने दो। क्या पता दूसरे हाथ को भी फिर बंधन में पड़ना पड़े। [88]
3. भाभी ने लुहार को भी बुलवाया है। आ जाने दीजिए उसे, वह हथकड़ी और बेड़ी दोनों को काट देगा। [89]
4. तुम इतना अन्न उपजाओ कि देश में कोई भूखा नहीं रहे। [90]
5. आपने कहा कि आपका इस संसार में कोई नहीं है। क्या यह सच है ? [91]

(viii) सुखी परिवार :–

1. अच्छा, दुह लो। मैं भोजन बना लेती हूँ। [92]
2. सूरज उगने वाला है। चिड़िया मीठा गाना गा रही है।गाय रंभा रही है।[93]
3. वाह वाह, क्या बात कही है। [94]
4. है तो कठिन काम, पर हमारे लिए तो सरल ही है। [95]
5. हाँ सूरज सबका है। धरती सबकी माता है।हम सब उसकी संतान हैं। [96]
6. मेरी बेटी दो घरों को उजालेगी। जो इसे पाएगा, भाग्य को सराहेगा। [97]

(ix) दायरे :–

1. अरे बहू! पढ़ लिखकर क्या भाड़ झोंकी तुमने। [98]
2. अरे रमण, कब आए ? तुम्हारे दोस्त तो कहीं बाहर गए हैं। सुनाओ कोई नई पुरानी गप्प। [99]

3. भाभी! एक बात कहूँ। नाराज मत होना। [100]
4. तुम लोग क्यों मेरा प्राण खाते हो। [101]
5. बताओ नी तो। पण ऊ मान्यो कोनी नी। फेर भाव ताव की बात करी तो समझ्यो ई नी। करमफोड़ हो म्हारा बेटा को। [102]
6. कुछ नहीं रे ! सबका इलाज यह है। [103]

(x) नींव के स्वर :–

1. मैं संता भील की बेटी यशा .....किसी से नहीं डरती। भगवान से भी नहीं। [104]
2. तो यह बताओ कि खेड़ा के और लोग कहाँ है ? [105]
3. क्या बक–बक कर रही है ? आगे भी तो बोल। [106]
4. बड़ी मेहरबानी होगी। [107]
5. अभी तो दिन उगा है। देखना, सारे दिन में कितने खुशी के समाचार मिलते हैं। [108]
6. लाली ! पढ़ी–लिखी हो ? [109]
7. तो इसमें किसको एतराज हो सकता है ? [110]

6.3 लोकोक्तियों का प्रयोग :–

डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली जी के नाटकों में जितना सुंदर मुहावरों का प्रयोग किया गया है उतना ही सुंदर लोकोक्तियों का भी प्रयोग किया गया है। लोकोक्ति लोक–जीवन की सम्पत्ति है। यही कारण है कि सभी लोग जीवन में इसका प्रयोग करते है। पंचोली जी ने नाटकों में लोकोक्तियों का प्रयोग किया है। इसके प्रयोग से नाटकों की भाषा प्रभावशाली बन पड़ी है। नाटकों से उदाहरण द्रष्टव्य है –

(i) लहर–लहर मधुपर्क :–

1. निर्लज्ज की कोई मातृभूमि नहीं होती। [111]
2. स्वयं को असाधारण दिखाने वाले लोग ही मुझे गये–बीते लगते हैं। [112]
3. वे किसी शासक की रक्षा के लिए प्राण नहीं देते। उनके प्राण इतने सस्ते नहीं होते। [113]

4. सम्राट ! भागिये। शत्रु तीरों की बौछार कर रहा है। [114]

(ii) सूत्रधार –

1. बिन सेये कीकर फले, सेये फले न आम। [115]
2. यह क्या अमृत घोल रहे हैं महर्षि कानों में। [116]
3. जब आप कुल्हाड़ी चलाते हैं तो कब उठाते हैं और कब मारते हैं इसका पता तक नहीं चलता। [117]

(iii) अमृत धुले हाथ :–

1. मैं कच्ची कोड़ियों से नहीं खेला हूँ। [118]
2. जैसी तेरी घूघरी वैसे मेरे गीत। [119]
3. ऐरा–गैरा नत्थु–खैरा तो नहीं। [120]
4. पर सबके हाथ में सत्ता आ जाने से 'नाई की बारात में ठाकुर ही ठाकुर' कहावत चरितार्थ हो जाएगी। [121]
5. शत्रु सीमा पर आकर ताक–झांक कर रहा है और इधर ये अपनी–अपनी ढपली पर अपना राग अलाप रहे हैं। [122]
6. ये लोग चिकुटी से चने फोड़ने की बात करते हैं। [123]
7. मन के लड्डू सबको मीठे लगते हैं। [124]
8. हाँ, मरियल कुत्ते की तरह होने पर भी भीड़ में वह स्वयं को सिंह की तरह समझता है। [125]

(iv) हम नचिकेता :–

1. जाने भी दो, तुम अपनी ढपली पर अपना राग अलापते रहोगे। [126]
2. दूर के ढोल सुहावने होते हैं बाबू। [127]
3. इस धरती में आम बोने वाला आम खायेगा और बबूल बोने वाला कांटों से पीड़ा पायेगा। [128]
4. माँ के दूध को लजाने वाले कपूत और ही होते हैं। [129]
5. जैसे हृदय में किसी ने अमृत उँडेल दिया हो। [130]
6.

(v) ध्रुवश्री :–

1. आपने रक्षा नहीं की तो इसका और मगध का सम्मान धूल में मिल जाएगा। [131]
2. परंतु जब कुछ लोग राष्ट्ररक्षा के लिये प्राणों की आहुति देने के लिए तत्पर हो रहे हों। [132]
3. आवश्यकता हुई तो यवनवाहिनी का प्रत्येक सैनिक काँटों की शैया पर सोने को तैयार हो जाएगा। [133]
4. पाप का घड़ा भरने पर फूटता ही है। [134]

(vi) उत्सर्ग :–

1. फिर जब सीधी उँगली घी निकल जाए तो लड़ने की जरूरत ही क्या है ?[135]
2. मीनल, जो बोया है वह तो काटना ही पड़ेगा। [136]
3. तो तुम यह कहना चाहती हो कि मेंढक को अपना कुँआ ही सबसे लुभावना प्रतीत होता है। [137]
4. ठीक है, अब मैं आ ही गया हूँ। ओखली में सिर दिया तो मूसल से क्या डर। [138]

(vii) सुनहरे सपनों के अंकुर :–

1. अन्यायी राजा का राज्य मिट्टी के ढेले से भी गया बीता है। [139]
2. पैर बंधे होने से दौड़ कर पालक को नहीं पकड़ सकता अन्यथा आर्यक के मार्ग के कांटे को सदा के लिए निकाल देता। [140]
3. स्वार्थ भावना मित्रता की नींव को खोखली बना देती है। [141]
4. रस्सी जल गई, पर ऐंठन नहीं गई। [142]

(viii) सुखी परिवार :–

1. हर धर्म–कर्म में साथ। उसके बिना जीवन की बगिया ही सूनी । [143]
2. अपनों के लिए श्रम करना भार नहीं लगता। [144]

3. माँ ने कहा है कि सारी धरती अपनी है। वीरों को सब जगह जाने की छूट है। [145]
4. हमारे खेत सोना उगलते हैं। [146]

(ix) दायरे –

1. डायरी के हाथ लगा भी लिया तो पहाड़ तो नहीं टूट पड़ा। [147]
2. हमें उन सभी लोगों को सबक सिखाना है जिन्होने नई पीढ़ी के मार्ग में कांटे बिछाए। [148]
3. म्हूं चांदी को जूतों केबूं हूं ईं न। अब थे जाणों बापजी। [149]
4. सारी गड़बड़ चांदी के टुकड़ों से इंसान के ईमान का सौदा करने वाले इन थैलीशाहों का है। [150]

(x) नींव के स्वर :–

1. अब तो मैं ही हूं आकाश की राली और धरती की झेली। [151]
2. सही है–माटी काया, माटी की माया–धन के मद में जनम गँवाया। [152]
3. बिना विचारे जो करै, सो पाछै पछिताय। [153]
4. पर युद्ध तो युद्ध होता है। ऊँट किस करवट बैठे, इसका क्या पता ? [154]
5. अपने मुँह मियां मिट्ठू मत बनों। [155]

6.4 नाटकों में रसों की परिपूर्णता :–

भाषा की दृष्टि से रस का विशेष महत्त्व है। नाटक में रस का स्थान सर्वोपरि माना जाता है। डॉ. बद्रीप्रसाद जी के नाटकों का मंचन करने पर इनके नाटकों में रस की परिपूर्णता स्पष्ट झलकती है। नाटकों में रस का प्रयोग करते हुए इन्होंने नाटक की भाषा को चरमोत्कर्ष पर पहुँचा दिया है। इनके नाटकों में वीर, भक्ति, करुणा, शांत, रोद्र, अद्‌भुत और कहीं–कहीं पर भयानक रस का प्रयोग हुआ है। वीर रस का प्रयोग पंचोली जी ने अपने नाटकों में सर्वाधिक किया है। नाटकों से रसों के उदाहरण द्रष्टव्य हैः–

(i) लहर–लहर मधुपर्क :–

1. वीर रस – (हँस कर) अब बेचारा पौरुष की पत्नी के अतिरिक्त क्या समझ सकता है। (तलवार को छूकर) जब तक यह खड्ग है मेरे पास, तब तक यवन तो क्या उनके देवता जीयस भी आ जाएँ तो भी वे तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकते। [156]

2. श्रृंगार रस – (झेंपते हुए) सच कहूँ–वहाँ तुम्हारे जैसी सुंदरी कोई नहीं होगी। [157]

3. रौद्र रस – (i) (कटारी तान कर) जान पड़ता है अब मुझे भारतीय नारी की शक्ति का परिचय देना होगा। [158]

(ii) (क्रोध से दाँत पीसता हुआ) तुम मुझे अपशब्द कह रही हो स्त्री! मैं अभी तुम्हारे टुकड़े–टुकड़े करके गिद्धों को खाने के लिए फिंकवा सकता हूँ। [159]

4. करुण रस – मेरा प्रिय घोड़ा विश्वफलक युद्ध में घायल हो गया। मेरी माँ ने अपने हाथ से उसे भीगे चने और हरी घास खिला कर पाला था। हम दोनों को माँ का समान स्नेह मिला। जब माँ का निधन हुआ यह मूक जानवर मुझसे अधिक दुःखी था। [160]

(ii) उत्सर्ग :–

1. वियोग श्रृंगार – वह रूप सुषमा और माधुर्य की प्रतिमा–स्वप्न की वस्तु तो युग–युग रहेगी, मित्र! नित्य प्रति बाहुपाश में बाँध लेने के उपरांत भी उसके श्रम–सीकर युक्त मुख की वह छटा अब देखने को कहाँ मिलेगी। [161]

2. वीर रस – (i) भीमदेव तलवार की धार से मुहूर्त्त निकालने वाला है राजकुमारी ! विलम्ब होने का प्रश्न ही पैदा नहीं होता। मैं अब विवाह का मुहूर्त्त निकाल कर तुम्हें लेने आया हूँ। [162]

(ii) महाराज ! युद्ध की पूरी तैयारी हो चुकी है। एक एक परमार वीर, शत्रु के कटे हुए मुण्डों से कंदुक क्रीड़ा करने को उत्सुक है। [163]

(iii) परमार कुल के सपूतों! क्षत्रिय का जीवन धर्म को समर्पित होता है। 'जब तक क्षत्रिय के हाथ में शस्त्र रहता है तब तक कहीं किसी दीन दुःखी का स्वर सुनाई नहीं पड़ता'– यह हमारे पूर्वजों की गर्वोक्ति है। आज हमकों अपने पूर्वजों के विश्वास की सत्यता प्रमाणित करनी होगी। [164]

(iii) सूत्रधारः–

शांत रस – (i) दिव्य पदार्थों की दिव्यता द्युलोक में ही रहती है। पृथ्वी पर तो दिव्यता का उद्‌भव और प्रसार पार्थिव प्राणियों की सात्त्विक–भावना से होता है। मनुष्य स्वतंत्र है। वह चाहे तो दिव्य भावों की सृष्टि करें और चाहे तो तामसी भावों में लिप्त रहें। [165]

(ii) इसे बाल–परिजात के आलवाल में गाड़ दो बहिन! खाद बन जायेगी कामना करो कि युग युग में स्वर्गलोक का पादप, परिजात इस पृथ्वी पर उगता रहे, उसके अंकुरित होने और विकसित होने का क्रम अपराजित रहे। [166]

हास्य रस – काटा कैसे?जैसे और वृक्षों को काटता हूँ। आर्य मेरा नाम चौबीसा है।नित्य चौबीस वृक्ष काट सकता हूँ मैं। [167]

(iv) अमृत धुले हाथ :–

विभत्स रस – ओह! वह दिन क्या भूल पाऊँगी। कुरुक्षेत्र की भूमि विशाल श्मशान का रूप बनकर भयानक हो उठी थी। कैसा धर्म क्षेत्र था वह? कोसों तक हाथी, घोड़ों और मनुष्यों के शव रुधिर की बहती हुई धाराओं में द्वीप से बन गये थे। धर्माधर्म का निर्णय देने के लिए गिद्ध और कौए यहां–वहां झपट्टे मार रहे थे। [168]

रौद्र रस – मैं कहता हूँ–दुष्ट के साथ दुष्टता–इससे अच्छा सिद्धांत और क्या हो सकता है ? [169]

करुण रस – क्या कहा ? वासुदेव ? द्वारिका के नाथ ? अर्जुन के सारथी, सखा ? देवकीनंदन ? कंसघातक ? महाभारत के सूत्रधार ? चले गये वे धरती छोड़कर ? [170]

वीर रस – माँ ! तुम्हारे चरणों की रज सिर पर धारण करके संकल्प करता हूँ कि शरीर में प्राण रहते शत्रु के पैर आर्य भूमि पर नहीं पड़ सकेंगे। [171]

शांत रस – भाई ! 'अर्जन और समर्पण' की बात मैं सबको सिखाता था, परंतु मेरे पास तो समर्पण के लिए कुछ भी नहीं था। आज धन हाथ लगा है। मैं उसे राष्ट्र को अर्पित करूंगा। [172]

(v) हम नचिकेताः–

शांत रस – सृष्टि का सबसे रमणीय तत्त्व राम है और सबसे आकर्षक तत्त्व कृष्ण। जीवन में रमणीयता की प्रतिष्ठा करने वाले राम और आकर्षण के चरम केंद्र कृष्ण इस देश के दो महान् सांस्कृतिक पुरुष हुए हैं। [173]

हास्य रस – जहर याने कि प्वाइजन। हो सकता है। इसकी जांच कौनसा डिपार्टमेंट करेगा ? (कुछ सोचकर) यह अपने वश की बात नहीं है, ऊपर से पूछना पड़ेगा ? [174]

श्रृंगार रस – (i)जब तक नर और नारी में आपसी संबंध तय नहीं होंगे तब तक एक दूसरे के प्रति समर्पण का भाव अधूरा रह जाता है और बिना समर्पण के जीवन में आनंद नहीं जगता। [175]

(ii) पर आज तुम्हारी ओर देखने भर से हृदय–वीणा के तार झनझना उठते हैं। तुम्हारी आँखों के समुद्र में तैरती हुई अपनी परछाई को देखकर जन्म–जन्म का सुख पा लेती हूँ। सौ–सौ कल्प जीना भी व्यर्थ समझती हूँ मैं इस क्षण भर के सुख के सामने। .....। [176]

(vi) ध्रुवश्री :–

रौद्र रस – मैं अपनी बात कह चुका। यह और सुन लो कि यदि मेरी बेटी का पता नहीं लगा तो सुगांग –प्रासाद की ईंटों के साथ सेनापति पुष्यमित्र की सारी महत्वाकांक्षाएं धूल में मिला दूंगा।[177]

वीर रस – मैं कालपुरुष का अधिष्ठान, भारत राष्ट्र का नागरिक अपने शरीर, मन और प्राणों को अश्वमेध के लिए समर्पित करता हूँ। मेरा सारा पुरुषार्थ अपने राष्ट्र के लिए है। [178]

श्रृंगार रस – देवी ! मेरा हृदय सहज ही तुम्हारी ओर आकर्षित हुआ है। तुम्हारी अद्वितीय गरिमा ने उसे क्रीत दास बना लिया है। क्या तुम उस हृदय के आसन पर बैठकर मुझे अनुग्रहीत कर सकती हो? [179]

(vii) सुनहरे सपनों के अंकुर–

श्रृंगार रस – (i) सांस–सांस में मेरा हितचिंतन करने वाली मेरी प्रिया धूता, अब कहाँ है ? कैसे हैं? [180]

(ii) आर्यपुत्र! आपको सामने देखकर हर्ष हृदय में नहीं समा रहा है। [181]

वीर रस – निहत्था होकर भी मैं अपने बाहुबल से अनेक शस्त्रधारियों का सामना कर सकता हूँ। कम से कम तलवार का भय मुझे एक अबला की रक्षा करने से नहीं रोक सकता। मै चला। [182]

हास्य रस – मोदक! मिलेंगे ? तब तो मैं नित्य इतने समय तक भूखा रहने को तत्पर हुई।[183]

(viii) सुखी परिवारः–

शांत रस – (i) धर्म और कर्म का जोड़ा है। धर्म कर्म से आगे बढ़ता है और कर्म धर्म से पवित्र होता है। [184]

(ii) घर को देव–मंदिर की तरह पवित्र और स्वच्छ रखना चाहिए। [185]

(iii) उस अन्न में से परमात्मा सबका भरण–पोशण करता है चींटी को कण देगा, हाथी को मन देगा। किसी को भूखा नहीं रहने देगा। [186]

(ix) दायरे –

हास्य रस – (i) मैंने नहीं पढ़ी एक भी कविता। गाई जरूर है। पढ़ने और गाने में अंतर होता है न,बुआजी? [187]

(ii) न, न ऐसा मत करो भाई! तुम नहीं सुनाओगे तो कविता कामिनी वंध्या हो जायेगी और ..... और..... । [188]

वीर रस – अधिकार नहीं मिल तो छीनना होगा। यों मन मार कर बैठने से तो काम नहीं चलेगा। [189]

रौद्र रस – दुष्ट ! तुझे एक यह बहिन ही बचा सकती है। इसके चरण छूकर क्षमा मांग। ये कहेगी तो छूट जाओगे वरना। [190]

श्रृंगार रस – वह तुम्हारे लिए जीवन भर तकलीफ सह सकती है रवि! उसको तुम अपने व्यक्तित्व का अंग बनाओ। भाभी की आशीष तुम्हे मिल जाएगी। [191]

(x) नींव के स्वर :–

वीर रस – बदला हम सब मिलकर लेंगे! कोई अत्याचारी दस्यु मेवाड़ को .....मेवाड़ की धरती को, उसके निवासियों को अपमानित करके जीवित नहीं रह सकता। [192]

करुण रस – क्या, क्या कहा ? चेतक .....चेतक.....नहीं रहा ? हे भगवन्! चेतक नहीं रहा? ओह ![193]

शृंगार रस – अच्छा ऽ ऽ ऽ.....पाणिग्रहण के समय तुम्हारे प्रथम स्पर्श ने जैसा आह्लाद तन–मन में जगाया था वैसा ही आह्लाद मेरे मन में प्रेरणा जगाकर क्षण–प्रतिक्षण भरती रहना, प्रिये ! कहीं इस तुम्हारे प्रताप के कदम डगमगा न जाएँ।[194]

6.5 व्यंग्यात्मक शैली का प्रयोगः–

डॉ.पंचोली जी ने अपने नाटकों में झकझोरने के लिए व्यंग्यात्मक शैली का प्रयोग किया है। इनके व्यंग्य बाण सदृश वाक्य सीधे अन्तःकरण को घायल करके उद्वेलित कर देते हैं। व्यंग्य के प्रयोग से इनके नाटकों की शैली रोचक बन पड़ी है। नाटकों से उदाहरण द्रष्टव्य है–

(i) लहर–लहर मधुपर्कः–

1. तो यों क्यों नहीं कहते कि तुम अपने देश को सजाने की नयी विधि निकाल रहे हो। [195]
2. ऐसा ज्ञात होता है कि वह सुंदरी तुम्हारे मन में अच्छी तरह रम गई है। इसीलिए तुम्हे शत्रु का तीर भी किसी सुंदरी का कटाक्ष प्रतीत होता है। [196]
3. हाँ, तुम .....क्या कहना चाहते हो ? तलवार के भय से सत्य डरता है क्या? यदि यह तलवार उस समय दिखाते, जब मैं सिंधु पार कर रहा था, तो तुम धन्य हो जाते। बल तलवार में नहीं, उस भावना में होता है जिसकी प्रेरणा से वह उठाई जाती है। [197]

(ii) हम नचिकेताः–

1. विदेशों में जा कर बसो सब लोग और जीने या मरने के लिए अपने हाल पर छोड़ दो इस देश को। [198]
2. तुम बनाओ। तब तक हम तुम्हारे देश में जा कर बस जाते हैं। जब तुम सफल हो जाओ तब सूचना दे देना।हम लौट आयेंगे अपने प्यारे देश मे। [199]
3. समझी। नरक में जाने वाले पुरुषार्थियों के लिए वह .....। [200]

4. योगी लोग शायद इसीलिए उसे नरक की खान कहते आये हैं ! [201]

(iii) ध्रुवश्री :–

1. और मुझे अंक में भर लेते ? यही न ! जब किसी जाति का पतन हो जाता है तो उसमें तुम्हारे जैसे सुपुरुष पैदा हो जाते हैं। [202]
2. पुत्री के आचरण पर तो नहीं, परंतु पिता के आचरण पर संदेह किया जा सकता है । [203]

(iv) उत्सर्ग :–

1. क्यों नहीं राजकुमारी, हमारा तो काम ही देवाराधन है। मैं शीघ्र ही उधर आऊँगा। ऐसा स्वर्णावसर फिर कब मिलेगा ? [204]
2. हवा के झोंके की तरह आया और विलीन हो गया। बड़ी अद्‌भुत बात है यह तो ! भीमदेव को तंत्र–सिद्धी तो नहीं है। [205]
3. हां, शृंगार करो, सखि ! बलि के बकरे को भी वधस्थल पर ले जाने के लिए ऐसे ही सजाया जाता है। [206]

(v) सुनहरे सपनों के अंकुर :–

1. अन्यायी राजा का राज्य मिट्‌टी के ढेले से भी गया बीता होता है। ढेला तो स्वयं अचल रहता है, परंतु राज्य न स्वयं चलता है और न दूसरे को चलने देता है। [207]
2. कोई यह भी तो कह सकता है कि आर्य सेनापति को सोने तक का समय नहीं मिलता। अवसर मिलने पर बैठे–बैठे ही नींद निकालनी पड़ती है। [208]

(vi) दायरे :–

1. हाय राम ! सूरज पश्चिम में उग आएगा तब तो। बुआजी और कविता...। [209]
2. मैं ऐसा क्यों सोचने लगी ? बाथरूम–सिंगरों के तुम शिरोमणि हो यह बात मुझे पता है। [210]
3. न, न, ऐसा मत करो भाई ! तुम नहीं सुनाओगे तो कविता कामिनी वन्ध्या हो जाएगी ! और..और...। [211]

4. बहू के गुणगान तुमसे अधिक कौन कर सकता है बुआ। माल सोलह आने टंच है। बस एक ही दुर्गुण है इसमें। वह है इसका पढ़ा–लिखा होना। (हँसता है।) [212]

(vii) सूत्रधार :–

1. क्या यह भी योग–साधना है महात्मन् ! मन के रहस्य खोजना तो आप अपने शिष्य को सिखाईये। [213]
2. महात्मन् ! ऐसा कभी नहीं होता यद्यपि देवर्षि नारद देवी रुक्मिणी की कहीं हुई बातों और दिए हुए तानों के विषय में मुझे न बताते। लड़ाने–भिड़ाने में देवर्षि को कौन पा सकता है? [214]
3. यह साधारण वृक्ष नहीं है। स्वर्ग का पारिजात है–पारिजात। मार्ग में नहीं गिरता तो वासुदेव के सखा को इस पर वानरों की तरह उछल–कूद करने का अवसर कब मिल पाता ? [215]
4. परिवर्तन तो राजनीति के धुरंधर लोग किया करते हैं। क्षण भर पहले ही तो आप इस निर्णय को अस्वीकार कर रहे थे। [216]

(viii) अमृत धुले हाथ :–

1. तो पिताजी का शिक्षण–संस्थान मनोविकार ग्रस्तों का चिकित्सालय होता कदाचित्–यही कहना चाहते हो क्या ? [217]
2. संस्कारों की बात है। भारत में पारस के सम्पर्क में आकर भी यदि वह लोहा का लोहा बना रहा तो क्या किया जाए ? दुर्भाग्य है उसका। [218]
3. बुरे मनुष्य इसलिए होते हैं क्योंकि अपने आपको अच्छा समझने वाले उनके कुकृत्यों को सह जाते हैं। यह सहन–शक्ति अच्छो का तो गुण बन जाती है, पर यही समाज की छाती पर मूंग दलने वाले दुष्टों को पैदा कर देती है।[219]

(ix) सुखी परिवार :–

1. वे इसे छोटा सुख कहते हैं। तुम कहो, यह छोटा सुख है? एक परिवार को बनाने में पूरा जीवन खप जाता है। [220]

2. आज तो तेरा घर बड़ा चमक रहा है। [221]

3. हम किससे मिलते हैं ? दूसरों के साथ कैसा व्यवहार करते हैं। हमारी कथनी और करनी में कितना अंतर है ? वह यह भी देखता है। [222]

(x) नींव के स्वर :–

1. राज्य कोई भेंट में देने की वस्तु नहीं है। जनता ही सर्वोपरि है। वही सत्ता सौंप सकती है किसी को।[223]

2. तो क्या यहां तकलीफों का बीज बोने के इरादे से आये हो ? [224]

3. तलवार के बल पर एकता कैसे हो सकती है? मन मिले तो सब एक हों। धौंस–पट्टी से एकता नहीं हो सकती मेरे भाई। [225]

4. क्या कहा ? महात्मा तुलसीदास से ? वे तो राम–चरित का गान करते हैं। वे मेवाड़ियों पर कविता लिखेंगे? [226]

6.6 संस्कृतनिष्ठ शब्दों का प्रयोग :–

पंचोली जी ने अपने नाटकों में संस्कृत भाषा के शब्दों का प्रयोग यथास्थान किया है। इन शब्दों के प्रयोग से भाषा में रोचकता आ गयी है। नाटकों के उदाहरण द्रष्टव्य है–

(i) लहर–लहर मधुपर्क :–

1. कल्याणी – वह समय बीत गया अब उस स्वच्छंद जीवन की सुखानुभूति स्मृति मात्र रह गई है। [227]

2. अलक्ष्यदल – मैं भी यही सोच रहा हूँ प्रदीक्ष ! मनस्विता के क्षेत्र में चाणक्य के हाथों यवनायन पराजित हो गया और तेजस्विता के क्षेत्र में यह स्त्री बाजी मार ले गयी। [228]

3. तो जाओ प्रदीक्ष! सैनिकों को समझाओ। उन्हे पुरस्कार में कंचन ही नहीं कामिनी मिलने का आश्वासन भी दो। [229]

4. कल्याणी – इतनी कुशल मंत्रणा और इतनी निश्चयात्मक आशावादिता! महात्मन्! क्या मैं आचार्य विष्णुगुप्त कहकर आपको पुनः प्रणाम कर सकती हूँ ?

अपनी विचार क्षमता और कार्य क्षमता में इतनी दृढ़निष्ठा और किसी की नहीं हो सकती। [230]

5. आम्भी – श्रीमन् ! आज तो आप मुझे देश द्रोही कहकर लज्जित कर रहे है, परन्तु जब आप अनेक तरह से प्रलोभन देकर मुझे अकरणीय करने की प्रेरणा दे रहे थे उस समय आपका मुँह बंद क्यों था।[231]

(ii) सूत्रधार :–

1. मालिनी – चौबीसा जी ! आपकी कार्यक्षमता में संदेह नहीं किया जा सकता। फिर भी काम शीघ्रता से करने का है–यह बात ध्यान में रखिये। [232]

2. सत्यभामा –यह तो महायोगी घोर का स्वर है – वृक्षेभ्यः हरिकेशेभ्यः पशुनां पतये नमः। लगता है महायोगी सर्वज्ञ है। यह क्या अमृत घोल रहे हैं महर्षि कानों में ? [233]

3. घोर आंगिरस – यह तुम्हारी ईर्ष्या का परिणाम है महादेवि! सत्यभामा की यत्किंचित् सफलता का सूचक यह बाल – पारिजात तुम्हारी ईर्ष्या से पनप रहा है। [234]

4. घोर आंगिरस – दिव्य पदार्थों की दिव्यता द्युलोक में ही रहती है। पृथ्वी पर तो दिव्यता का उद्भव और प्रसार पार्थिव प्राणियों की सात्त्विक–भावना से होता है। मनुष्य स्वतंत्र है। वह चाहे तो दिव्य भावों की सृष्टि करे और चाहे तो तामसी भावों में लिप्त रहे। [235]

5. वासुदेव– महर्षि घोर आंगिरस द्वापर की युगव्यापी विचारधारा के प्रत्यक्ष द्रष्टा, युगसंधि के सजग पथप्रदर्शक ! [236]

6. सत्यभामा– अंधकार और प्रकाश की आँख मिचौनी तो समाप्त होगी ही दीदी! जब एक बार अंधकार का महाअसुर खुलकर नाच लेगा तभी तो प्राची के अंक में बालारुण–क्रीड़ा करेगा। [237]

7. घोर आंगिरस – बस देवि ! मौन की भाषा को जिह्वा का विषय मत बनाओ। मौन में ही शक्ति का पूंजीभूत रूप प्रतिष्ठित होता है। लाओ मैं तुम्हारे इस दान को स्वीकार करने के लिए तत्पर हूँ। [238]

(iii) अमृत धुले हाथ –

1. सूत्रधार – जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी ! स्वर्गतुल्य इस मातृभूमि ने कितने संघर्षों को देखा–सहा है ? [239]
2. श्रीविजय– सुना है कि उसने एक विशालवाहिनी एकत्र की है और सम्पूर्ण पृथ्वी पर एकच्छत्र सम्राट के रूप में प्रतिष्ठित होने का स्वप्न उसने देखा है। [240]
3. श्रीविजय– शब्दों का पारखी, शब्दों का जो सूक्ष्मरूप भाव–स्थिति के रूप में अन्तर्मन में रहता है, उसकी परीक्षा नहीं करता क्या ? और यदि कर सकता है तो वह विकृत शब्दों के साथ विकृत मन को भी परिष्कृत नहीं कर देता, ऐसा कौन मानेगा ? [241]
4. शाकटायन– मैं श्रम से दूर रहकर किये जाने वाले काम को मानसिक, अनर्गलता मात्र मानता हूं। शब्द तो श्रमशील जीवन के सहचर हैं। मैंने न केवल उनकी शव–परीक्षा की है, वरन् उनको निर्जीव भी बनाया है। [242]
5. सिद्धनाथ – हाँ,हम अर्जन और समर्पण दोनों के लिए कृत–संकल्प है। [243]
6. जया – यह मेरा संकल्प है कि आश्रम के किसी भी अन्तेवासी को स्नेह–वंचित नही रहने दूंगी। यौवन की देहरी पर खड़े हुए व्यक्ति के मन में कितनी विकृतियां उपस्थित कर देती है स्नेह की भूख।[244]
7. गुणाकर– माँ, ऐसी उदात्त–भावना मन में जगाकर पुत्र को स्तन्यपान कराती है तभी पुत्र में ऐसी दृढ़ता और उत्साह की भावना उत्पन्न होती है। [245]
8. शाकटायन – यह उचित ही किया तुमने। मातृभूमि की धूल को सिर पर धारण करने से ही इस पार्थिव शरीर में पूर्ण मनुष्यत्व का उद्‌भव होता है। [246]

(iv) हम नचिकेता :–

1. गोपाल – वह अन्तस्तत्व न प्रवचन से जाना जा सकता है, न बौद्धिक प्रयासों से। बहुत जानकारी पा लेने से क्या ? अशान्त मन वाला तो किसी भी तरह से उसे नहीं पा सकता। [247]
2. मीरां – ओफ! यह है भारत की नई पीढ़ी, आत्मसम्मान से हीन, अस्पष्ट महत्वाकांक्षाओं से पीड़ित । [248]

3. गोपाल – पूर्ण समर्पण को आत्मनिवेदन कहा है भक्तिमार्ग के आचार्यो नें। यह इष्टदेव के साथ साक्षात्कार करने की स्थिति होती है। [249]

(v) ध्रुवश्री –

1. आगन्तुक –सम्राट ! कलिंग–नरेश ने कामना की है कि भगवान जिनेन्द्र की कृपा से आप शीघ्र अपने शत्रुओं से मुक्त हों और शतायु होकर मगध पर निष्कंटक राज्य करते रहें। [250]
2. वीरसेन – ठीक ही सोचा, श्रीमन्! राष्ट्र की रक्षा के लिए सैनिकों की संख्या नहीं, आत्माहुति देने में समर्थ व्यक्तियों की आवश्यकता होती है। [251]
3. जिनसेन– राजन्! आपके वीरदर्पयुक्त मुखमंडल की छटा अद्‌भुत है। राष्ट्रीयता के मर्म को आपने ही समझा है। [252]
4. खारवेल – पाटलिपुत्र तो अब भारत का प्रशस्त भाल बन गया है, सेनाध्यक्ष ! अब उसे कौन झुका सकता है ? [253]
5. ध्रुवश्री – उदार व्यक्तित्व अपरिचितों में भी आत्मीयता का दर्शन कर लेते हैं। [254]
6. ध्रुवश्री – शत्रु के व्यूह में निःशस्त्र घुस पड़ने वाली उस सौम्यमूर्ति के चरणों में हृदय बिछा देने को जी चाहता है। .....जिसने अपनी महत्त्वाकांक्षाओं को राष्ट्रनिष्ठा के सामने नगण्य समझा, उस हृदय–सम्राट पर मेरे जैसे अनेक जीवन न्यौछावर किए जा सकते हैं। [255]
7. पुष्यमित्र – पुत्रि ! तुमने भारत की जो अपूर्व सेवा की है, उसके लिए तुम्हारा पिता तुम्हे पुरस्कृत करके गौरवान्वित होना चाहता है। [256]
8. सुदत्त – कुमार! आर्य–राष्ट्र को धारण करने का सामर्थ्य अर्जित करो। तुम्हारा यश दिगन्त तक विस्तृत हो और पुत्री, तुम अपने नए नाम धारिणी को सार्थक करो, राष्ट्ररक्षक पुत्र की जननी बनों और पूर्णायु प्राप्त करके अपने पति के साथ सुख भोगती रहो। [257]

(vi) उत्सर्ग :–

1. अमरसिंह – राजाधिराज, प्रबल प्रताप परमेश्वर, परम भट्‌टारक, उमापति वरलब्धप्रसाद, प्रौढ़प्रतापबालक, आहवपराभूत शत्रु, श्री भीमदेव गुर्जरेश्वर का कथन उनके अनुरूप नहीं है। यह कृतज्ञता फिर कभी जताना। [258]

2. अमरसिंह – राजन् ! आपका विचार अपनी पुत्री को किसी छत्रधारी नरपति को देने का था। सो अब, गुर्जरेश्वर भीमदेव को अपनी सुलक्षणा राजपुत्री देकर सौभाग्य और मंगल की वृद्धि कीजिए। [259]
3. देवबोधाचार्य– वत्स, आयुष्मान् भव । भगवान् सोमनाथ तुम्हारा कल्याण करें। [260]
4. ब्राह्मण – विप्रवर! हमसे भूल हुई। क्षमा कीजिए। आपका कथन सत्य है। हमें निमंत्रण देने वाली राजकुमारी को आशीर्वाद देकर, उसके आग्रह करने पर ही भोजन करना चाहिए। [261]
5. इच्छिनी देवी – साहस और शौर्य का अवतार, निर्भयता का अद्‌भुत प्रतिमान, जन्म–जन्म के पुण्यों का राशिभूत सुफल और समस्त सिद्धियों का आश्रयस्थल–गुर्जरेश्वर किसकी कामनाओं का वरेण्य अधिदेवता न बन जाएगा। अभागे हृदय तुझे सब सहना होगा। [262]
6. मीनल – यह कहने की धृष्टता तो मैं कैसे कर सकती हूँ राजकुमारी ! अपनी बचपन की क्रीड़ाभूमि से बिछुड़ने का दुःख प्रत्येक कन्या को होता है।[263]
7. देवबोधाचार्य –वत्स ! पहले मैंने तुम्हारे प्रशासनिक दम्भ को हटाया था। अब मैं तुम्हारे व्यक्तित्व में से पशुत्व को विनष्ट करना चाहता हूँ। [264]

(vii) सुनहरे सपनों के अंकुर –

1. चारुदत्त – मृत्यु को ही एक मात्र मित्र समझने वाले मुझको अकस्मात् ही पुनः जीवन से मित्रता स्थापित करने का अवसर मिला है। तो अनेक आत्मीय जुट जाएंगे। [265]
2. आर्यक – साधुता की ज्योतिशिखा को निर्बन्ध कौन नहीं करना चाहेगा ? [266]
3. आर्यक – बालारुण की सुनहरी रश्मि रहस्य की यवनिका को हटा देगी। [267]
4. गुप्तचर – स्वामी ! उज्जयिनी में राज्य क्रांति का सर्वत्र स्वागत किया गया है, परंतु विदेशी नागरिक परिवर्तन से संतुष्ट नहीं हैं। [268]
5. वसन्तसेना – हृदय की घनीभूत पीड़ा को अपनों के बीच में प्रकट कर देना अच्छा ही होता है। [269]

6. चारुदत्त – नरशार्दुल औपचारिकताओं के फेर में नहीं पड़ते। राज्यसिंहासन पर बैठने की अर्हता श्रीमान् आर्यक ने अपने पराक्रम से प्राप्त कर ली है।[270]

(viii) नींव के स्वर –

1. पुरोहित – सौभाग्यवती भव। पुत्री ! अधीर मत बनों। भगवान एकलिंग पर विश्वास रखो। [271]
2. सुखराज – हम तो अपने और मेवाड़ के भविष्य का स्वागत करने को बैठे हैं। जो भी आएगा वह भविष्य का संदेशवाहक ही होगा। [272]
3. माहू – युद्ध अनिर्णित रहा। ध्रुव विजय हेतु लम्बी लड़ाई के लिए तत्पर रहना होगा। मेवाड़ की जिम्मेदारियां बढ़ गई है। सारा आर्यावर्त हमारी ओर आशा भरी निगाह से देख रहा है। [273]
4. पुरोहित – भगवान कृष्ण ने गीता में कहा है– युद्धस्व विगतंजरः। उन्मादी व्यक्ति युद्ध न करके उन्माद का प्रदर्शन मात्र करता है। सफलता को संदिग्ध बना ही देता है। [274]
5. चम्पादे – वस्तुतः मेरी प्रेरणास्त्रोत तो महारानी जी है। उन्होने नगण्य होते हुए भी मुझे बड़ा मान दिया। पन्नाधाय के साथ मेरा निकट संबंध है–यह जानकारी मिलने पर पूरी आत्मीयता के साथ रुग्णावस्था में मेरी सेवा की। [275]

संदर्भ

1. लहर–लहर मधुपर्क , पृष्ठ – 13
2. लहर–लहर मधुपर्क , पृष्ठ – 21
3. लहर–लहर मधुपर्क , पृष्ठ – 34
4. लहर–लहर मधुपर्क , पृष्ठ – 48
5. लहर–लहर मधुपर्क , पृष्ठ – 52
6. लहर–लहर मधुपर्क , पृष्ठ – 78
7. सूत्रधार , पृष्ठ – 27
8. सूत्रधार , पृष्ठ – 54
9. सूत्रधार , पृष्ठ – 65
10. सूत्रधार , पृष्ठ – 68
11. अमृत धुले हाथ , पृष्ठ – 18
12. अमृत धुले हाथ , पृष्ठ – 22
13. अमृत धुले हाथ , पृष्ठ – 51.
14. अमृत धुले हाथ , पृष्ठ – 51
15. अमृत धुले हाथ , पृष्ठ – 52
16. अमृत धुले हाथ , पृष्ठ – 55
17. हम नचिकेता , पृष्ठ – 38
18. हम नचिकेता , पृष्ठ – 57
19. हम नचिकेता , पृष्ठ – 72
20. ध्रुवश्री , पृष्ठ – 10
21. ध्रुवश्री , पृष्ठ – 14
22. ध्रुवश्री , पृष्ठ – 45
23. ध्रुवश्री , पृष्ठ – 52
24. उत्सर्ग , पृष्ठ – 7
25. उत्सर्ग , पृष्ठ – 26
26. उत्सर्ग , पृष्ठ – 33

27. उत्सर्ग , पृष्ठ – 68

28. उत्सर्ग , पृष्ठ – 70

29. उत्सर्ग , पृष्ठ – 68

30. सुनहरे सपनों के अंकुर, पृष्ठ – 14

31 सुनहरे सपनों के अंकुर, पृष्ठ – 18

32 सुनहरे सपनों के अंकुर, पृष्ठ – 19

33 सुनहरे सपनों के अंकुर, पृष्ठ – 24

34 सुनहरे सपनों के अंकुर, पृष्ठ – 33

35 सुनहरे सपनों के अंकुर, पृष्ठ – 42

36 सुनहरे सपनों के अंकुर, पृष्ठ – 53

37 सुखी परिवार, पृष्ठ – 5

38 सुखी परिवार, पृष्ठ – 23

39 सुखी परिवार, पृष्ठ – 23

40 सुखी परिवार, पृष्ठ – 25

41 सुखी परिवार, पृष्ठ – 37

42 दायरे , पृष्ठ – 9

43 दायरे , पृष्ठ – 10

44 दायरे, पृष्ठ – 13

45 दायरे, पृष्ठ – 16

46 दायरे, पृष्ठ – 18

47 दायरे, पृष्ठ – 49

48 दायरे, पृष्ठ – 55

49 दायरे, पृष्ठ – 57

50. नींव के स्वर, पृष्ठ – 18

51. नींव के स्वर, पृष्ठ – 21

52. नींव के स्वर, पृष्ठ – 42

53. नींव के स्वर, पृष्ठ – 45

54. नींव के स्वर, पृष्ठ – 85

55.लहर–लहर मधुपर्क , पृष्ठ – 13

56. लहर–लहर मधुपर्क , पृष्ठ – 23

57. लहर–लहर मधुपर्क , पृष्ठ – 50

58. लहर–लहर मधुपर्क , पृष्ठ – 60

59. लहर–लहर मधुपर्क , पृष्ठ– 78

60. सूत्रधार , पृष्ठ – 11

61. सूत्रधार , पृष्ठ – 19

62. सूत्रधार , पृष्ठ – 37

63. सूत्रधार , पृष्ठ – 70

64. अमृत धुले हाथ , पृष्ठ – 10

65. अमृत धुले हाथ , पृष्ठ – 14

66. अमृत धुले हाथ , पृष्ठ – 17

67. अमृत धुले हाथ , पृष्ठ – 22

68. अमृत धुले हाथ , पृष्ठ – 41

69. हम नचिकेता , पृष्ठ – 17

70. हम नचिकेता , पृष्ठ – 31

71. हम नचिकेता , पृष्ठ – 39

72. हम नचिकेता , पृष्ठ – 55

73. हम नचिकेता , पृष्ठ – 63

74. हम नचिकेता , पृष्ठ – 64

75. हम नचिकेता , पृष्ठ – 68

76. ध्रुवश्री , पृष्ठ – 17

77. ध्रुवश्री , पृष्ठ – 22

78. ध्रुवश्री , पृष्ठ – 40

79. ध्रुवश्री , पृष्ठ – 54

80. ध्रुवश्री , पृष्ठ – 62

81. ध्रुवश्री , पृष्ठ – 74

82. उत्सर्ग , पृष्ठ – 21

83. उत्सर्ग , पृष्ठ – 27

84. उत्सर्ग , पृष्ठ – 30

85. उत्सर्ग , पृष्ठ – 49

86. उत्सर्ग , पृष्ठ – 53

87. सुनहरे सपनों के अंकुर . पृष्ठ – 5

88. सुनहरे सपनों के अंकुर . पृष्ठ – 15

89. सुनहरे सपनों के अंकुर. पृष्ठ –21

90. सुनहरे सपनों के अंकुर. पृष्ठ – 43

91. सुनहरे सपनों के अंकुर. पृष्ठ – 49

92. सुखी परिवार . पृष्ठ – 5

93. सुखी परिवार . पृष्ठ – 6

94. सुखी परिवार . पृष्ठ – 9

95. सुखी परिवार . पृष्ठ – 17

96. सुखी परिवार . पृष्ठ – 28

97. सुखी परिवार . पृष्ठ – 38

98. दायरे . पृष्ठ –20

99. दायरे , पृष्ठ – 24

100. दायरे , पृष्ठ – 28

101. दायरे , पृष्ठ – 34

102. दायरे , पृष्ठ – 37

103. दायरे , पृष्ठ – 62

104. नींव के स्वर, पृष्ठ –13

105. नींव के स्वर, पृष्ठ –16

106. नींव के स्वर, पृष्ठ – 23

107. नींव के स्वर, पृष्ठ – 32

108. नींव के स्वर, पृष्ठ – 83

109. नींव के स्वर, पृष्ठ – 92

110. नींव के स्वर, पृष्ठ – 99

111. लहर–लहर मधुपर्क, पृष्ठ – 14

112. लहर–लहर मधुपर्क, पृष्ठ – 19

113. लहर–लहर मधुपर्क, पृष्ठ –29

114. लहर–लहर मधुपर्क, पृष्ठ–45

115. सूत्रधार, पृष्ठ–16

116. सूत्रधार, पृष्ठ–19

117. सूत्रधार, पृष्ठ–33

118. अमृत धुले हाथ, पृष्ठ–51

119. अमृत धुले हाथ, पृष्ठ–52

120. अमृत धुले हाथ, पृष्ठ–53

121. अमृत धुले हाथ, पृष्ठ–54

122. अमृत धुले हाथ, पृष्ठ–54

123. अमृत धुले हाथ, पृष्ठ–5

124. अमृत धुले हाथ, पृष्ठ–82

125. अमृत धुले हाथ, पृष्ठ–83

126. हम नचिकेता, पृष्ठ –22

127. हम नचिकेता, पृष्ठ –56

128. हम नचिकेता, पृष्ठ –66

129. हम नचिकेता, पृष्ठ –70

130. हम नचिकेता, पृष्ठ –75

131. ध्रुवश्री, पृष्ठ–21

132. ध्रुवश्री, पृष्ठ–31

133. ध्रुवश्री, पृष्ठ–41

134. ध्रुवश्री, पृष्ठ–67

135. उत्सर्ग, पृष्ठ–9

136. उत्सर्ग, पृष्ठ–24

137. उत्सर्ग, पृष्ठ–69

138 उत्सर्ग, पृष्ठ–78

139. सुनहरे सपनों के अंकुर, पृष्ठ–11

140. सुनहरे सपनों के अंकुर, पृष्ठ–17

141. सुनहरे सपनों के अंकुर, पृष्ठ–21

142. सुनहरे सपनों के अंकुर, पृष्ठ–56

143. सुखी परिवार, पृष्ठ–14

144. सुखी परिवार, पृष्ठ–17

145. सुखी परिवार, पृष्ठ–25

146. सुखी परिवार, पृष्ठ–40

147. दायरे, पृष्ठ–10

148. दायरे, पृष्ठ–25

149. दायरे, पृष्ठ–26

150. दायरे, पृष्ठ–59

151. नींव के स्वर, पृष्ठ –14

152. नींव के स्वर, पृष्ठ –27

153. नींव के स्वर, पृष्ठ –45

154. नींव के स्वर, पृष्ठ –55

155. नींव के स्वर, पृष्ठ –60

156. लहर–लहर मधुपर्क, पृष्ठ– 13

157. लहर–लहर मधुपर्क, पृष्ठ– 24

158. लहर–लहर मधुपर्क, पृष्ठ– 27

159. लहर–लहर मधुपर्क, पृष्ठ– 47

160. लहर–लहर मधुपर्क, पृष्ठ– 13

161. उत्सर्ग, पृष्ठ– 9

162. उत्सर्ग, पृष्ठ– 57

163. उत्सर्ग, पृष्ठ– 64

164. उत्सर्ग , पृष्ठ – 67

165. सूत्रधार , पृष्ठ – 23

166. सूत्रधार , पृष्ठ – 31

167. सूत्रधार , पृष्ठ – 55

168. अमृत धुले हाथ, पृष्ठ– 18

169. अमृत धुले हाथ, पृष्ठ– 49

170. अमृत धुले हाथ, पृष्ठ–63

171. अमृत धुले हाथ, पृष्ठ–71

172. अमृत धुले हाथ, पृष्ठ–87

173. हम नचिकेता, पृष्ठ–13

174. हम नचिकेता, पृष्ठ–31

175. हम नचिकेता, पृष्ठ–59

176. हम नचिकेता, पृष्ठ– 79

177. ध्रुवश्री , पृष्ठ– 23

178. ध्रुवश्री , पृष्ठ– 29

179. ध्रुवश्री , पृष्ठ– 59 व 60

180. सुनहरे सपनों के अंकुर, पृष्ठ–21

181. सुनहरे सपनों के अंकुर, पृष्ठ–24

182. सुनहरे सपनों के अंकुर, पृष्ठ–23

183. सुनहरे सपनों के अंकुर, पृष्ठ–62

184. सुखी परिवार, पृष्ठ–7

185. सुखी परिवार, पृष्ठ–22

186. सुखी परिवार, पृष्ठ–43

187. दायरे, पृष्ठ–10

188. दायरे, पृष्ठ–11

189. दायरे, पृष्ठ–29

190. दायरे, पृष्ठ–47

191. दायरे, पृष्ठ–48

192. नींव के स्वर, पृष्ठ–14

193. नींव के स्वर , पृष्ठ – 21

194. नींव के स्वर , पृष्ठ – 80

195. लहर – लहर मधुपर्क, पृष्ठ – 26

196. लहर – लहर मधुपर्क, पृष्ठ – 35

197. लहर – लहर मधुपर्क, पृष्ठ – 76

198. हम नचिकेता, पृष्ठ – 22

199. हम नचिकेता, पृष्ठ – 24

200. हम नचिकेता, पृष्ठ – 37

201. हम नचिकेता, पृष्ठ – 37

202. ध्रुवश्री , पृष्ठ – 13

203. ध्रुवश्री , पृष्ठ – 22

204. उत्सर्ग , पृष्ठ – 51

205. उत्सर्ग , पृष्ठ – 61

206. उत्सर्ग , पृष्ठ – 70

207. सुनहरे सपनों के अंकुर, पृष्ठ – 11

208. सुनहरे सपनों के अंकुर , पृष्ठ – 53

209. दायरे , पृष्ठ – 9

210. दायरे , पृष्ठ – 11

211. दायरे , पृष्ठ – 11

212. दायरे , पृष्ठ – 21

213. सूत्रधार , पृष्ठ – 17

214. सूत्रधार , पृष्ठ – 27

215. सूत्रधार , पृष्ठ – 37

216. सूत्रधार , पृष्ठ – 49

217. अमृत धुले हाथ , पृष्ठ – 19

218. अमृत धुले हाथ , पृष्ठ – 49

219. अमृत धुले हाथ , पृष्ठ – 79

220. सुखी परिवार , पृष्ठ – 9

221. सुखी परिवार , पृष्ठ – 16

222. सुखी परिवार , पृष्ठ – 22

223. नींव के स्वर , पृष्ठ – 28

224. नींव के स्वर , पृष्ठ – 31

225. नींव के स्वर , पृष्ठ – 66

226. नींव के स्वर , पृष्ठ – 96

227. लहर – लहर मधुपर्क, पृष्ठ – 11

228. लहर – लहर मधुपर्क, पृष्ठ – 53

229. लहर – लहर मधुपर्क, पृष्ठ – 53

230. लहर – लहर मधुपर्क, पृष्ठ – 61

231. लहर – लहर मधुपर्क, पृष्ठ – 76

232. सूत्रधार , पृष्ठ – 13

233. सूत्रधार , पृष्ठ – 19

234. सूत्रधार, पृष्ठ – 22

235. सूत्रधार , पृष्ठ – 23

236. सूत्रधार , पृष्ठ – 38

237. सूत्रधार , पृष्ठ – 68

238. सूत्रधार , पृष्ठ – 75

239. अमृत धुले हाथ , पृष्ठ –10

240. अमृत धुले हाथ , पृष्ठ –17

241. अमृत धुले हाथ , पृष्ठ –19

242. अमृत धुले हाथ , पृष्ठ –22

243. अमृत धुले हाथ , पृष्ठ –35

244. अमृत धुले हाथ , पृष्ठ –37

245. अमृत धुले हाथ , पृष्ठ – 76

246. अमृत धुले हाथ , पृष्ठ – 88

247. हम नचिकेता , पृष्ठ – 12

248. हम नचिकेता , पृष्ठ – 52

249. हम नचिकेता, पृष्ठ – 75

250. ध्रुवश्री , पृष्ठ – 11

251. ध्रुवश्री , पृष्ठ – 31

252. ध्रुवश्री , पृष्ठ – 37

253. ध्रुवश्री , पृष्ठ – 43

254. ध्रुवश्री , पृष्ठ – 44

255. ध्रुवश्री , पृष्ठ – 58

256. ध्रुवश्री , पृष्ठ – 72

257. ध्रुवश्री , पृष्ठ – 79

258. उत्सर्ग , पृष्ठ – 8

259. उत्सर्ग , पृष्ठ – 15

260. उत्सर्ग , पृष्ठ – 38

261. उत्सर्ग , पृष्ठ – 48

262. उत्सर्ग , पृष्ठ – 52

263. उत्सर्ग , पृष्ठ –69

264. उत्सर्ग , पृष्ठ –69

265. सुनहरे सपनों के अंकुर, पृष्ठ – 13

266. सुनहरे सपनों के अंकुर, पृष्ठ – 13

267. सुनहरे सपनों के अंकुर, पृष्ठ – 13

268. सुनहरे सपनों के अंकुर, पृष्ठ – 13

269. सुनहरे सपनों के अंकुर, पृष्ठ – 13

270. सुनहरे सपनों के अंकुर, पृष्ठ – 13

271. नींव के स्वर , पृष्ठ – 19

272. नींव के स्वर , पृष्ठ – 27

273. नींव के स्वर , पृष्ठ – 30

274. नींव के स्वर , पृष्ठ – 55

275. नींव के स्वर , पृष्ठ – 60

अध्याय – 7

उपसंहार

अध्याय – 7 उपसंहार

परिवर्तन संसार का नियम है। परिवर्तन के कारण से ही नयी मान्यताएँ प्रतिष्ठित होती है। साहित्य की हर विधा परिवर्तन की प्रक्रिया को अपनी सामर्थ्य के अनुसार ग्रहण करती है और परिवर्तन की प्रक्रिया की प्रतिक्रिया द्वारा अपनी भूमिका निभाती है। परिवर्तन की प्रतिक्रिया की अभिव्यक्ति, समाज को सोचने के लिए उत्प्रेरित करती है और समाज को उससे दिशा दृष्टि मिलती है। इससे आने वाले कल के लिए योजनाएँ रचकर मनुष्य की आवश्यकताओं को सफल करने में सक्षम होते हैं।

प्रयोग की परीक्षा लेने के लिए परिवर्तित समाज की आवश्यकता है। स्वतंत्रता के बाद समाज निरन्तर परिवर्तित होता रहा है। सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया ही साहित्य के विविध रूपों में और विचार धाराओं को हमारे सामने लाती है और इसी से साहित्य की प्रासंगिकता निर्मित होती है। मनुष्य अपने समय की सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक प्रवृत्तियों से बहुत कुछ बंधा होता है। इन बंधनों को तोड़ने के लिए ही प्रयोग आवश्यक है। इन प्रयोगों के लक्षण हिंदी साहित्य के हर विधा में हमें देखने को मिलते है, लेकिन स्वातंत्र्योत्तर नाटकों में यह प्रवृत्ति ज्यादा मिलती है।

मानव जीवन में साहित्य का स्थान अति महत्त्वपूर्ण है। क्योंकि यह मानव जीवन का एक प्रभावी मुखरित रूप है। वह हमारे अव्यक्त भावों को व्यक्त करते हुए हमें एक संस्कृति और एक जाति के सूत्र में बाँधता है। साहित्य को समाज का दर्पण माना गया है। जनता की गतिविधियाँ एवं प्रवृत्तियों का चित्रण समकालिन हिंदी साहित्य में भी किसी–न–किसी रूप में अवश्य पाया जाता है। आधुनिक हिंदी साहित्य जन–जीवन की समस्याओं से सीधा जुड़ा है। इसमें मात्र भक्ति व रोमांस न होकर जनता की प्रतिदिन की समस्याएँ अभिव्यक्त हुई है।

वर्तमान समय में नाटक को साहित्य की सबसे सशक्त विधा माना जा रहा है। नाटक श्रव्य व दृश्य होने के कारण अधिक प्रभावोत्पादक होता है। इससे पाठकों और दर्शकों का मनोरंजन भी होता है और प्रेरणा भी मिलती है। समकालीन नाटक जीवन की पुनर्रचना करता है जिससे जीवन के विविध पक्षों एवं समस्याओं के साथ सामाजिक, दार्शनिक, मानवीय अस्तित्व की वास्तविकता निहित है। नाटक जीवन का दर्पण है,उसमें जीवन–निर्वाह के मूलभूत तथ्यों का समाहार मिलता है।

स्वतंत्रता पूर्व का हिंदी साहित्य राष्ट्रीय जागरण की भावना को लिए हुए हैं, पर इसके बाद का अधिकांश साहित्य मध्यवर्गीय तथा निम्न मध्यवर्गीय जीवन की समस्याओं पर केंद्रित है। मध्यवर्गीय तथा निम्न मध्यवर्गीय जीवन स्वतंत्रता पूर्व के साहित्य में अभिव्यक्त हुआ है, परंतु स्वातंत्र्योत्तर हिंदी साहित्य में वह उसके केंद्र में आ गया है। साहित्य की अन्य विधाओं की तरह आधुनिक हिंदी नाट्य–साहित्य में भी मध्यवर्गीय पारिवारिक जीवन की झलक स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है।

स्वतंत्रता के बाद का हिंदी परिवेश पूर्णतः परिवर्तित व प्रयोगशील परिवेश रहा है। प्रयोग की परीक्षा लेने के लिए परिवर्तित समाज की आवश्यकता है। सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया ही साहित्य के विविध रूपों में और विचार धाराओं को हमारे सामने लाती है और इसी से साहित्य की प्रासंगिकता निर्मित होती है। मनुष्य अपने समय की सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक प्रवृत्तियों से बहुत कुछ बंधा होता है। इन बंधनों को तोड़ने के लिए ही प्रयोग आवश्यक है। इन प्रयोगों के लक्षण हिंदी साहित्य की हर विधा में हमें देखने को मिलते हैं। नाटकों में यह प्रवृत्ति ज्यादा मिलती है।

स्वतंत्रता के बाद समाज में अत्यधिक परिवर्तन आया है। यह काल देश के आर्थिक नव निर्माण के समान ही नये जीवन के निर्माण का काल भी है। इस युग को परिवर्तन का युग भी कहा जा सकता है। जीवन के प्रति दृष्टिकोण, सामाजिक तथा व्यक्तिगत मर्यादा, नैतिकता, आदर्श जीवन के प्रतिमान आदि सभी में आधारभूत परिवर्तन उपस्थित हो रहे हैं।

जिनसे हमारे जीवन के समक्ष अनेक स्वस्थ, अस्वस्थ संभावनायें उपस्थित हो गई है। इन सबके बीच भारतीय जन जीवन अपने विकास की नई दिशा पाने का प्रयास कर रहा है। शिक्षा, पाश्चात्य प्रभाव, सिनेमा आदि ने हमारे जन जीवन को अधिक प्रभावित किया है।

समाज के सामने जो चुनौतियाँ है उनको हल करने में स्वातंत्र्योत्तर नाटक प्रतिबद्ध है। स्वतंत्रता से लेकर वर्तमान तक हिंदी नाटक अनेक पहलुओं से गुजर कर गतिमान है। जनसंबंधी हर कथ्य पर हिंदी नाटक अपनी व्याख्या करने में सक्षम हुआ है। धर्मवीर भारती का नाटक 'अंधायुग' में युद्ध को महाविनाश का कारण बताया गया है। युद्ध में नैतिकता, मूल्य, आदर्श, विकास, प्रेम, स्वाहा हो जाते है

और युद्ध द्वारा उत्पन्न विभीषिका का फल आम जनता और आनेवाली पीढ़िया भोगती हैं। इस नाटक के कथ्य में वर्तमान के साथ भविष्य की संभावनाएँ अभिव्यक्त हो जाती है।

देश में राजनैतिक स्वातंत्र्य चेतना के साथ नारी जागरण तथा नारी उत्थान की चेतना भी प्रबल प्रवृत्ति के रूप में उदित हुई है। अतः नाटकों में नारी पात्रों का भी विविध भूमिकाओं में चित्रण किया गया है। नारी को वर्षों से अपमानित तिरस्कृत किया जाता रहा है। पंचोली जी ने नारी स्वतंत्रता, संयुक्त परिवार, प्रेम विवाह का स्वरूप, अन्तर्द्वंद्व, कुंठा, नैतिकता के प्रति परिवर्तित दृष्टिकोण आदि का यथार्थपरक चित्रण अपने नाटकों में किया है।

डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली ने स्वयं एक नई राह पर चलकर हिंदी नाटक के सम्मुख एक नया मार्ग प्रशस्त किया। डॉ.पंचोली के नाटक हिंदी नाट्य लेखन को एक नयी संवेदना एवं युगबोध से परिचित कराते हैं। सामाजिक, ऐतिहासिक एवं आधुनिक सभी समस्याओं को इन्होंने अपने लेखन का आधार बनाया है। आधुनिक हिंदी नाट्य क्षेत्र में पंचोली जी ने एक क्रांतिकारी परिवर्तन उपस्थित किया है। इन्होंने नाटक के भीतर रहकर ही नये दिशा संकेत दिये हैं। पंचोली जी ने न केवल आधुनिक युग को व्यंजित किया, बल्कि नाट्य शिल्प की दृष्टि से भी इन्होंने हिंदी नाटक को नए आयाम दिए हैं।

डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली भारतीय संस्कृति और साहित्यिक परम्परा के गंभीर अध्येता एवं पारखी है। उनके साहित्य में राष्ट्रीय गौरव एवं सांस्कृतिक महिमा का गाायन मिलता है। उनके नाटकों में ऐतिहासिक चेतना का विस्तार प्राप्त होता है। राष्ट्र की एकता और अखंडता की स्थापना का प्रयत्न ध्रुवश्री, उत्सर्ग, नींव के स्वर, लहर–लहर मधुपर्क आदि सभी नाटकों में मिलता है।

श्री पंचोली के नाटकों में भारतीय एवं पाश्चात्य दोनों ही विचारों का संगम उपलब्ध होता है। इनके नाटकों में भाव सौंदर्य के अंतर्गत मनावैज्ञानिकता का सहारा लिया गया है, जिसके कारण ही इनके समस्त पात्र तथा घटनाक्रम आदि यथार्थ प्रतीत होते हैं और इनके क्रिया कलाप सजीवता का एवं स्वाभाविकता का भी बोध कराते हैं। इन्होंने अपने नाटकों में कल्पना की स्थापना नहीं की, वरन् जैसा आज का समाज है, उसकी सीधी अभिव्यक्ति ही इन नाटकों की चरम उपलब्धि

है। पंचोली जी ने अपने नाटकों में पात्रों को आज के परिप्रेक्ष्य में चित्रित किया है। ये सभी पात्र अपने युग का प्रतिनिधित्व करने में पूर्ण समर्थ है।

श्री पंचोली के नाटक एक बद्ध दृष्टि में बाँधने वाले नाटक नहीं है। हर अन्वेशी दृष्टि से आगे यह अर्थ के नए स्तर खोलते है और बहुधा एक से अधिक संकेत देते हैं। बदलते जीवन मूल्य के साथ–साथ बेकारी, भ्रष्टाचार, गरीबी, अव्यवस्था, शोषण, अत्याचार आदि विषयों पर श्री पंचोली का नाटक 'सुनहरे सपनों के अंकुर' में वर्णन हुआ है। संघर्षशील व्यक्ति की मानसिकता से सीधा साक्षात्कार उक्त नाटक में हमें मिलता है। सामान्य जन जीवन की पीड़ाओं की अनुभूति कराने एवं आम आदमी से जुड़ने के कारण श्री पंचोली के नाटक लोक जीवन की सार्थक अभिव्यक्ति करते है।

आर्थिक स्थिति के अंतर्गत बेकारी की समस्या अपने अनेक रूपों में प्रकट हो रही है। बेकार नवयुवकों की मनोदशा का सुदर चित्रण पंचोली जी ने अपने नाटकों में किया है। आर्थिक स्थिति की शोचनीयता के कारण भ्रष्टाचार अधिक बढ़ रहा है। आर्थिक विषमता से आज समाज अत्यधिक पीड़ित है और आज अराजकता की स्थिति का सबसे बड़ा कारण यही है। इसके दो प्रमुख परिणाम साधारण जन को भोगने पड़ रहे हैं। एक है – बढ़ती महंगाई और दूसरा बेरोजगारी। बेरोजगारी ने मनुष्य को मनुष्य नहीं रहने दिया है। बेरोजगाार आदमी अपने तथा समाज के लिए बोझा मात्र बन गया है। 'दायरे' नाटक में पंचोली जी ने इसका वर्णन किया है।

आधुनिक युग में पाश्चात्य सभ्यता की चकाचौंध मनुष्य को अपनी ओर आकर्षित करती जा रही है। पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति में रंगे भारतीय का हास्य व्यंग्यात्मक चित्रण 'हम नचिकेता' नाटक में किया गया है। पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति का जादू आज लोगों के सिर चढ़ के बोलने लगा है। उनके लिए भारतीय संस्कृति नगण्य है। आज युवक–युवतियों को समाज के कठोर बंधन अभिप्रेत नहीं है। समसामयिक यथार्थ एवं आधुनिक व्यक्तित्व का जीवन मूल्य श्री पंचोली के नाटकों में देखा जा सकता है। 'हम नचिकेता' नाटक में मूल्यों के प्रति आस्था, व्यक्ति की द्वंद्वात्मकता, जीवन के प्रति नयी दृष्टिकोण का व्यापक चित्रण किया है।

इस समस्त विवेचन–विश्लेषण के आधार पर कहा जा सकता है कि नाटक मनुष्य के हृदयगत भावों की अभिव्यक्ति, उसके जीवन का यथार्थ और विस्तृत गद्यात्मक चित्रण है। नाटक मानव जीवन के सर्वाधिक निकट है। अतः जीवन के यथार्थ को शक्तिशाली, विश्वसनीय तथा प्रभावपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करने हेतु अन्य सभी साहित्यांगों में नाटक का मूर्धन्य स्थान है। साहित्य के समस्त अंगों में से मात्र नाटक में ही कला एवं साहित्य के सभी रूपों का समन्वय होता है। नाटक में जीवन के हर क्षेत्र की अभिव्यक्ति होती है। यह एक सक्रिय और गतिशील साहित्यिक अभिव्यक्ति की ऐसी विधा है जो केवल साहित्य नहीं उससे अधिक कुछ और भी है। नाटक मूलतः सामाजिक स्थितियों की भी अनुकृति है। नाटक दृश्य विधा है इसीलिए उसकी सार्थकता उसके रंगमंच पर अभिनीत होने में ही है।

हिंदी नाटक व रंगमंच की विकासात्मक प्रक्रिया प्राचीन काल से अबाध गति से निरंतर विकासशील रही है। भारतीय नाट्य परंपरा का प्रारंभ संस्कृत नाट्य परंपरा द्वारा होता है जो अत्यंत प्राचीन और बहुआयामी है। संस्कृत नाट्य परंपरा को समृद्ध बनाने का श्रेय भरतमुनि, भास, शुद्रक, कालिदास, अश्वघोष, हर्ष, भवभूति आदि नाटककारों को ही जाता है, जिन्होंने पात्रों को मानवीय धरातल पर उदारता के साथ उतारने का प्रयत्न किया है। वर्तमान हिंदी नाटक केवल संस्कृत नाट्य परंपरा से ही विकसित नहीं हुआ है बल्कि उस पर अंग्रेजी और बंगला के माध्यम से पश्चिमी नाटकों का भी प्रचुर प्रभाव पड़ा है। नाटक की संपूर्णता उसके रंगमंच में ही होती है इसलिए नाटक को दृश्य काव्य कहा जाता है। डॉ.पंचोली का रंगमंच पर पूर्णतः अधिकार है। वे रंगमंच क्षमता से पूर्णतः परिचित है। उनके अधिकतर नाटकों का रंगमंच पर प्रस्तुतीकरण हुआ है।

नाटक और रंगमंच की परस्पर निर्भरता तो नाट्य रचना के जन्म के साथ ही परिलक्षित होती है। नाटककार जो कुछ भी रचता है वह निर्देशक, अभिनयकर्त्ताओं द्वारा रंगमंच पर प्रस्तुत होकर प्रेक्षकों की आशंसा का कारण बनता है। नाटककार के हाथों से जब नाट्यकृति निर्देशक के हाथों में पहुँचती है तब वह अपने भीतर संपूर्ण नाट्यकला को समाहित किए रहती है। नाटक के सफल प्रस्तुतीकरण में दृश्य योजना, अभिनय, ध्वनिप्रभाव, संगीत, निर्देशक और दर्शक की आवश्यकता होती है।

भाषा शैली की दृष्टि से पंचोली जी का महत्त्व माननीय साहित्यकारों के रूप में किया जाता है। सामाजिक नाटक 'दायरे', 'सुखी परिवार', 'हम नचिकेता' में यर्थाथवादी भाषा का प्रयोग किया गया है। 'ध्रुवश्री', 'नींव के स्वर', 'उत्सर्ग' आदि नाटक ऐतिहासिक परिवेश में लिखे गए ऐतिहासिक नाटक है। इन नाटकों में सांस्कृतिक आलंकारिता परिलक्षित होती है।

जहाँ तक पंचोली जी की नाटकीय शैली का प्रश्न है, वह भी अत्यंत सशक्त एवं प्रभावी है। संभवतः उनके नाटकों में कोई भी संवाद ऐसा नहीं है जिसमें नाटकीय शैली का प्रयोग न हुआ हो। नाटकीय शैली के साथ ही यत्र–तत्र व्यंग्यात्मक शैली के दर्शन भी उनके नाटकों में होते है। पंचोली जी की शैली की एक अन्यतम विशेषता है उसकी यथार्थवादिता। इन्होंने अपने सभी नाटकों में यथार्थवादी नाट्य–रचना पद्धति को अपनाया है। समग्रतः नाटककार पंचोली जी की नाटकीय भाषा–शैली अत्यंत सशक्त, प्रौढ़, उत्कृष्ठ एवं प्रवाहपूर्ण है, कहीं संस्कृत निष्ठता है तो कहीं सरलता और रोचकता के साथ मार्मिकता भी है।

पंचोली जी के संपूर्ण नाट्य साहित्य पर दृष्टिपात करने के पश्चात यह बात निर्विवाद रूप से कही जा सकती है कि इनके नाटकों की कथावस्तु में सामाजिक स्वरूप की विशेष विवेचना की गयी है। 'ध्रुवश्री', 'सुनहरे सपनों के अंकुर', 'उत्सर्ग', 'अमृत धुले हाथ', 'लहर–लहर मधुपर्क', में यद्यपि ऐतिहासिकता और आधुनिक बोध की प्रधानता है। किंतु 'दायरे' में तो एक सामाजिक यथार्थ का ही चित्रण है। इस नाटक में समाज में विद्यमान कुरुपताओं, विसंगतियों का यथार्थ चित्र–चित्रित किया गया है। इसके साथ ही आधुनिक युग में व्यक्तिगत चेतना के पूर्ण विकास के कारण ही हो रहे पारिवारिक विघटन की सुंदर झांकिया भी इनके नाटकों में प्रस्तुत की गई है। 'सुखी परिवार' नाटक की कथा वस्तु पारिवारिक एकता पर आधारित है जो इसका ज्वलंत उदाहरण है।

संक्षेपतः कहा जा सकता है कि समकालीन नाट्य साहित्य को समृद्ध विकसित व सुदृढ़ भूमिका प्रदान कराने में डॉ.पंचोली का योगदान अक्षुण्ण है। श्री पंचोली ने तत्कालीन समस्याओं का समाधान करने तथा अपने नाटकों के

माध्यम से लोकचेतना को जाग्रत करने के प्रयास हेतु अनेक नवीन प्रयोग किए हैं। समकालीन नाट्य–साहित्य को सर्वांगीण रूप से विकसित करने का स्तुत्य प्रयास किया।

साक्षात्कार

–: साक्षात्कार :–

(प्रख्यात साहित्यकार डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली से साहित्य में जीवन मूल्यों की उपादेयता, लोक जीवन का चित्रण, मातृभाषा का महत्त्व, शोध की आवश्यकता, लेखन में भविष्य की संभावनाओं व सृजनात्मक लेखन प्रक्रिया जैसे प्रश्नों के साथ लालसिंह पुरोहित'शोधार्थी' द्वारा लिया गया साक्षात्कार।)

प्रश्न :– आपने वेद के प्रचार – प्रसार में अपना जीवन समर्पित किया है। क्या लोग वेदों की और लौट रहे हैं ?

उत्तर :– विश्व का भविष्य वेद पर निर्भर है। प्रत्येक विवेकशील व्यक्ति वेद के लिए कार्य करें।

प्रश्न :– वर्तमान युग में व्यक्ति के मातृभाषा के संस्कार गायब होते जा रहे हैं, इन संस्कारों की स्थापना के बारे में आप क्या सोचतें हैं ?

उत्तर :– हिंदी के राष्ट्रीय स्वरूप को जीवन से जोड़ने और शब्दों के तर्क संगत अर्थ समझने का व्यापक अभियान चले तो संस्कारों की स्थापना हो जायेगी। घर पर हम मातृभाषा का ही प्रयोग करें।

प्रश्न :– आपकी पहली रचना क्या थी ? वह कब लिखी गई और उसे किसने किस पत्र–पत्रिका में प्रकाशित किया उसके छपने पर जो प्रतिक्रियाएँ मिली और उस समय आपको कैसा लगा ?

उत्तर :– मेरी प्रथम रचना कविता थी। वह 1953 में लिखी गई और वह हर्बट कॉलेज, कोटा की मैगजीन में 'उषा' शीर्षक से छपी थी। इसने प्रथम स्थान प्राप्त किया और पुरस्कृत हुई। अध्यापकों एवं साथियों ने प्रशंसा की तो उत्साह बढ़ा।

प्रश्न :– एक लेखक के रूप में सबसे ज्यादा संतोष आपको किस पुस्तक ने दिया और सबसे ज्यादा पाठक किस कृति को मिले ?

उत्तर :–सभी कृतियाँ अलग–अलग दृष्टि से महत्त्व की है। सब संतान एक जैसा आनंद देती हैं, वैसे ही सभी कृतियों ने समान रूप से आनंदित किया। जहाँ तक सबसे ज्यादा पाठक की बात है तो वह कृति 'ध्रुवश्री' नाटक है।

प्रश्न :– आपको विश्व–साहित्य, हिंदी साहित्य तथा अन्य भारतीय भाषाओं में कौन–सा कवि, लेखक पसंद है और जिनसे आप प्रभावित भी हुए।

उत्तर :–मैं कालिदास, भवभूति, तुलसीदास, सूरदास से प्रभावित हुआ। मुझे ये पसंद भी है।

प्रश्न :– हिंदी रंगमंच के विकास और उसकी भावी संभावनाओं के विषय में आप क्या सोचते हैं ? उसका भविष्य कैसा है ?

उत्तर :– आधुनिक साधनों ने रंगमंच को समृद्ध किया है। भविष्य बनाना होगा।

प्रश्न :– साहित्य के अतिरिक्त आपकी रुचि किन कार्यों तथा क्षेत्रों में है ?

उत्तर :– शिक्षण, प्रशिक्षण और शोध कार्यों में।

प्रश्न :– 'लेखन में भविष्य' की संभावनाओं पर आपकी क्या राय है ?

उत्तर :– यूँ तो लेखन आनंद के लिए ही किया जाता है। ईमानदारी से निरंतर लेखन किया जाए तो आनंद और समाज स्वीकृति भी मिलती है। अंतिम साँस तक कलम चले।

प्रश्न :– आपने नाटक, कहानियाँ, काव्य रचनाएँ की है, परंतु उपन्यास लेखन नहीं किया, ऐसा क्यों ?

उत्तर :– द्रुत अध्ययन में विश्वास रहा। उपन्यास बड़ी कृति है।

प्रश्न :– नाटकों के नामकरण के पीछे क्या उद्देश्य रहा है ?

उत्तर :– मानवीय प्रवृत्तियों का दर्शन।

प्रश्न :– जयशंकर प्रसाद ने नाटक के बारे में कहा है कि रंगमंच के लिए नाटक नहीं, नाटक के लिए रंगमंच होता है। आपका इस संबंध में क्या मत है ?

उत्तर :–प्रसाद जी ने सही कहा है। उनका नाटक 'चंद्रगुप्त' कालिदास अकादमी, उज्जजिनी में सफलता पूर्वक खेला गया। नाटक के लिए रंगमंच का निमार्ण हुआ।

प्रश्न :– आपका कौनसा नाटक रंगमंच पर सर्वाधिक अभिनीत हुआ ?

उत्तर :– ध्रुवश्री।

प्रश्न :– आपने निबंध और नाटक ही अधिक लिखे है, आप निबंध से नाटक की ओर प्रवृत्त हुए या नाटक से निबंध की ओर ?

उत्तर :–गद्य की कसौटी निबंध होता है – चुनौती भरा लेखन। नाटक लेखन के अन्य कारण है।

प्रश्न :– वर्तमान युग में लोगों के जीवन में मूल्यों की गिरावट दर्ज की जा रही है, आप क्या कारण मानते हैं ?

उत्तर :– संक्रमण काल है। पुरानी व्यवस्थाएँ छूट रही हैं। नयी अपनाई जा रही हैं। जीवन मूल्य छूटता नजर आ रहा है। "पुरानी नींव, नया निर्माण" करना होगा।

प्रश्न :– वर्तमान युग में लोगों के जीवन में मूल्यों की गिरावट दर्ज की जा रही है, आप क्या कारण मानते हैं ?

उत्तर :– संक्रमण काल है। पुरानी व्यवस्थाएँ छूट रही हैं। नयी अपनाई जा रही हैं। जीवन मूल्य छूटता नजर आ रहा है। "पुरानी नींव, नया निर्माण" करना होगा।

प्रश्न :– एक तरफ आपका इस तरह का आस्थावादी एवं जीवन–मूल्यपरक लेखन और दूसरी तरफ राजनीतिक भ्रष्टाचार का वातावरण इन दोनों में कैसे सामंजस्य स्थापित होगा ?

उत्तर :– राजनीति में भ्रष्टाचार के वातावरण से लेखक को क्या लेना देना ! लेखक तो कंकड़ से चावल चुनकर भाव पकाता (साहित्य सृजन) है। विभिन्न कहानियों से फूलों का पराग इकट्ठा कर साहित्य (मधु) का सृजन करता है। लेखक मकड़ा नहीं हो सकता। वह अपने अंदर से जाला नहीं बुन सकता। साहित्यकार को मधुमक्खी की भूमिका में रहना चाहिए।

प्रश्न :– जीवन–मूल्यों के बारे में आपकी क्या राय है, ये व्यक्ति–व्यक्ति के जीवन में कैसे स्थापित हो सकते हैं ?

उत्तर :– जीवन मूल्य व्यक्ति के जीवन में ही स्थापित होते हैं। शिक्षा के पाठ्यक्रमों, किस्से–कहानियों, रस्म–रिवाजों, तीज त्योहारों, सोलह संस्कारों के माध्यम से जीवन मूल्यों की स्थापना होती है। परंतु सबसे अच्छा तरीका लोगों का व्यवहार है। बड़ों को देखकर छोटे सीखते हैं।

प्रश्न :– आपकी नजर में शोधकर्ता का क्या महत्त्व है ?

उत्तर :– मूल कृति का वैचारिक भाव विस्तार ही शोध है।

प्रश्न :– जीवन–मूल्यों के संदर्भ में साहित्य की क्या भूमिका हैं ?

उत्तर :– साहित्य की बहुत बड़ी भूमिका है। वेद द्वारा पारिवारिक, सामाजिक और शासकीय जीवन मूल्यों की स्थापना आज तक हो रही है। आधुनिक अधिकांश साहित्यकार भी यही कार्य कर रहे हैं। "साहित्यकार विधायक होता है" अर्थात अपनी रचना के माध्यम से वह व्यक्ति, परिवार और समाज के संचालन का विधान बनाता है।

प्रतिक्रियाएँ

डॉ.बद्रीप्रसाद पंचोली के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर सुधी पाठकों एवं विद्वत जनों की प्रतिक्रियाएँ।

1. पंचोली जी के सृजन संसार के संबंध में मैं क्या कहूँ वह इतना विपुल तथा गहन है कि उस पर समग्र रूप से तथा गंभीरता से विद्वज्जन विचार करेंगे मैं तो उनके लेखन के विविध पक्ष देखकर विस्मित हो जाती हूँ। वेदों की ऋचाओं की व्याख्या करते हुए अपने वेदाध्ययन को जनसामान्य तक पहुँचाने का गुरुतर कार्य भी किया है।पंचोली जी का कृतित्व जितना विविध है उनका व्यक्तित्व भी वैसा ही विविध है। उनसे मिलने पर आप उनकी विनम्रता, सज्जनता, सरलता तथा सहृदयता से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकते। डॉ. पंचोली 'विद्या विनयेन शोभते' तथा 'विद्या ददाति विनयं' की साकार मूर्ति है। वे एक राष्ट्र की चिंता करने वाले एक प्रखर विचारक है, उनका प्रबोध असाधारण है, समाज के प्रति उत्तरदायित्व का बोध उनके व्यक्तित्व का अभिन्न अंग है।

क्रांति कनाटे

संपादिका 'साहित्य परिक्रमा' त्रैमासिक पत्रिका

2 पंचोली के व्यक्तित्व को शब्दों में बाँधना संभव नहीं है। उनका मन वृंदावन है। वो वृंदावन जिसमें तुलसी का पौधा हमेशा खिला रहता है, ऐसा उनका बैजोड़, हँसमुख चेहरा हमेशा चमकता रहता है। जैसे सूर्यमंडल की आभा दीप्तमान होती है, सारे जगत् को प्रकाशित करती है, वैसे ही उनके मुखमंडल की ज्ञान राशि सारे शिष्यों को ज्ञान मार्ग का रास्ता बताती है। उनके व्यक्तित्व में वो चुंबकीय आकर्षण शक्ति है, जो मिलने वाले को अपना बना लेती है। जैसे उद्यान में भाँति–भाँति के पुष्प खिले रहते है, उसी प्रकार से पंचोली जी का कृतित्व साहित्यिक उद्यान में विभिन्न विधाओं के साथ खिला है।

डॉ. (श्रीमती) अनीता गुप्ता

प्राध्यापक – हिंदी

सेठ मंगलचंद चौधरी राजकीय महाविद्यालय, आबूरोड़ (सिरोही)

3. डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली जी का व्यक्तित्व जितना बहुआयामी, सहज, सरल और शांत है, कृतित्व उतना ही व्यापक और विशाल। उनका एक पृष्ठ रोज लिखने का नियम है जो 1953 से आज तक अनवरत रूप से चला आ रहा है। सबसे खास बात उनके लेखन की जो उन्हें एक साहित्यिक पुरुष घोषित करती है, वह है उनका अव्यवसायिक लेखन क्रम। वे पैसे के लिए नहीं लिखते हैं। वे लिखते हैं मन की सहज प्रवृतियों से आवृत्त होकर परिवार, समाज और देश के लिए। उनके लेखन में जहाँ एक तरफ राष्ट्र निमार्ण की अनुगूँज व्याप्त है, वहीं दूसरी तरफ वर्तमान समस्याओं का हल भारतीय लोक परंपरा और परिवार व्यवस्था में ढूंढने की जिद्द और कोशिश। वेद आधारित जीवन दृष्टि को लेकर चलने वाले पंचोली जी हिंदी की गद्य और पद्य दोनों विधाओं में अपनी कलम चलाने के लिए सिद्धहस्त है, परंतु उन्हें ख्याति मिली है अपने सांस्कृतिक चेतना सम्पन्न नाटकों, वेद–लोक चेतना से संपृक्त निबंधों और शब्द चिंतन के मौलिक लेखन से। कविता, कहानी, निबंध, नाटक और एकांकी पर अपनी लेखनी चलाने वाले पंचोली जी भारतीय संस्कृति और परंपरा के प्रखर समर्थक हैं। पंचोली जी का लेखन मौलिक और चिंतनपरक होने से विद्वत हिंदी संसार के लिए पठनीय और मील का पत्थर माना जाता है। शब्द चिंतन और लोक तत्त्व पर पंचोली जी का विशेष अधिकार है। सरलता, सादगी, विद्वता पंचोली जी की निशानी है तो कथनी और करनी में अभेदता उनकी खास पहचान।

अखिलेश कुमार शर्मा (सह–संपादक)
डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली अभिनंदन ग्रंथ

चित्र झलकियाँ – 1

व्यक्तव्य देते आदरणीय पंचोली जी

चित्र झलकियाँ – 2

अखिल भारतीय साहित्य परिषद राजस्थान
राष्ट्रीय संगोष्ठी एवं कवयित्री सम्मेलन
रविवार, 24 फरवरी 2013

अखिल भारतीय साहित्य परिषद्
संगोष्ठी

राष्ट्रीय वेद सम्मेलन
वेदमूर्ति डॉ. फतहसिंह जन्मशती समारोह

सिन्धुपति महाराजा दाहरसेन समारोह समिति अजमेर

आधार ग्रंथ

आधार ग्रंथ

1. **सूत्रधार** – डॉ़ बद्रीप्रसाद पंचोली, अर्चना प्रकाशन, अजमेर, 1970

2. **लहर लहर मधुपर्क** – डॉ़ बद्रीप्रसाद पंचोली, अर्चना प्रकाशन, अजमेर, 1970

3. **हम नचिकेता** – डॉ़ बद्रीप्रसाद पंचोली, अर्चना प्रकाशन, अजमेर, 1983

4. **अमृत धुले हाथ** – डॉ़ बद्रीप्रसाद पंचोली, अर्चना प्रकाशन, अजमेर, 1983

5. **ध्रुव श्री** – डॉ़ बद्रीप्रसाद पंचोली, अर्चना प्रकाशन, अजमेर, 1984

6. **सुनहरे सपनों के अंकुर** – डॉ़ बद्रीप्रसाद पंचोली, अर्चना प्रकाशन, अजमेर, 1985

7. **उत्सर्ग** – डॉ़ बद्रीप्रसाद पंचोली, अर्चना प्रकाशन, अजमेर, 1985

8. **सुखी परिवार** – डॉ़ बद्रीप्रसाद पंचोली, अर्चना प्रकाशन, अजमेर, 1986

9. **दायरे** – डॉ़ बद्रीप्रसाद पंचोली, अर्चना प्रकाशन, अजमेर, 1987

10. **नींव के स्वर** – डॉ़ बद्रीप्रसाद पंचोली, अर्चना प्रकाशन, अजमेर, 1991

संदर्भ ग्रंथ सूची

संदर्भ ग्रंथ सूची

- अनुपमा शर्मा – मोहन राकेश के नाटकों में मिथक और यथार्थ
- अर्चना त्यागी – नाट्य साहित्य में लोकतत्व, निर्माण प्रकाशन, दिल्ली
- अरुंधति राय – आहत देश, राजकमल प्रकाशन, दिल्
- अशोकलाल – एक मामूली आदमी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
- अभिनव गुप्त – अभिनव भारती, गायकवाड़ ओरियंटल सीरीज, बड़ौदा
- डॉ. इन्द्रनाथ मदान – आधुनिकता और हिंदी साहित्य
- उपेन्द्र नारायण सिंह – आधुनिक हिंदी नाटकों पर आंग्ल नाटकों का प्रभाव, हिंदी साहित्य संसार, पटना
- डॉ. उमाशंकर सिंह – हिंदी के समस्या नाटक, ऊर्जा प्रकाशन, इलाहबाद
- डॉ.ओमप्रकाश सारस्वत – बदलते मूल्य और आधुनिक हिंदी नाटक, मंथन पब्लिकेशन, रोहतक
- डॉ. कमलाप्रसाद – मध्यकालीन रचना और मूल्य, वाणी प्रकाशन, दिल्ली
- कमलेश्वर – मेरा हमदम मेरा दोस्त
- करुणापति त्रिपाठी – प्रसाद का साहित्य, प्रसाद परिषद, वाराणसी।

- कालीका प्रसाद – वृहद हिंदी कोश, ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी
- डॉ. कुमार विमल – कला विवेचन
- क्रांति कनाटे – भारतीय नाट्य रंग, अखिल भारतीय साहित्य परिषद, दिल्ली
- गणपति चंद्र गुप्त – हिंदी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास, भारतेंदु भवन, चंडीगढ़
- डॉ. गिरिजा सिंह – हिंदी नाटकों की शिल्प विधि, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद
- गिरिश रस्तोगी – हिंदी नाटक सिद्धांत और विवेचन, ग्रंथम्, कानपुर
- गिरीष रस्तोगी – मोहन राकेश और उनके काव्य
- गिरीष रस्तोगी – मोहन राकेश और आषाढ़ का एक दिन, अभिव्यक्ति प्रकाशन, अहमदाबाद
- गुरुप्रसाद कपूर – हिंदी नाटक की रूपरेखा, हिंदी साहित्य संसार, दिल्ली
- डॉ. गोविंद चातक – आधुनिक नाटक का मसीहाःमोहन राकेश आत्माराम एंड संस, दिल्ली।
- डॉ. गोविंद चातक – प्रसाद के नाटक सर्जनात्मक धरातल और भाषिक चेतना, आत्माराम एंड संस, दिल्ली।
- जगदीशचंद्र जोशी – प्रसाद के नाटकों का ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन, उपमा प्रकाशन, जयपुर।

- जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव – प्रसाद के नाटक रचना और प्रक्रिया , साहित्य भवन लिमिटेड, इलाहाबाद
- डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा – प्रसाद के नाटकों का शास्त्रीय अध्ययन, सरस्वती मंदिर, बनारस
- जयनाथ नलीन – हिंदी नाटककार, आत्माराम एंड संस, दिल्ली
- जयशंकर प्रसाद – चंद्रगुप्त, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
- जयशंकर प्रसाद – ध्रुवस्वामिनी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
- ज्ञानराज काशीनाथ गायकवाड़ – आधुनिक हिंदी नाटकों में संघर्ष तत्त्व, पुस्तक संस्थान, कानपुर
- दशरथ ओझा – हिंदी नाटक उद्‌भव और विकास, राजपाल एंड संस, दिल्ली
- डॉ. देवराज – भारतीय संस्कृति, प्रकाशन विभाग, सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश।
- द्वारिकाप्रसाद सक्सेना – प्रसाद दर्शन, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
- डॉ. धर्मवीर भारती – अन्धा युग
- डॉ. नगेन्द्र – आधुनिक हिंदी नाटक, साहित्य रत्न भंडार, आगरा।
- डॉ. नगेन्द्र – हिंदी साहित्य का इतिहास, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली।
- डॉ.नगेन्द्र – हिंदी साहित्य का इतिहास, मयूर पेपर बैक्स, ए–95,सेक्टर–5,नौएडा।
- डॉ. नगेन्द्र – रस सिद्धांत

- नामवर सिंह – इतिहास और आलोचना, नया साहित्य, इलाहाबाद।
- डॉ. निर्मला हेमंत – आधुनिक हिंदी नाटककारों के नाट्य सिद्वांत, अक्षर प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली।
- परमजीत पाहवा – सौन्दर्य शास्त्र : विविध आयाम
- डॉ. पुष्पा बंसल – मोहन राकेश का नाट्य साहित्य
- डॉ. बच्चन सिंह – हिंदी नाटक, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
- बलदेव उपाध्याय – संस्कृत साहित्य का इतिहास, शारदा निकेतन, वाराणसी।
- बलदेव उपाध्याय – भारतीय काव्य शास्त्र (प्रथम खंड)
- बनवारीलाल हांडा – प्रसाद का नाट्य शिल्प, हिंदी साहित्य संसार, दिल्ली।
- डॉ. भगीरथ मिश्रा – साहित्य साधना और समाज, अवध पब्लिशिंग हाउस, लखनऊ।
- भरतमुनि – नाट्यशास्त्र, संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय।
- भरतमुनि – नाट्यशास्त्र, संपादक – शिवदत्त तथा काशीनाथ पांडुरंग, निर्णय सागर मुद्रणालय, मुंबई।
- भुपतकर : – हिंदी और मराठी के ऐतिहासिक नाटक तुलनात्मक विवेचन, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।

- भीष्म सहानी – कबीरा खड़ा बाजार में, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।
- डॉ. महेश्वर – हिंदी–बंगला नाटक, दि मैकमिलन कंपनी ऑफ इंडिया लिमिटेड, दिल्ली।
- डॉ. मनोहर काले – भारतीय नाट्य सौन्दर्य
- डॉ. मंजुला गुप्ता – आधुनिक संस्कृति नाटक, हरियाणा साहित्य अकादमी, चंडीगढ़
- डॉ.मैथिलीप्रसाद भारद्वाज – पाश्चात्य एवं भारतीय काव्यशास्त्र
- मोहन राकेश – अंधेरे बंद कमरे
- मोहन राकेश – लहरों के राजहंस, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली
- मृणाल पाण्डे – सम्पूर्ण नाटक, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
- यजदेव तनेजा – समसामयिक हिंदी नाटकों में चरित्र–दृष्टि
- रघुवर दयाल वार्ष्णेय – रंगमंच की भूमिका और हिंदी नाटक, इंद्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली।
- रमासेन गुप्ता – हिंदी तथा बंगला नाटकों का तुलनात्मक अध्ययन, कमल प्रकाशन, इंदौर।
- रमेश गौतम – सातवें दशक के प्रतिकात्मक नाटक, राजेश प्रकाशन, दिल्ली।
- रमेश गौतम – प्रसाद के नाटक युग साक्ष्य, सम्राट पब्लिकेशनस, दिल्ली।
- डॉ. रमेश कुमार जाधव – मोहन राकेश : व्यक्तित्व एवं कृतित्व–

- रामकुमार गुप्त – हिंदी नाटक के प्रमुख हस्ताक्षर, अमर प्रकाशन, मथुरा।
- रामचंद्र शुक्ल – हिंदी साहित्य का इतिहास, काशी नागरी प्रचारिणी सभा।
- रामचंद्र सरोज – संस्कृत नाट्य शिल्प और रंगमंच, राका प्रकाशन, 40–ए, मोतीलाल नेहरू रोड़, इलाहाबाद।
- रामजी उपाध्याय – आधुनिक संस्कृत नाटक, चौखंबा विद्या भवन, वाराणसी।
- रामचंद्र गुणचंद्र – नाट्यदर्पण, ओरियंटल इंस्टीट्यूट, बड़ौदा।
- डॉ. रामचरण महेंद्र – हिंदी एकांकी उद्भव और विकास, साहित्य प्रकाशन, दिल्ली।
- रामधारी सिंह दिनकर – संस्कृति के चार अध्याय, उदयांचल, राजेन्द्र नगर, पटना।
- डॉ. रामस्वरुप अरोड़ा – प्रेमचंदोत्तर उपन्यासों में सांस्कृतिक मूल्यों का विघटन, निर्माण प्रकाशन, दिल्ली।
- रामाश्रम रत्नेश – हिंदी नाटकों में नैतिक चेतना का विकास, विद्या विहार, कानपुर।
- डॉ.राधेश्याम वाजपेयी – हिंदी नाट्य कला तथा रेडियो नाटक, अटलांटिक पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली,पृष्ठ – 6
- डॉ. वाचस्पति गैरोला – भारतीय दर्शन, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।

- वामन शिवराम आप्टे – संस्कृत हिंदी कोश, मोतीलाल बनारसी दास पब्लिशर्स, दिल्ली।
- विजयकांत धर दुबे – हिंदी नाटक : प्राक्कथन और दिशायें, अनुभव प्रकाशन, कानपुर।
- विजय बापट – प्रसादोत्तर नाट्य साहित्य, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
- डॉ. विश्वनाथ मिश्र – हिंदी नाटक पर पाश्चात्य प्रभाव, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
- डॉ वासुदेवशरण अग्रवाल – भारतीय संस्कृति के लोकतत्त्व
- विष्णु प्रभाकर – टूटते परिवेश
- शशिकला त्रिपाठी – राजेन्द्र यादव कथ्य और दृष्टि, नीलकंठ प्रकाशन, नई दिल्ली
- डॉ. शंभुनाथ पांडेय – भारतीय जीवन और संस्कृति, केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा
- शंभुरत्न त्रिपाठी – भारतीय संस्कृति और समाज, किताबघर, आचार्य नगर, कानपुर
- डॉ. शांतिगोपाल पुरोहित – हिंदी नाटकों का विकासात्मक अध्ययन, साहित्य सदन, देहरादून
- शांति स्वरूप – हिंदी उपन्यास : महाकाव्य के स्वर, अशोक प्रकाशन, दिल्ली
- श्रीपति शर्मा – हिंदी नाटकों पर पाश्चात्य प्रभाव, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा
- डॉ. श्याम परमार – भारतीय लोक साहित्य
- डॉ. श्यामारमण पाण्डेय – कालिदास का नाट्य कल्प, अनुपम प्रकाशन, पटना

- डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन – हमारी संस्कृति, राजपाल एंड संस, दिल्ली
- डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी – कालिदास की लालित्य योजना
- डॉ. हरद्वारी लाल शर्मा – सौन्दर्य शास्त्र

(ख) पत्र–पत्रिकाएँ –

1. अनुकृति	–	त्रैमासिक	–	जयश्री शर्मा, 11 क 6, ज्योति नगर, सहकार मार्ग, जयपुर।
2. अक्सर	–	त्रैमासिक	–	हेतु भारद्वाज, त्रिवेणी नगर, जयपुर।
3. अरावली उद्घोष	–	मासिक	–	बी.पी.वर्मा पथिक, टीचर्स कॉलोनी, अम्बामाता स्कीम, उदयपुर।
4. आजकल	–	मासिक	–	सीमा ओझा, फर्हत प्रवीण, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार।
5. आलोचना	–	त्रैमासिक	–	नामवर सिंह, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली।
6. कादंबिनी	–	मासिक	–	मृणाल पांडे, नई दिल्ली।
7. तद्भव	–	अखिलेश	–	इंदिरा नगर, लखनऊ।
8. नटरंग	–		–	अशोक वाजपेयी, रश्मि वाजपेयी, विकास मार्ग, दिल्ली।
9. मधुमती	–	मासिक	–	राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर।
10.नया ज्ञानोदय	–	मासिक	–	भारतीय ज्ञानपीठ,लोदी रोड़,नई दिल्ली।
11. भाषा	–	द्वैमासिक	–	केंद्रीय हिंदी निदेशालय, नई दिल्ली।
12. रंगकर्म	–		–	उषा आठले, युवराज सिंह अजय, रायगढ़, छतीसगढ़।
13. वागर्थ	–	मासिक	–	भारतीय भाषा परिषद, कोलकाता।
14. संबोधन	–	त्रैमासिक	–	कमर मेवाड़ी, कांकरोली, राजसमंद।
15. जगमग दीपज्योति		मासिक	–	सुमति कुमार जैन,महावीर मार्ग, अलवर।

(ग) शब्द कोश –

- वामन शिवराज आप्टे – संस्कृत हिंदी कोश, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स, दिल्ली।
- धीरेंद्र वर्मा – हिंदी भारतीय कोश, भाग–1, ज्ञानमंडल प्रकाशन लि. , वाराणसी।
- डॉ. श्यामसुंदरदास – हिंदी शब्द सागर (चौथा भाग) नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।
- डॉ. नगेन्द्र – मानविकी पारिभाषिक कोश (साहित्य खंड) राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।
- डॉ. नगेन्द्र – मानविकी पारिभाषिक कोश (दर्शक खंड) राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।
- डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली – शब्दानुचिंतन, अर्चना प्रकाशन, अजमेर।
- डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली – शब्दानुशीलन, अर्चना प्रकाशन, अजमेर।
- डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली – शब्दानुसंधान, अर्चना प्रकाशन, अजमेर।
- डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली – शब्दार्थसंधान, अर्चना प्रकाशन, अजमेर।